सुन्नी रास्ता
हुसैन हिल्मी इशिक
20वां ऐडीशन

हकीकत किताबेवी इशाअत ने ः 7

सुन्नी रास्ता

हुसैन हिल्मी इशिक

20वां ऐडीशन

हकीकत किताबेवी

दारूश्शफेका कैड 53 पी. के ः 35 34083
फोनः 90.212.523 4556-532 5843 फैक्सः 90.212.523 3693
http://www.hakikatkitabevi.com

ilmelazim@gmail.com

फातिह-इस्तानबुल/तुर्की

बाब न0ः **सफह न0ः**

मआमले का निचौड़

बिस्मिल्लाहिर-रहमान निर-रहीम

सुन्नी रास्ता

दिबाचा/प्रस्तावना

अल्लाह के नाम से किताब शुरू करते हैं!अल्लाह का नाम सबसे बड़ी हिफ़ाज़त है।उसकी बरकतें सारे इकदाम से परे हैं; वो बड़ा करीम और निहायत रहम वाला है।

अल्लाह तआला दुनिया के तमाम लोगों पर रहमत रखता है फाएदेमंद चीज़ें बनाता है और उन्हें हम तक भेजता है।आखिरत में, वो उन खतरनाक मोमिनों को भी माफ़ कर देगा जिन्हें दोज़ख में जाना होगा, और उन्हें जन्नत में ले आएगा।वो अकेला सारी जानदार मखलूक को बनाने वाला है, हर लम्हा वो सारी मखलूक को मौजूद रखता है, और सबको डर और खौफ़ से बचाता है।अल्लाह तआला का भरोसा रखते हुए हम इस किताब को लिखना शुरू कर रहे हैं।

अल्लाह तआला पर हमद हो।सरकारे दो आलम मुहम्मद सल्लाहु अलैहि वसल्लम पर अमन और बरकतें हो।आपकी पाक अहल-अल बएत पर और आपके मुखलिस सहाबा पर बरकतें नाज़िल हों।इस्लामी आलिम, जिन्हें **अहले सुन्नत** कहा जाता है, उन्होंने हज़ारों कीमती किताबें लिखीं जिनमें इस्लाम के अकाईद, अहकाम और ममनुआत को सही वाज़ेह किया।उनमें से कई विदेशी जुबानों में तर्जुमा कर सारी दुनिया में बांटी गई।दूसरी तरफ़, द्रोही, तंग नज़र लोगों ने इस्लाम के फायदेमंद, करीम और चमकदार तरीकों पर हमला किया; अहले सुन्नत (रज़ी-अल्लाहु तआला अन्हुम अजमईन) के आलिमों को दाग़दार करने की कोशिश की, और इस्लाम को तबदील करने की कोशिश की और इस

तरह मुसलमानों को धोखा दिया। मुसलमानों और गैरमज़हवियों के बीच में ये लड़ाई हर सदी में होती रही है, और ये दुनिया के खातमें तक जारी रहेगी। अल्लाह तआला ने वसीयत की है के ऐसा ही होगा।

मुसलमान आलिमों (खवास) और आम आदमी (आवाम) पर मुश्तमिल है। **दूर्र-ए-यकता** तुर्की किताव में लिखा है कि, "आम आदमी वो है जो अरवी ग्रामर और अदव के उसूलों को नहीं जानते। वो फ़तवे की किताबों को समझने से कासिर है। ये उनके लिए फर्ज़ है कि इस्लामी अकीदे और इवादत से संबंधित जानकारी को सीखें। दूसरी तरफ़, ये आलिामों पर फर्ज़ है तवलीग़ और तहरीरों के ज़रिए सीखाना, पहले अकीदा और फिर इवादत के पाँच उसूलों को सीखाना जो इस्लाम की बुनियाद है। **ज़हीरा** और **तातारहानिया** किताबों में ये लिखा है कि ईमान की बुनियादों और अहले सुन्नत के अकीदें को सीखाना सबसे अहम है।" इसिलिए अज़ीम आलिम अवदुल-हकीम-ए-अरवासी रहमतुल्लाहि अलैहि, मज़हवी और सांईसी तर्जुवात के माहिर ने, अपनी वरकती हिंदगी के खात्में पर फरमाया कि, "तीस सालों तक, मैं इस्लामी ईमान ऐतीकाद (अकीदा, उसूलों) और इस्लाम की खुबसूरत अखलामी तालीमात को वाज़ेह करने की कोशिश इस्तांवुल की मस्जिदों में करता रहा।" इसलिए, हमारी सारी किताबों में, हम भी, अहले सुन्नत के एतिकाद और इस्लाम के अच्छे अखलााक़ को वाज़ेह करने की कोशिश करते है, इस वात पर ज़ोर देते हुए कि हर एक के साथ रहमदिल होना चाहिए और रियासत की फरमाबरदारी और मदद करनी चाहिए। हम कुछ वेमज़हवी लोगों

की तहरीरों को रज़ामंदी नहीं देते, जोकि मज़हब से नावाकिफ़ है और लोगें को रियासत के खिलाफ़ भड़काते है और भाइयों को आपस में भिड़ाते है। ये बताते हुए कि, **"मज़हब तलवारों के साए में है,"** आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने समझाया कि मुसलमान रियासत और उसके कानून की हिफ़ाज़त में आराम से रेह सकते है रियासत मज़बूत होती है, तो लोग ज़्यादा ख़ुशी और अमन मे रहतें हैं। ग़ैर मुस्लिम मुल्कों में रहने वाले मुसलमान ख़ुशी से रह रहे है और अपने मज़हबी फराईज़ आज़ादी के साथ निभाते है, जैसे कि यूरोप और अमेरिका में रहते है, वो रियासत और उसके कानून के खिलाफ़ बग़ावत नहीं करते जिसने उन्हें आज़ादी दी है, वो उकसाहट और इंतेशार (फितना) के औज़ार नहीं बनते। ये अहले सुन्नत आलिमों के हुकूम हैं।

तकरीबन सारे मुसलान मुल्कों में मज़हबी आधिकारी मर्दे अहले सुन्नत इस सही तरीके का बचाव और नाफ़िज़ करने की कोशिश करते हैं। अलबत्ता, कुछ जाहिल लोग, जिन्होने या तो अहले सुन्नत आलिमों के ज़रिए लिखी गई कितावों को पढ़ा नहीं या समझा नहीं, और कुछ जुबानी और तहरीरी जाहिलाना बयानात दिए, ताहम बग़ैर किसी असर के ये सब बातें मुसलमानों के मज़बूत ईमान के सामने और जो वो एक दूसरे के लिए रखते थे जम न सकीं।

मुसलमानों के दरमियान नुकसानदह अलैहदगी पसंद तहरीकों ने इल्म-ए-हाल की किताबों पर हमला किया और अहले सुन्नत के आलिमों और तसवुफ़ के आला बुज़ुर्ग (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम अजमईन) को बदनाम

करने की कोशिश की। अहले सुन्नत के आलिमों ने उनके खिलाफ़ ज़रूरी जवाब लिखे और आप रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ज़रिए कुरआन अल करीम के सच्चे मआनी की हिफ़ाज़त की जिन्हे उन्होने तबदील करने की कोशिश की थी। हम अल्लाह तआला से दुआ करते हैं कि, हमारे काबिल पढ़ने वाले, जो इस किताब का मुतालआ कर रहे हैं वो ग़ौर हिस के साथ और पाक नफ़स से इसे पढ़े और अहले सुन्नत के सही और सच्चे रास्ते पर जमें रहें ओर झूठे, इल्ज़ाम तदाश बिदअती लोगों से परे रहें। इस तरह करके वो अबदी पस्ती से बच सकते है।

इसके बाद हमारी किताब के कुछ हिस्सों में वज़ाहते [...] .Brackits में जोड़कर लिखी गई हैं। ये सारी वज़ाहतें भी अहम किताबों से ली गई हैं।

मिलादी

हिजरी	**शमूसी**	**हिजरी कमरी**
2001	**1380**	**1422**

पब्लिश्शर नोटः

अगर कोई इस किताब को इसकी असली शक्ल में छपवाना चाहे या किसी और ज़बान में तर्जुमा करके छपवाना चाहे तो उसको हमारी तरफ से इसकी इजाज़त है। जो लोग इस किताब को तर्जुमा या छपवाके आगे देंगे हम अल्लाह तआला से उनके लिए दुआ करेंगे और उनके शुक्रगुज़ार होंगे। हमारी ये गुज़ारिश है कि अगर कोई इस किताब को छपवाए वो इसके सफ़हों की क्वालिटी अच्छी रखे, बिल्कुल सही तरीके से और बग़ैर गल्ती के छपवाई जाएँ।

एक चेताचनी: ईसाई मिशनरी अपनी ईसाईयत को फ़लौने की कोशिश कर रहे हैं, यहूदी लोग भी अपनी यहूदी मत बातों को फैलाने की कोशिश में लगे हैं। हकीकत किताबेवी (बुकस्टोर) इस्तांबुल में इस्लाम फ़ैलाने की कोशिश में है। जबकि बहुत लोग इस्लाम को नुकसान पहुँाने में लगे हुए हैं। जो इंसान अक्ल रखता है जानकारी रखता है और दिल से सही रास्ते की तलब करता है तो वो यकीनन सीधी राह को पा लेगा जितनी भी राह उसे मिले वह उनमें से वो राह चुनेगा जो इन्सानियत की निजात के लिए है। और कोई भी राह इन्सानियत की निजात से बढ़कर नही हो सकती। इस्लाम किसी एक के लिए नहीं बल्कि पूरी इन्सानियत के लिए है और हमारा मकसद इन्सानियत की भलाई के लिए है।

1-मालूमात-ए-नाफ़ीया

(अहम जानकारी)

ये किताब अहमद सेफ़दत पाशा (रहमतुल्लाही तआला अलैह) के ज़रिए लिखी गई है, जिन्होने कुरआन अल-करीम के उसूलों को अपनी किताब **मजल्ला** में कानून कोड में लिखकर इस्लाम के लिए एक अज़ीम कारनामा किया। इसके अलावा, उन्होने **उस्मानी तारीख** अपनी फीन्ड में भरोसेमंद को बारह जिल्दों में और मश्हूर **किस्सास-ए-अंबीया** (अंबीया की तारीख) लिखीं। उन्होने लेफ़या में **1238** (**1823** ए. डी.) में रहलत पाई और फ़ातिह मस्जिद इस्तांबुल में उनको दफनाया गया।

इस आलम में, जोकि, सब कुछ ग़ैरमोजूद था अल्लाह तआला ने ग़ैरमोजूदगी से वजूद किया। वो इस दुनिया के खात्मे तक इंसानो से इस दुनिया को ग़नी करना चाहता है आदम (अलैहि-सलाम) को मिट्टी से बनाकर उसने दुनिया को उनके बच्चों से सजाया है। लोगों को उनके लिए दुनिया में और बाद में ज़रूरी चज़िें दिखाने के लिए, उसने उनमें से कुछ को नबी (अलैहिम-सलाम)

बनाकर इज़्ज़त बख्शी उसने उनको दूसरों लोगो से अलग रखने के लिए उन्हें ऊँचे दर्जे दिए। वो अपने अहकाम नबियों तक एक फरिश्ते **जिबाईल** के ज़रिए पहुँचाता है। और वो ये अहकाम अपनी उम्मतों तक बिल्कुल उसी तरह पहुँचााते थे जैसे जिबईल (अलैहि सलाम) उन तक पहुँचाते थे। सबसे पहले नबी आदम अलैहि सलाम और सबसे आखिरी नबी हमारे आका सरकारे दो आलम मुहम्मद मुस्तफ़ा अलैहि सलातु वस्सलाम है।

इन दोनो के बीच में बहुत सारे नबी आए। मंदरजाज़ेल हैं जिनके नाम जाने हुए हैं।

आदम, शीस, इद्रीस, नूह, हूद, सालिह, इब्राहिम, इसमाईल, इस्हाक, याकूब, यूसुफ (जौसेफ़) **अय्यूब, लूत, शुऐब, शुऐब, मूसा** (मोसस), **हारून, दाऊद** (डेविड), **सुलैमाान, यूनुस** (जोनह), **इल्यास** (एलिजह), **अलयासा, जुलकैन, ज़करिया** (ज़ैचरिह) **याहय्या** (जान), **ईसा** (जिसस), **मुहम्मद मुस्तफ़ा** (अलैहिम स-सलात वसलाम)। इनमें से पच्चीस नबियों के नाम, शीस (अलैहि-सलाम) के अलावा कुरआन अल करीम में हैं। **उज़ैर, लुकमान** और **जुल्कनैन** के नाम भी कुरआन अल करीम में हैं। कुछ अहले सुन्नत आलिमों का कहना है कि ये तीन, और तबअ और खिज़र भी नबी थे, जबकि कुछ कहते हैं कि वो औलिया थे।

मुहम्मद अलैहि सलाम हवीव-अल्लाह (अल्लाह के सबसे प्यारे) इब्राहिम अलैहि सलाम खलील-अल्लाह (अल्लााह के प्यारे) **मूसा** (अलैहि सलाम) कलीम-अल्लाह (वो जिनके साथ अल्लाह बात करते थे) **ईसा** अलैहि सलाम रूह-अल्ल्लाह (वो जिन्हें अल्लाह ने बग़ैर बाप के पैदा किया) है।**आदम** अलैहि सलाम सफ़ी अल्लाह (वो जिनकी गल्ती अल्लाह ने माफ़ करदी) है।**नूह** अलैहि सलाम नाजी अल्लाह (वो जिन्हें अल्लाह ने खतरे से बचाया) है।ये छ नबी दूसरे नबियों मे बरतर हैं।इन्हें **उलु-ए-अज़म** कहा जाता है।सबसे बरतर/अफ़ज़ल मुहम्मद (अलैहि सलाम्म) हैं।

अल्लाह तआला ने एक सौ सुहुफ़ (सहीफ़ा की जमा, किताबचा) और चार किताबें ज़मीन पर भैजीं।ये सारी जिब्राईल अलैहि सलाम लेकर आए।दस सुहुफ़ आदम अलैहि सलाम पर, पचास सुहुफ़ शीस अलैहि सलाम पर, तीस सुहुस इदरीस अलैहि सलाम और दस सुहुफ़ इब्राहिम अलैहि सलाम पर उतारे गए।[सहीफ़ा, (इस तनाज़िर में) का मतलब है 'एक छोटी किताब', 'एक किताबचा'।इसका मतलब वो नहीं जेसे की हम जानते हैं, यानी एक काग़ज़ की शीट का एक चेहरा]।चारों किताबों में से, **तावरत एश शरीफ़** [तौराह] मूसा अलैहि सलाम पर भेजी गई, **ज़बूर एश शरीफ़** [असली ज़बूर] दाऊद अलैहि सलाम पर, **इंजील एश शरीफ़** [लातेनी इंजील] ईसा अलैहि सलाम पर और **कुरआन अल करीम** आखिरी नबी, मुहम्मद अलैहि सलाम पर उतारी गई।

नूह अलैहि सलाम के ज़माने में सैलाब आया और पानी ने पूरी ज़मीन को ढक लिया।ज़मीन पर सारे लोग और जानवर डूब गए।लेकिन ईमान वाले जो उनके साथ किश्ती में थे वो बच गए।नूह अलैहि सलाम जब किश्ती में चढ़ रहे थे तो उन्होने अपने साथ हर किस्म के जानवर का एक एक जोड़ा लिया था, जिससे आज के जानवर बढ़े हैं।

नूह अलैहि सलाम के तीन बेटे भी किश्ती में सवार थे: साम (शेम), याफ़ास (जाफ़ैस) और हाम (हैम)।आज ज़मीन के लोग उनकी नसलों में से हैं।इस वजह से उन्हें दूसरा बाप कहा जाता है।

इब्राहिम अलैहि सलाम इस्माईल और इस्हाक़ अलैहिम स-सलाम के बाप हैं।इस्हाक़ अलैहि सलाम याक़ूब के बाप हैं।याक़ूब अलैहि सलाम यूसुफ़ अलैहि सलाम के बाप हैं।याक़ूब अलैहि सलाम को "इसराईल" भी कहा जाता है।इस वजह से उनके लड़को और पौतों को **"बनी इसराईल"** (इसराई ल/इसराईल के बच्चे) कहा जाता है।बनी इसराईल तादाद में बहुत बढ़ गए और उनमें से कई नबी बने।मूसा, हारून, दाऊद, सुलैमान, ज़कारिया, याहय्या और ईसा अलैहिम, स-सलाम उनमें से हैं।सुलैमान अलैहि स-सलाम दाऊद अलैहि स-सलाम के बेटे हैं।याहय्या अलैहि सलाम ज़कारिया अलैहि सलाम के बेटे, हारून अलैहि सलाम मूसा अलैहि सलाम के भाई थे।ईस्माईल अलैहिस सलाम अरबी नसल में से थे और मुहम्मद अलैहि सलाम एक अरबी थे।

हूद अलैहि सलाम को ओस कबिले में भेजा गया, सालिह अलैहि सलाम को समूद कबिले में भेजा गया, और मूसा अलैहि सलाम को बनी इस्राईल में भेजा गया। इसके अलावा हारून, दाऊद, ज़कारिया और याहया अलीहुमा अस-सलाम को बनी इस्राईल में भेजा गया था। लेकिन उनमें से कोई भी एक नया मज़हब नहीं लाए; उन्होने बनी इस्राईल को मूसा अलैहि सलाम के मज़हब में दावत दी। अगरचे ज़बूर दाऊद अलीह सलाम पर उतरी उसमें अहकामात, कानून या इबादत नहीं थीं। ये उपदेशो और सलाह से भरा हुआ था इसलिए उसने तोराह को मंसूख या रद्द नहीं किया बल्कि इस पर ज़ोर दिया, और यही वजह थी कि मूसा अलैहि सलाम का मज़हब ईसा अलैहि सलाम के वक्त तक चला। जब ईसा अलैहि सलाम आए तो, उनके मज़हब ने मूसा (अलैहि स-सलाम) के मज़हब को मंसूख कर दिया; इसलिए, तोरह बातिल हो गई इसलिए मूसा (अलैहि सलाम) के मज़हब की तक़लदि करने की इजाज़त नहीं थी। उस वक्त से ये ज़रूरी था कि मुहम्मद (अलैहि स-सलाम) की आदा तक ईसा (अलैहि सलाम) के मज़हब की तकलीद की जाए। हालांकि, बनी इस्राईल की अकसरियत ईसा (अलैहि सलाम) में अकीदा नहीं रखती थी और तौरह की तकलीद करने में कायम थी। इस तरह यहूदी और नसारा अलग हो गए। वो जो ईसा (अलैहि सलाम) को मानते थे वो **नसारा** कहलाए; जो आज के ईसाई हैं। वो जो ईसा (अलैहि सलाम) को नहीं मानते थे और बेयकीनी में और बिदअत में रहे वो **यहूदी** कहलाए। यहूदी अब भी ये दावा करते हैं कि वे मूसा (अलैहि सलाम) के मज़हब की तकदील करते हैं और तोरह और ज़बूर पढ़ते

हैं; नसारा इस बात का दावा करते हैं कि वे ईसा (अलैहि सलाम) के मज़हब को मानते हैं और इंजील पढ़ते हैं। हालांकि, हमारे आका मुहम्मद (अलैहि स-सलातो व सलाम) को दोनो आलम और सारे इंसानो और जिन्नातों के आका बनाकर भेजा, आपको आलम (बशर की दुनिया) के लिए नबी बनाकर भेजा गया, और आपके मज़हब, इस्लाम ने सारे पिछले मज़ाहिब को मंसूख कर दिया। क्योंकि ये मज़हब दुनिया के खात्में तक सही रहेगा, दुनिया के किसी भी हिस्से में इस बात की इजाज़त नहीं है के आपके मज़हब के अलावा किसी और मज़हब में रहे। किसी नबी ने आप पर सबकत नहीं ली। हम उसकी उम्मत होने के लिए, अल्लाह तआला का शुक्रिया करते हैं। हमारा मज़हब इस्लाम है।

हमारे पैगम्बर, मुहम्मद (अलैहि सलाम), पीर की सुबह **12** रबी उल अव्वल, जो **20** अप्रैल, **571** (मीलादी) से मिलती है मे हुआ, आपकी विलादत मक्का में हुई। आपने हिजरत के **11** वें साल में (632A.D) में मदीना में रहलत फरमाई। **40** साल की उमर में एक फरिश्ते जिन्हें **जिब्राईल** (अलैहि सलाम) कहा जाता है ने आपको नब्वुवत की बशारत दी। आपने **622** में मक्का से मदीना की तरफ़ हिजरत की; मदीना के नज़दीक क़ुबा गाँव में पीर **20** सितंबर के दिन आपकी आमद को मुसलमानों के लिए **हिजरी शमसी** (शमसी) कलैंण्डर का आग़ाज़ हुआ। जबकि मुहर्रम का वाही पहला साल **कमरी** (चंद्र) कैलेंण्डर

की शुरूआत है। फारसी शमसी साल इससे छ: महीने पहले शुरू हुआ, **20** मार्च को, जोकि मैजियन उत्सव का दिन है।)

हम सभी नबियो को मानते हैं। वो सारे पैंगम्बर हैं जिन्हें अल्लाह तआला ने भेजा है। फिर भी जब कुरआन अल करीम उतरा तो सारे मज़हब मंसूख कर दिए गए। इसलिए, उनमें से किसी भी तकलीद करने की इजाज़त नहीं है। ईसाई भी पिछले सब पैगम्बरो को मानते हैं, फिर भी वो इस सच को नहीं मानते कि मुहम्मद (अलैहि सलाम) इंसानो के नबी हैं, वो ईमान नहीं रखते और सच्चाई से अलग होते हैं। यहूदियों के लिए, क्योंकि वो ईसा (अलैहि सलाम) को भी नहीं मानते, इसलिए वो दुगने इस्लाम से परे हैं।

चूँकि यहूदी और ईसाई इस बात को मानते हैं कि उनकी आजकी किताबें वैसी ही हैं जैसी उन्हें आसमान से उतारा गया था, उनको **अहले किताब** (आसमानी किताबों के साथ काफ़िर) कहते हैं। उनके ज़िब्ह किए गए जानवरों को खानी की इजाज़त तो है लेकिन मकरूह है। [अगर वो ज़िब्ह करते वक्त अल्लाह तआला के नाम का ज़िकर करते हैं। और मुसलमाान लड़कियां के लिए उनके साथ शादी करने की इजाज़त नहीं है। अगर एक लड़की एक काफ़िर से शादी की इच्छा रखती है तो वो अल्लाह तआला के मज़हब को कमतर करती है। जो इस्लाम को हल्का करता है वो नामुरीद बन जाता है। इसलिए, ऐसी शादी दो काफ़िरों के बीच कही जाती है।

(मुश्रिक) और धर्मत्यागी (मुर्तद) जो किसी भी पैगम्बर या किताब में ईमान नहीं रखते वे "काफ़िर कहलाए जाते हैं बग़ैर किसी आसमानी किताब के।" **मुलहिद,** भी, उसी समूह में है। उनकी लड़कियों से शादी करना या उनके ज़रिए मारे गए जानवरों को खाने की इजाज़त नहीं है।

ईसा (अलैहि सलाम) ने अपने साथियों में से 12 को अपने बाद उनका मज़हब चलाने के लिए चुना; उनमें से हर एक हवारी [aposte, apostel]कहलाया गया। वह शमून [साएमन], पिटर, [पेटरोस], जोहन्ना [johanner], बड़े याकूब, एंडरीस [एड्रूओ, पीटर के भाई], फिलिप, थॉमस, वथॉलोम्यू [वथॉलोमास] मय्यािय [मैथ्यू], छोटा याकूब, वरनवास, यहूदा [जूदास] और थैडेईस [जकोबिल] यहूदा एक मुलहिद बन गया और मत्यास [मरियाय] ने उसकी जगह ले ली। पेटरोस मुलहिरों का सरबराह था। ये 12 मानने वाले, ईसा (अलैहि सलाम) के 33 साल की उमर में आसमान में उठाए जाने के बाद उनका मज़हब फैलाते रहे। ताहम अल्लाह तआला के ज़रिए भेजी गई मज़हब की सच्ची तालीमात सिर्फ़ 80 साल तक रही। उसके बाद पॉल ने हर जगह फिण्ड अकाईद को फैलाना शुरू कर दिया। पॉल एक यहूदी था वो ईसा (अलैहि सलाम) में यकीन नहीं रखता था। फिर भी ईसा (अलैहि सलाम) को मानने का दावा करते हुए और अपने आपको आलिम वताते हुए उसने कहा कि ईसा (अलैहि सलाम) अल्लाह के वेटे थे। उसने दूसरी और चीज़ों को दबाना शुरू किया और कहा कि शराव और सूअर हलाल था। उसने नसारा का

किवला काबा से मश्रिक की तरफ़ मोड़ दिया जहाँसे सूरज उगता है। उसने कहा अल्लाह तआला की शख्सियत (ज़ात) एक थी और उसकी सीफ़ात तीन थीं। इन सिफ़ात को उकनूम (हाइपोस्टैस) कहा जाता था। इस यहूदी पाखंडी के लफ़्ज़ बाइबिल (इंजील) की शुरूआती चार किताबों में थे, खासकर ल्यूक की किताब में, और नसारा समूहों में बंट गया। बहत्तर विरोधी फिरके और किताबें दिखाई दीं। वक्त के दौरान इन फिरकों में से ज़्यादातर भुला दिए गए और अब उनके पास सिर्फ़ तीन बड़े फिरके हैं।

[अब्दुल्लाह बिन अब्दुल्लाह अत-तर्जुमन जो मयोरका एक स्पैनिश बेलिएरिक जज़ीराहैं वहाँ एक पादरी थे, और जिन्होने टयूनीशिया में इस्लाम कुबूल करने के बाद अपना नाम बदल लिया था, वो लिखते हैं: "चार इंजिल मैथ्यू, ल्यूक, मार्क और जॉन [जोहन्ना] के ज़रिए लिखी गई। ये इंजील भ्रष्ट करने के लिए पहली किताबें थीं। मैथ्यू, एक फिलीस्तानी, जिसने ईसा (अलैहि सलाम) को उनके आसमान में उठाए जाने वाले साल में ही देखा था। आठ साल बाद उसने पहली इंजील लिखी जिसमें उसने फिलिस्तानी में गैर मामूली वाक्यात को लिखा जब ईसा (अलैहि सलाम) की पैसईश हुई और किस तरह उनकी माँहज़रत मरीयम उन्हें मिस्र में ले गई जब यहूदी बादशाह हेरोद उनके बेटे को कत्ल करना चाहता था। हज़रत मरयम अपने बेटे के आसमान पर उठाए जाने के छ: साल बाद रहलत फरमा गई और उन्हें जेरूसलम में दफनाया गया। ल्यूक जो अन्ताकिया (अन्ताक्षय) से था, उसने ईसा (अलैहि सलाम) को

कभी नहीं देखा था। उसे ईसा (अलैहि सलाम) के मज़हब में पाखंडी पॉल ने शमुलियत कराई वो भी ईसा (अलैहि सलाम) के आसमान पर उठाए जाने के काफ़ी सालों बाद। पॉल के ज़हरिले विचारों से प्रभावित होने के बाद, उसने अपनी इंजील लिखी, पूरी तरह से अल्लाह तआला की किताब (इंजील) को तबदील करते हुए। मार्क, ने भी, ईसा (अलैहि सलाम) के उठाए जाने के बाद उनका मज़हब अपना लिया और रोम में पेटरोस से जो सुना था इंजील के नाम पर उसे लिख दिया। जॉन ईसा (अलैहि सलाम) की आंटी का बेटा था। उसने ईसा (अलैहि सलाम) को कई बार देखा था। इन चारों इंजीलो में बहुत सारे बेमेल इकतेबासात थे।" **तुफातुल अल एरब फ़ी र-रज़ी अला अहलि स-सलीब** अब्दुल्लाह इबनी अब्दुल्लाह अत-तर्जुमान के ज़रिए। उन्होने ये अरबी काम **823** (**1420** ए . डी .) में लिखा, जो लंदन में **1290** (**1872** ए . डी.) में छापा गया और इस्तांबुल में **1401** (**1981** ए.डी.) में, और बाद में इसे तुर्की में तर्जुमा किया गया।)

दिया अल कुलूब और **शम्स अल-हकीका** इस्हाक़ एफ़ंदी हरफपूत के ज़रिए इन दो किताबों में, जो **1309** (**1892** ए.डी.) में फौत हो गए; हैदरी ज़ादा इब्राहिम फसिह के ज़रिए अरबी किताब **अस-सिरात अल मुस्तकीम** में जिनका इंतकाल **1299** में हुआ; नजफ़ अली तबरिज़ी के ज़रिए फारसी की किताब **मीज़ान अल-मौअज़िन** में जिसे इस्तांबुल में **1288** में छापा गया, और ईमाम ग़ज़ाली के ज़रिए अरबी की किताब अर-रद अल जमील में, जिसे बैरूत में

1959 में छापा गया, ये साबित हुआ कि बाइबिल मौजूदा कापियाँ दाखिल करदी गई हैं।आखिर की तीन किताबों की फोटोस्टेटिक कापियाँ हकीकत किताबेवी ने **1986** में पैश की थीं।)

बरनबास के ज़रिए लिखी गई इंजील, जिसे उसने जो देखा और सुना ईसा (अलैहि सलाम) से ठीक उसी तरह लिखा, **1973** में उसे पाकिस्तान में पाया गया और अंग्रेज़ी में लिखा गया।**कामूस अल अलाम** में ये लिखा है: "बरनबास सबसे पहले रसूलो में से था।वो मार्क के अंकल का बेटा था।वो एक साइप्रसी/कब्रसी था।वो ईसा (अलैहि सलाम) में यकीन रखता था, उसके बाद पॉल आगे आ गया, जिसके साथ उसने अंतोलिया और ग्रीस का सफ़र किया।उसे साइप्रस में **63** साल में शहीद कर दिया गया, उसने एक इंजील और कुछ दूसरे किताबचे लिखे थे।उसे **11** जून को ईसाईयों के ज़रिए याद किया जाता है।

ईसाईयों के मज़हबी अफ़सरों को पादरी कहा जाता है।सबसे बड़ा रूढ़िवादी पादरी पिता कुलपति है।एक मध्यवर्ती ग्रेड के पादरीपक्ष को पादरी कहा जाता है।जो बाइबिल पढ़ते हैं उन्हें क्यूसिस (गोस्प्लेरर्स) कहा जाता है।क्यूसिस के ऊपर यूएसक्यूफस (प्रोस्बिटर) होते हैं, जो मुफतियों की तरह काम करते हैं।यूएसक्यूफस ऊँचे ग्रेड के बिशप कहलाते हैं, उनके ऊपर आर्च बिशप या महानगरीय होते हैं, जो काफ़ी (जज) की तरह काम करते हैं।वो जो चर्च में रसूम इबादत कराते हैं उन्हें जासेलीक कहते हैं, उनके नीचे इलाज

करने वाले या शममा (डेकोन) होते हैं, और जो गिरजों में काम करते हैं उन्हें ईर्रामट (हीमिट्रस) कहते हैं या शामिमिसा (कोएनपीवाइट्रस) कहते हैं, जो मुआज़्ज़नों की तरह भी काम करते हैं। जो आपको इबादत में वक्फ़ करते हैं उन्हें राहिब कहा जाता है। कैथोलिक का सरबराह रोम में पॉप (बापों का बाप) होता है उसकी सलाहकार को कार्डिनल्स बुलाया जाता है।

ये सारे पिछले मज़हवी अधिकार के आदमी अल्लाह तआल की वहदानियत को भुला चुके थे। उन्होने तसलीस/trinity की खोज ली। कुछ समय बाद, रोमन बादशाह क्लॉडियस (**215-271**) के राज में, एंटाकिए के कुलपति यूनुस सममास ने अल्लाह तआला की एकता का एलान कर दिया। वो चारो तरफ़ से कई लोगों को सही राह पर ले आया फिर भी उसके बाद पादरियों ने दोबारा तसलीस/तीन देवताओं की इबादत शुरू कर दीं। कॉन्स्टेंटिन अज़ीम (**274-337**) ने ईसा (अलैहि सलाम) के मज़हब में बुतपरस्ती शुरू की। **325** में उसने **318** पादरियों को एक रूहानी परिषद में नीसा (इज़नीक) में बुलाया। और एक नया ईसाई मज़हब बनाया। इस परिषद में, एरियस नामी प्रेस्बाइटर ने कहा कि अल्लाह तआला एक है और ईसा (अलैहि सलाम) उसकी तख़लीक है। फिर भी, अलेक्जॉड्रियास, परिषद के सरबराह और उस वक्त के अलेक्जॉड्रिया के मौजूदा कुलपति ने उसे चर्च से खारिज कर दिया। कान्सटंटाईन द ग्रेट ने एलान किया कि एरियस एक काफ़िर है और उसने मलकाया (मलकाईट) फिरके के उसूलों को कायम किया; ये सच

अल-मिलाल व न-निहाल किताब और जिरीइस इब्न अल अमीद के ज़रिए लिखी गई एक तारीख की किताब में भी लिखा हुआ है जो **601-671** ए-एच (**1205-1273,** दमिश्क) में एक बीज़ान्टिन ग्रीक तारीखदान था। **381** में, एक दूसरी परिषद कांस्टँटिनोपल(इस्तांबुल) में आयोजित की गइङ थी, और मकदोनियस पर तोहिने रिसालत का इलज़ाम लगाया गया था क्योंकि उसने कहा था कि ईसा (अलैहि सलाम) रूह अल कुदस [पाक आत्मा] नहीं हैं वल्कि एक मखलूक हैं। **395** में, रोमन बादशाहत दो टुकड़ो में बंट गई। **421** मे एक तीसरी परिषद कांस्टँटिनोपल में आयोजित की गई थी, कांस्टँटिनोपल के कुलपति नेस्टोरियस की किताब की जाँच करने के लिए जिसमें उसने कहा था कि "ईसा एक आदमी हैं। उनकी इबादत नहीं हो सकती। यहाँ सिर्फ़ उनकूम मौजूद है। अल्लाह एक है। उसकी सिफ़ात की मौजूदगी, ज़िंदगी और इल्म, 'ज़िंदगी' की सिफ़ात रूह अल कुदस है; इल्म की सिफ़ात ईसा में दाखिल है और वो एक देवता बन गया। मरयम एक देवता की माँ नहीं थीं। वो एक आदमी की माँ थीं। ईसा अल्लाह का बेटा था"। उसके ये विचार मान लिए गए। नेस्टोरियस का फिरका ओरिएंटल मुल्कों में फैला। वो जो इस फिरके में थे वो नेस्टूरीस (नेस्टोरियस) कहलाए गए। **431** में, एक चौथी परिषद आयोजित की गई इफिसुस में जिसमें डायसकोरस के विचारों को मंज़ूर कर लिया गया और नेस्टोरियस (डी **439** मिस्र) पर रिसालत की तज़लील करने का इलज़ाम लगाया गया। **20** साल बाद, **734** पादरी **451** में कादिकोय में पाँचवी परिषद में इकट्ठा हुए और दयोजकोरस के विचारों की तहरीरों को

नामंज़ूर कर दिया गुा जो अलेकजॉडया का कुलपति था।दयोजकोरस के विचार जो ईसा (अलैहि सलाम) के देवता होने पर मुबनी थे, उसने मोनोफिज़िर को कायम किया जिसे याक़ूबिया फिरका भी कहते है, जो दयोज़कोरस- याक़ूब (जेकब) के असली नाम से लिया गया।उस वक्त के बीजान्टिन के बादशाह मरसिअनस ने सब तरफ नामंज़ूरी का एलान करा दिया।दयोज़कोरस भाग गया और जेरूसलाम और मिस्र में अपने ईमान की तालीमात दीं।उसके मानने वाले ईसा (अलैहि सल्मा) को मानते है।आज के सूर्यनी (सिरिआक बोलने वाले ईसाई) और ईराक, सिरिया और लेबनान में मारोनिट याक़ूबिया फिरके से हैं।इस फिरके को कादिकॉय कॉंसल में मंज़ूरी मिली और मरसिअनस बादशाह ने भी इसे मंज़ूरी दे दी इसे मलकाएया (melchite) कहते हैं।ये उसी फिरके से मिलती हुई हैं जिसे पहली दुनियावी कॉंसल नाएसिया में मंज़ूर किया गया था।उनका सरवराह एंटिओक का कुलपति था।वो इल्म और ज़िंदगी की सिफ़ात को "कालिमा" (लफ़्ज़) और "रूह अल कुदस" (पाक रूह) मानते हैं, बिल्तरतीब; जिसे **उनकूम कहते हैं,** जब वो आदमी के साथ मिल जाते हैं।उनके तीन देवता हैं; बाप, वजूद की उनकूम, उनमें से एक हैं ; जिसस बेटा है; मेरी (मरियम) देवी हैं।वो ईसा (अलैहि सलाम) को **जिसस कराईस्ट/यसू मसीह** बुलाते हैं।

बहत्तर ईसाई फिरके अरबी की किताब **इज़हार अल-हक** और तुर्की की किताब **दिया उल-कुलूब (इज़हार अल-हक 1280** (**1864** ए .डी.) में

इस्तांबुल में अरबी में छापी गई।इस किताब में रहमतुल्लाह एफ़ंदी भारत के (रहमत-अल्लाह तआला अलैहि) जिनका इंतकाल **1306** ए . एच में मक्कल में हुआ, उन्होने तफ़सील से ईसाई पादरियों के साथ **1270** में भारत में और बाद में इस्तांबुल में अपनी बातचीत के बारे में लिखा है, और बताााया है कि किस तरह उन्होने उन्है चुप कराया गया।इस बातचीत पर तबसरा/राए इस्तांबुल के फारसी की किताब **सैफ़ अल-अबरार** में तासुर जोड़ा गया, **इज़हार अल हक़** के दो हिस्से हैं; पहला हिस्सा जो नुज़हत एफ़ंदी, बुज़ारते तालीम के चीफ़ सचिव के ज़रिए तुर्की में तर्जुमा किया गया, जिसे **ईज़ाह अल हक़** के उनवान के साथ इस्तांबुल में छापा गया; दूसरा हिस्सा सय्यैद उमर फेहमी बिन हसन के ज़रिए **1292** ए.एच में तुर्की में तर्जुमा किया गया, और ब्इबराज़ अल हक़ के उनवान के साथ बोसनिया में **1293** (**1876** ए.डी.) में छापा गया।इस्हाक़ एफ़ंदी हरपुत के ज़रिए **दिया अल-कुलूब** (**1990** में इस्तांबुल में) अंग्रेज़ी में **could not answer** के उनवान के साथ तर्जुमा की गई।) में तफ़सील से वाज़ह किए गए हैं।

ये सारे फिरके 446 [**1054** ए.डी.] तक रोम के पॉप के वफ़ादार थे।उन सबको **catholic** कहा जाता था।**1054** में, माइकल सेर्यूलियस, कांस्टेंटिंपल का कुलपति, पॉप से अलग हो गया और मश्रिकी गिरजाघरों को आज़ादाना तौर पर इंतेज़ाम करने लगा।इन गिरजघरों को **orthodox** बुलाया गया।ये याक़ूबिया फिरके को मानते थे।**923** (**1517** ए.डी.) में, एक

जर्मन पादरी लूथर ने रोम के पॉप के खिलाफ़ बग़ावत कर दी और गिरजघरों की तादाद उसकी तकलीद करने लगी।उन्हें **protestants** कहा गया।]

जैसे के देखा गया, यहूदियों की तुलना में ईसाई ज़्यादा बेसर थे, और आखिरत में उन्हें शदीद सज़ा मिलेगी क्योंकि दोनो ने ही मुहम्मद (अलैहि सल्मा) से कुफ्र किया और उलूहिया (देवत्व) के मज़मून के खिलाफ़ कुसूरवार हुए; वो तसलीस त्रिमूर्ति में यकीन रखते हैं और ईसा (अलैहि सलाम) और उनकी माँ हज़रत मरियम की इबादत करते हैं और उन्हें देवता मानते हैं; वो **मैटा** मांस भी खाते हैं। (इस्लाम ये बताता है कि कौन से खाने वाले जानवर को मरना है।जब वो बताए हुए तरीके से नहीं मारा जाता तो, उसका मांस **मैटा** बन जाता है, यानी खाने के लायक नहीं।) यहूदियों के लिए, उन्होने दो नबियों को नकारा; लेकिन वो जानते हैं कि अल्लाह तआला एक है और वो मैटा मांस भी नहीं खाते।फिर भी, यहूदी इस्लाम की तरफ़ ज़्यादा दुश्मन हैं।अगरचे कुछ यहूदी मुश्रिक बन गए हैं ईसाई की तरह ये कहते हुए, "उज़ैर(एज़्र) अल्लाह काबेटा है", उन्हें अहल अल- किताब कहा जाता है।orthodox/रूढ़िवादी, कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट बाइबिल की मुखतलिफ़ तर्जुमे पढ़ते हैं और दावा करते हैं कि वो ईसा (अलैहि सलाम) के मानने वाले हैं; हालांकि, हर फिरके के अकीदे और अमल पर विरोधी उसूल हैं।वो सब नसरा, ईसाई या अहले-किताब कहलाए जाते हैं।यहूदी अपने आपको मूसा (अलैहि सलाम) के मज़हब में मानते हैं। (**1954** में, दुनिया की आबादी **2.444** अरब थी जिनमे से

322 million मुसलमान, **800** million ईसाई (**128** million रूढ़िवादी, **470** million कैथोलिक और **202** million प्रोटेस्टेंट), **11** million यहूदी, और **1.311** अरब मुश्रिक और काफ़िर थे, जो किसी आसमानी किताब या किसी नबी में यकीन नहीं रखते थे।)

जब हमारे नबी (अलैहि स-सलाम) ने अपनी मौजूदगी से हिजरा के **11**वें साल में दूसरी दुनिया में इज़्ज़त बख्शी, तो अबू बक्र अस-सिद्दीक (रज़ी-अल्लाहु अन्ह) खलीफ़ा बने; 63 साल की उमर में हिजरा के **13** साल बाद रहलत फरमा गए। उनके बाद, उमर फारूक (रज़ी अल्लाहु अनह) खलीफ़ा बने। उनको **63** साल की उमर में हिजरा के **23** वें साल में शहीद कर दिया गया। उनके बाद उसमान ज़ुन-उन-नूरएन (रज़ी अल्लाहु अन्ह) खलीफ़ा बने। उन्हें हिज़रा के **35** साल बाद **82** साल की उमर में शहीद कर दिया गया। फिर, अली (रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह) खलीफ़ा बने। उन्हें **40** ए.एच में जब आप **63** साल के थे शहीद कर दिया गया। इन चारों खलीफाओं को **अल खुलाफ़ा अर-राशिदीन** कहा जाता है। बिलकुल वैसे ही जैसे असर अस-सादा में शरीअत के कानून (अहकाम) और रास्तबाज़ी चलते थे वैसे ही उनकी खिलाफ़ात में चारों तरफ़ इंसाफ़ और आज़ादी परवान थी। शरीअत के उसूल बग़ैर किसी बुरे अमल के चलते थे। ये चारो खलीफ़ा सारे अस-सहाबत अल किराम (अलैहिमु र-रिज़वान) से सबसे ऊँचे थे और इनकी एक दूसरे पर फौकियत इनकी खिलाफत की तरतीब से थी।

अबू बक्र रज़ी अल्लाहु अन्ह के वक्त में मुसलमान बहीर-ए-अरब के बाहर तक चले जाते थे। उन्होने जज़ीरा नुमा में टूट गई उलझनो को दबा दिया और नौमुदिर के दमन के लिए संघर्ष किया। हमारे नबी सरकारे दो आलम (सल्लाहु अलैहि व सल्लम) के रहलत फरमाने के बाद, बहीर-ए-अरब में बग़ावते शुरू हो गई थीं। अबू बक्र (रज़ी अल्लाहु अन्ह) ने बाग़ियो पर काबू पा लिया और अपनी खिलाफ़त के दौरान मुर्तदिद को ठीक करने की कोशिश की और जिस तरह असर्रअर्ससादा के ज़माने में था उसी तरह मुस्लिम एकता को बरकरार रखा। उमर (रज़ी अल्लाहु अन्ह) जब खलीफ़ा बने तो उन्होने एक तकरीर करी: "ए रसूल के साथियों! रज़ी अल्लाहु तआला अन्हुम अजमइन। अरब सिर्फ़ तुम्हारे छोड़ो को जौ दे सकता है। फिर भी, अल्लाह तआला ने अपने प्यारे महबूब (नबी) से वादा किया कि वो मुहम्मद (अलैहि स-सलाम) की उम्मत को दुनिया के हर हिस्से में ज़मीन और घर देगा। कहाँ हैं वो सिपाही जो वादा किए हुए मुल्कों को फतह करें और इस दुनिया में माल हासिल करें और आखिरत में ग़ारज़ी और शहीद का मरतबा हासिल करे? गाज़ी कहाँ है जो अपनी ज़िंदगी और सिर की क़ुर्बानी दें और अपने घरों को छोड़ दें अल्लाह तआला के गुलामों को क्रूर के पंजो से बचाने के लिए इस्लाम की खातिर?"इन अल्फ़ाज़ के साथ, उन्होने सहाबत अल किराम (अलैहिमुर-रिज़वान) को जिहाद और ग़ाज़ा पर जाने के लिए प्ररित किया। ये उमर (रज़ी अल्लाहु अनह) की इस तकरीर का नतीजा था के इस्लामी मुल्क तीन बरआज़मों तक फैल गए और लाखों लोगो का कुफ्र की तरफ़ से पाकी

हुई। इस तकरीर पर सहाबत अल किराम (अलैहिर-रिज़वान) ने एक साथ ज़िहाद करने के लिए और मरते दम तक इस्लाम के लिए लड़ने का हलफ़ लिया। जिस तरह खलीफ़ा ने हुकूम दिया था, उसी तरह मुसलमानों ने अपने घरों को छोड़ा और अरब से बाहर निकल गए और चारो तरफ़ बस गए। उनमें से बहुत से मरते दम तक वापिस नहीं आए और वहीं रुक कर लड़ते रहे। इस तरह बहुत थोड़े अरसे में कई मुल्कों पर कब्ज़ा कर लिया गया। उन दिनो में, वहाँ पर दो बड़ी रियास्ते थी; बीजान्टिन और फारसी, मुसलमानो ने दोनो पर फतह हासिल करली। खासतौर से, फारसी सलतन्त पूरी तरह से डह गई, और उसकी सारी ज़मीन मुसलमानों के कब्ज़े में आ गई। इन मुल्कों के रहने वालों को मुसलमान बनने की इज़्ज़त दी गई, और इस दुनिया में अमन हासिल करने का और आखिरत में बेशुमार खुशियाँ हासिल करने की सआदत मिली। उसमान और अली रज़ी अल्लाहु अन्हुम के वक्त में भी, मुसलमानों ने अपने आपको ग़ज़ा के लिए वक्फ़ कर दिया। बहरहाल, उसमान रज़ी अल्लाहु अन्ह की खिलाफत के दौरान कुछ लोग खलीफ़ा के खिलाफ़ खड़े हो गए और उन्हें शहीद कर दिया। अली रज़ी अल्लाहु अन्ह के वक्त के दौरान खारिजी कोलहल उठा। मुसलमानों के बीच खिलफशार शुरू हो गया। और, क्योंकि जीत और फतेह की सबसे बड़ा ज़रिया एकता थी, उनकी खिलाफ़त के दौरान इतनी ज़मीन पर फतह हासिल नहीं की गई जितनी के उमर रज़ी अल्लाहु अन्ह के वक्त में की गई थीं।

अल-खुलफ़ा अर-राशिदीन का समय तीस साल तक चला। ये तीस साल, नबी (अलैहि स-सलाम) के दौर की तरह खुशहाली में कट गए। उनके बाद, कई बिदअते और गलत रास्ते मुसलमानो के बीच आ गए और बहुत लोग सही रास्ते से अलग हो गए। सिर्फ़ वो जिन्होने बिल्कुल सहाबत अल किराम (रज़ी अल्लाहु अतआला अन्हुम अजमईन) की तरह शरीअत को माना और अपनाया वही महफ़ूज़ रहे। उनका तरीका **अहल अस-सुन्नत वल-जमाअत** का तरीका है। ये वाहिद सही तरीका है। वो रास्ता जो हमारे नबी (अलैहि स-सलाम) और आपके साथियों ने अपनाया वही रास्ता है जो अहल अस सुन्नत (रहमतुल्लाही तआला अलैहिम अजमईन) के आलिमों के ज़रिए दिखाया गया, वक्त के साथ गलत तरीके भुला दिए गए, और ज़्यादातर मुसलमान मुल्क आज इस सही तरीके की तकलीद करते हैं। उनमें से जो अहल अस सुन्नत के साथ नहीं रहे, वो सिर्फ़ एक शिया ग्रुप है जो छूट गए। शियाओं का दावा है कि, "खिलाफ़त अली (रज़ी अल्लाहु अन्ह) का हक़ था और अबू बक और उमर (रज़ी अल्लाहु तआला अन्हुम) ने उन्हें ताकत के बल पर उनके हक़ से महरूम रखा" और वो बहुत सारे सहाबत अल किराम पर इल्ज़ाम लगाते हैं। [आज, जो अल-उम्मत अल मुहम्मदिया और मुसलमान कहलाए जाते हैं वो सब पूरी तरह से अहले सुन्नत, शिया और वहाबियों पर मुशतमिल हैं]। (वो ज़िंदीक जिन्हें अहमदिया (काएदियानी) और बहाई कहा जााता है उनका इस्लाम के साथ कोई राब्ता नहीं। दोनो ग्रुप काफ़िर हैं।)

अहल अस सुन्नत, फिकह के ज़मन में (अमल, इबादात चार मसलकों पर मुबनी है। सबसे पहला, **हनफ़ी मसलक** इल-इमाम अल-आज़ाम अबू हनीफ़ा नोमान इब्न साबित (रहमतुल्लाहि अलैहि) के ज़रिए कायम किया गया। `हनीफ़` का मतलब है एक शख्स जो सही ढंग से यकीन करे, जो इस्लाम को पकड़े। `अबू हनीफ़ा` का मतलब है सच्चे मुसलमानें का बाप। अल इमाम अल आज़ाम अस सुन्नत के चार मसालिक में से दूसरा मसलक **मालिकी मसलक** है इमाम मालिक इब्न अनस (रहमतुल्लाहि अलैहि) का। तीसरा मसलक इमाम मुहम्मद इब्न इद्रीस अश-शाफीई (रमतुल्लाही अलैह) का **शाफ़ि-ई मसलक** है। हज़रत शाफ़ी, सहाबी, एक इमाम के दादा के दादा थे। इसीलिए उनको और उनके मसलक को शाफ़ी-ई मसलक कहा जाता है। चौथा मसलक अहमद इब्न हनबल (रहमतुल्लााहि अलैहि) का **हनबली मसलक है**। [जैसे के **राद अल मुख्तार** के प्रस्तावना में इब्न अबिदीन के ज़रिए लिखा गया है, ये चारो इमाम हिजरी सालों **80, 90, 150** (**767** मीलादी) और **164** में पैदा हुए थे और बिलतरीब **150, 179,204** और **241** में रहलत फरमा गए।]

एतिकाद (यकीन) के मुताबिक, ये चारो मसलक एक दूसरे से अलग नहीं हैं। अस सुन्नत से तअल्लुक रखते हैं और उनका यकीन और मज़हब की बुनियाद एक समान है। मुसलमानों के ये चारो इमाम बड़े मुजतहिद थे और इन्हें सबके ज़रिए पहचाना और माना गया। फिर भी ये अमाल के सिलसिले (शरीअत) में कुछ छोटे मामलों में एक दूसरे से सहमती नहीं रखते।

क्योंकि अल्लाह तआला और उसके नबी (सल्लल्लाहु तआला अलैहि व-सल्लम) ने मुसलमाने पर दया की, ये कुरआन अल करीम और हदीस-अस शरीफ़ में साफ़ नहीं किया गया था कि कुछ अमल किस तरह करने चाहिए। (अगर वो साफ़ वाज़ह हो जाते, तो उनको बिल्कुल उसी तरीके से अदा करना फर्ज़ या सुन्नत हो जाता जैसे के उन्हें बताया गया था। वो जो फर्ज़ अदा नहीं करते गुनाहगार हो जाते और वो जो उन्हें हल्का समझते वो ग़ैर मुस्लिम बन जाते; मुसलमानो के लिए ज़िंफगी बड़ी मुश्किल हो जाती।) इन अमाल को उनके साथ तुलना करते हुए करना चाहिए जो वााज़ेह तौर पर बतााए गए हैं। मज़हबी आलिमों में, वो जो इस बातो को समझने में काबिल हुए कि इन अमाल को किस तरह करना चाहिए तुलना करने के बाद वो **मुज़तहिद** कहलाए। ये वाजिब था, इसीलिए, कुरआन अल करीम और अस शरीफ़ में मुजतहिद के लिए ये हुकूम हुआ कि अपनी पूरी ताकत इस बात को ढूँढंने में लगा दे कि किस तरह एक अमल अदा किया जाता है और, उसके लिए और जो उसे मानते हैं उनके लिए, इसे अपनी कटौती या चुनाव के मुताबिक इसे अदा करना होगा **(इजतिहाद),** जिसे उन्होने सोचा कि सबसे सही हल है। एक मुजतहिद की गलती इसे करने में गुनाह नहीं समझी जाएगी, और उसे उसकी कोशिश के लिए आखिरत में उसका इनाम दिया जाएग, क्योंकि आदमी को जितना वो कर सके उतना ही काम दिया जाता है। अगर वो गलती करता है, तो उसे उसकी कोशिशों के लिए एक इनाम दिया जाएगा। अगर वो पता चला ले कि क्या सही है, तो उसे दस गुना ज़्यादा इनाम दिया जाएगा। सारे सहाबत

अल किराम (रज़ी अल्लाहु अन्हुम अजमईन) बड़े आलिम थे, यानी, मुजतहिद। उनके फौरन बाद जो रहते थे, उनमें बहुत सारे इजतिहाद के काबिल आलिम थे, और उनमें से हर एक के कई लोग मानने वाले थे। वक्त के साथ, उनमें से ज़्यादातर भुला दिए गए, और अहल अस सुन्नत के दरमियान सिर्फ़ चार मसलक बचे रह गए। उसके बाद, ऐसा न हो कि कोई आगे आए और मुजतहिद होने का ड्रामा करे और एक बिदअती ग्रुप बनाले, तो अहल अस सुन्नत इन चार के अलावा और किसी मसलक की पैरवी नहीं करते। अहल अस सुन्नत में से लाखों लोग इन चार मसालिक में से एक तकलीद करते हैं। इन चारो मसलकों के यकीन एक समान होते हैं, वे एक दूसरे को गलत नहीं मानते, न ही वे एक दूसरे को बिदअती या मज़हब को छोड़ने वाला नहीं मानते। यह कहने के बाद के सही तरीका इन चार मसालिक का ही है, तो एक मुसलमान सबसे सही है। इस्लाम ने ये साफ रूप से नहीं बताया कि इजतिहाद के ज़रिए किए जाने वाले अमाल कैसे करने चाहिए, ये मुमकिन है किसी के खुद के मसलक गलत हो और बाकी तीन मसलक सही हों, और हर एक के लिए ये कहना बहतर है कि, "मैं जो मसलक मानता हूँ वो सही है, लेकिन ये गलत भी हो सकता है; बाकी तीन मसलक गलत हो सकते हैं, लेकिन वो सही भी हो सकते हैं।" इस तरह, अगर वहाँ कोई खराज (मजबूरन ज़रूरी) नहीं है, तो इस बात की इजाज़त नहीं है कि चारो मसलको को एक दूसरे के साथ मिला दिया जाए कोई चीज़ एक मसलक के मुताबिक करके और दूसरी चीज़ दूसरे के मुताबिक करके। एक शख्स को अपने आपको जिस मसलक की वो

तकलीद करता है उसके मुताबिक खुद को ढालना होता है उसकी तालीमात को सीखने के बाद जब वहाँ कोई हर्ज नहीं है। (ताहम, **हर्ज** (कठोर कठिनाई, एक काम को अपने मसलक के मुताबिक करने में नामुमकिन हो।) के मामले में, उसे इस बात की इजाज़त है के वो दूसरे मसलक की इस मामले में तकलीद करले। और ये कुछ शर्ते रखता है। उसे बाद वाले मसलक के हालात का ज़ाएज़ा लेना होगा इन मामलात के मुतअलिक जब इस विकल्प का इस्तेमाल करे। ये इबनि आबिदीन में **निकाह-ए-रिजी** के सबक की सुर्खियों में लिखा है, कि हनफ़ी मसलक के आलिमों ने इस मामलात में मालिकी मसलक की नकल करने का एक फतवा जारी किया। ज़्यादातर आलिमों ने कहा कि हनफ़ी मसलक सही होने के करीब है। इसलिए ये मसलक ज़्यादा मुस्लिम मुल्कों में कायम हुआ। तुर्कस्तान, भारत और अनातोलिया में लगभग सभी मुसलमान हनफ़ी हैं। मग़रिबी अफ्रीका पूरा मालिकी है। भारत के कुछ साहिली इलाकों में मालिकी हैं। कुर्द के दरमियान और मिस्र में, अरब और daghistau में शाफि-ई कसीर हैं। हनबली थोड़े ही हैं; एक समय में दमिश्क और बग़दाद में बहुत थे।

अल-अदिलात अश शरीअ (दस्तावेज़, इस्लाम के ज़राए) चार हिस्सों पर मुश्तमिल हैं:क़ुरआन अल-करीम, अल हदीस अश-शरीफ़, इजमा-अल-उम्मा और कियास अल-फुकह।

जब मुजतहिद कुरआन अल करीम में साफ़ नहीं देख सकते थे के किस तरह अमल अदा किया जाए, तो वो हदीस अश शरीफ़ का सहारा लेते थे। अगर वो हदीस अश शरीफ़ में भी साफ़ रूप से नहीं देख पाते थे तो वो एलान करेंगे कि ये अमल इजमा के मुताबिक अमल कराया जाएगा। (**इजमा** का मतलब है एक राए, सहमत: सारे सहाबत अल किराम की एक अमल को एक ही तरीके से करने या कहने की। इजमा तावईन के जो सहाबत अल किराम के बाद आए, वो भी एक दस्तावेज़ है। उनके बाद आने वाले लोगों ने किया कहा या किया क्या वो इजमा नहीं है, खासतौर से अगर वो आज मज़हबी जाहिल लोग हैं।)

अगर वहाँ कोई जो अमल करने का कोई इजमा से भी न मिले, तो ये ज़रूरी है कि मुजतहिद की कियास की तकलीद की जाए। इमाम मालिक (रहमतुल्लाहि अलैहि) ने कहा, इन चार दस्तावेज़ की तरह थी। उन्होने कहा, "उनकी रिवायत और असली तौर पर रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से उन सौंपी।" उन्होने कहा ये दस्तावेज़ कियास से ज़्यदा भरोसेमंद था। फिर भी, दूसरे मसलक के इमामो ने मदीना के बाशिंदों को दस्तावेज़ का एक ज़रिया नहीं समझा।

इजतिहाद के लिए तरीके दो थे। एक ईराक के 'उलेमा' का तरीका था, जिसे **राए** (पसंद) या **कियास** (तुलना) का तरीका कहा जाता था; अगर ये कुरआन अल करीम में या हदीस अश शरीफ़ में साफ़ एलान न हो कि किस

तरह एक अमल अदा किया जाएगा, तो दूसरा अमल जो सवाल किए गए अमल से मिलता हुआ हो जो कुरआन अल करीम या हदीस अस शरीफ़ में साफ़ एलान हो तो उसे ढूँढा जाए। जब वो मिल गया तो पूछे गए सवाल के अमल से उनकी तुलना की गई और उसी तरीके से उसे किया। सहावत अल किरम के बाद, इस रास्ते के मुजमईन का सरवराह इमाम अल आज़म हनीफ़ा (रहमतुल्लाहि अलैहि) थे।

दूसरा तरीका हिजाज़ के उलेमा का तरीका था, जिसे **रिवाया** (परंपरा) कहा गया। उन्होने अल-मदीनत अल-मुनव्वरा के निवासियों की रिवायत को कियास से अफ़ज़ल माना। सबसे बड़े मुजतहिद इस तरीके के इमाम मालिक (रहमतुललाहि अलैहि) थे, जो अल मदीनातु ल मुनव्वरा में रहते थे। अल इमाम अश शाफ़ी-ई और इमाम अहमद इबन हनबल (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम) ने उनकी सोहबतो में शिरकत की। इमाम मालिक का तरीका सीखने के बाद, अल इमाम अश शाफ़ी-ई बग़दाद चले गए और अल इमाम अल-आज़म (रहमतुल्लाहि तआला अलैह) का तरीका उनके शार्गिदो से सीखा और इन दोनो तरीको को मिला दिया। उन्होने इजदिहाद का एक नया नज़ारिया कायम किया। क्योंकि वो एक फसीह और अरवी आदमी थे, वो आयाह और हदीस के सियाक व सबाक को समझते थे और एक मतावादिल जो उन्हें ज़्यादा ज़ोरदार लगता था उस अमल के मुताबिक उसे ढूँढते थे। अगर उन्हें उसका कोई बदल नहीं मिल पाता था ज़्यादा ज़ोरदार तो वो खुद इजतिहाद को कियास के तरीके

के मुताबिक करते थे। अहमद इबन हनबल (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि) भी, इमाम मालिक (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि) के तरीके को सीखने के बाद बग़दाद चले गए। वहाँ उन्होने अल इमाम अल आज़म (रहमतुल्लाहि अलैहि) के शार्गिदों से कियास का तरीका हासिल किया। फिर भी, क्योंकि उन्होने कई बड़ी हदीसो को याद किया था, इसलिए वो जिस तरह हदीस ने एक दूसरे की पुष्टि की थी पहले उसी तरह से इजतिहाद का जाएज़ा लिया। इस तरह, वो दूसरे तीन मसलक से शरीअत के उसूलों के मुतअलिक कई बातों में सहमती नहीं रखते थे।

इन चारों मसालिक का मामला एक शहर में रहने वालो जैसा है, जिसकी खास बात है, जब उन्हें कोई नई मुश्किल का सामना करना होता था वो कानून में उसे नहीं ढूँढते थे, बल्कि एक साथ इकट्ठे होकर और कानून का पक्षधर प्रेग्राफ़ की तुलना करके उसका हल निकालते थे। कभी कभी वे आपसी समझौते तक नहीं आ पाते थे। उनमें से कुछ कहते थे कि रियास्त का मकसद शहर का रखरखाव है लोगों के आराम के लिए। इसी तरह के तर्क के आधार वो मसले को सुलझाते थे उस मामले और उससे मिलते जुलते मामले के बीच की समानता को देखते हुए जिसे कानून के एक article में वाज़ेह किया गया था। ये तरीका हनफ़ी मसलक की तरह है। दूसरे शहरों से आने वाले अफ़सरों के बरताव को देखकर इस सिलसिले में उनकी नकल करते थे। वो कहते थे कि उनका बरताव रियास्त की नियत बताता है। ये तरीका मालिकी मसलक की

तरह है। कुछ लोग कानून के सियाक व सबाक़ और उनके तासुरात पढ़कर उस मामले को अदा करने का तरीका ढूँते थे। वो शाफ़ी-ई मसलक से मिलते हुए थे। और कुछ उस काम को सही करने का तरीका दूसरे कानून के लेखों को जमा करके उनको एक दूसरे से तुलना करके करने का फैसला करते थे। वो हनबली मसलक की तरह थे। इस तरह शहर के जाने माने लोग एक हल ढूँढ लेते थे और कहते थे कि उसका हल कानून के मुकाबिल है और सही है। लेकिन कानून की रज़ामंदी चारो में से सिर्फ़ एक के लिए होती थी और बाकी तीन गलत होते थे। फिर भी, उनकी कानून के साथ नारज़ामंदी उनकी कानून के विपरीत नियत की वजह से नहीं होती थी; वो रियास्त के हुकूम को बजा लाने की कोशिश करते थे। इसलिए, उनमें से कोई भी खतरनाक नहीं माना जाएगा। वो ज़ोरदार कोशिश के लिए तारीफ़ के लायक हैं। लेकिन वो जो ये ढूँढ लेते हैं कि क्या सही है वो ज़्यादा तारीफ़ के लायक हैं, और उन्हें इनाम दिया जाएगा। चारो मसालिक की हालत इसी तरह की हैं। अल्लाह तआला को जो तरीका पसंद है वो बेशक इनमें से एक है। एक मामले में जिस पर चारो मसलक एक दूसरे से असहमत हुए, उनमें एक सही है और बकी तीन गलत है। लेकिन, चूंकि हर मसलक के इनाम ने सही रास्ता ढूँढने की कोशिश की, वो जो गलत थे उन्हें माफ़ कर दिया जाएगा। उन्हें भी सवाब दिया जाएगा, क्योंकि हमारे नबी (सल्लल्लहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया, **"मेरी उम्मत के लिए गलती या भूलने की वजह से कोई सज़ा नहीं है।"** उनके बीच ये इखतेलाफात सिर्फ़ कुछ मामूली मामलों की तशवीश करते हैं। क्योंकि उनके बीच यकीन के

और अकसर इबादत के मामलों में रज़ामंदी होती है, यानी कुरआन अल करीम और हदीस शरीफ़ में खुले तौर पर बताए गए उसूलो पर, वो एक दूसरे पर तंकीद नहीं करते।

[**सवाल:** "वहाबी और वो जो उनकी किताबें पढ़ते हैं कहते हैं, मसलक हिजरा की दूसरी सदी में ज़ाहिर हुआ। तो सहाबा और ताबईन किस मसलक को मानते थे?"**जवाब:** एक **इमाम अल मसलक** एक अज़ीम आलिम थे जो मज़हबी तालीम जमा करते थे जो वो सहाबा-व-अल किराम से हासिल करते थे और जो वाज़ेह तौर पर कुरआन अल करीम और हदीस शरीफ़ से बयान होती थी, और उसे किताबों में सौंपते थे। जो तालीमात वाज़ेह तौर पर बयान नहीं होती थीं उनके लिए, वो उनके साथ उसकी जाँच करके तुलना करते थे जो साफ़ ऐलान की गई थीं।"मशहूर चार इमामो के ज़माने में भी वहाँ कई इमाम थे जिसके अपने खुद के मसलक थे। लेकिन जो उनकी तकलीद करते थे वो शुमार में सदियों से कम हो गए, और, उसके नतीजे में, आज कोई नहीं बचा (**अल-हकीका,** प . **318**)। हर सहाबी एक मुजतहिद थे, एक गहरे आलिम, और एक इमाम अल मसलक। हर एक का अपना मसलक था और चारों ए-इम्मात अल-मसालिक से ऊंचे और सीखे हुए थे। उनके मसलक ज़्यादा सही और ऊंचे हो सकते हैं। ताहम, क्योंकि उन्होने किताबें नहीं लिखीं, उनके मसलक भुला दिए गए। ये मुमकिन नहीं रहा कि इन चारो के अलावा किसी और मसलक की तकलीद की जाए। ये कहना, "सहाबा कौन से मसलक से

तअल्लुक रखते थे?" ये इस तरह कहना है, "किस स्कवाड्रन से कार्नल का तअल्लुक है?" या," स्कूल की कौनसी जमाअत से भौतिकी के मास्टर का तअल्लुक है?"]

ये बहुत सारी किताबों में लिखा है कि हिजरा के चार सौ सालो बाद वहाँ कोई एक भी आलिम मुतलक (पूरा) इजतिहाद अदा करने के लायक नहीं था।**अल-हकीका** के सफ़ह **318** में लिखी हदीस शरीफ़ का हवाला है कि झूठे, मज़हवी मरतबे के बिदअती मर्दो का शुमार बढ़ गया था।इस वजह से आज का हर सुन्नी मुसलमान इन चारो माने हुए मसालिक में से एक को मानता या(**तकलीद**)करता है, यानी, उसे इन चारो मसालिक में किसी एक की **इल्म अल-हाल** की किताबों को पढ़कर अपनाना होग और ईमान रखना होगा और इन किताबों के मुताबिक अपने अमाल को अदा करना होगा।इस तरह, वो इनमें से किसी एक मसलक का नुमांएदा बन जाएगा।एक सख्स जो इनमें से किसी एक की भी तकलीद नहीं करता वो एक सुन्नी नहीं बल्कि एक **ला-मज़हबी** शख्स है, जो या तो **72** बिदअती फिरकों में से किसी एक से संबंधित है या वो एक ग़ैर मुस्लिम बन गया है। ([ये हकीकत **बहर, हिंदिय्या** में **अल-तहतावी** के ज़बाइह के खंड में और **राद अल मुख्तार** के बाग़ीस के खंड में लिखी हुई है।इसके अलावा **अल-बसाइर** के सफ़ह **52** में लिखा है कि अहमद सावी की तफसीर के ज़रिए हवाला है के ऐसे ही सुरत अल कैफ़ में लिखा है।)

मीज़ना-उल-कुबरा के लेखक (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि) ने इसकी प्रस्तावना में लिखा है। "सारे भूला दिए गए मसलक और मैजूदा चारो सही और जाईज़ हैं। उनमें कोई एक दूसरे पर फौकियत नहीं रखता क्योंकि वो इस्लाम के समान ज़राए पर मुबनी हैं। हर मसलक के पास वो चीज़ें हैं जो करने में आसमान **(रूखसा)** साथ ही साथ मुश्किल **(अज़ीमा)** भी हैं। अगर एक शख्स जो अज़ीमा कर सकता है लेकिन इसके बजाए वो रूखसा करे तो वो इस्लाम का खेल बना रहा है। वो जो उज़र [अज़ीमा करने में नाकाबिल] रखता हो वो रूखसा कर सकता है। उसका रूखसा उतना ही सवाब रखता है जैसे भी हालत हों अगर वो अज़ीमा करता। एक काबिल शख्स पर ये वाजिब है कि वो अपने मसलक का अज़ीमा करे बजाए रूखसा के। इसके अलावा अगर कुछ अमल सिर्फ़ उसके मसलक में आसान तरीके से हैं और दूसरे मसलक में मुश्किल तरीके से हैं तो उस पर वाजिब है कि वो बाद वाला अदा करे। एक शख्स को इमामत अल मसालिक में किसी एक की भी बातों को नापसंद करना नज़ार अंदाज़ करना चाहिए या अपनी खुद की राए को उनसे ऊपर नहीं समझना चाहिए। दूसरे का इल्म और समझ उसके आगे कुछ भी नहीं जब उन मुजतहिद से मवाज़ना की जाएँ (**अल मीज़ान अल कुबरा,** प्रस्तावना)। चूंकि एक शख्स के लिए जो अपने के मुताबिक कोई उज़र नही रखता, तो ये समझ वाली बात है कि दूसरे मसालिक के रूखसा को ढूँढने की इजाज़त नहीं है, जिसे मसालिक की **तलफ़ीक** कहते हैं।

दुर्र-उल-मुख़्तार किताब के मुसंनिफ़ (रहमतुल्लाहि तआला अलहि) ने अपनी प्रस्तावना में कहा और ये **राद-उल-मुखतार** जो दुर्र-उल-मुख़्तार किताब की तशरीह है इसमें भी कहा गया, ''मासालिक के रूखसा को देखना और उनके मुताबिक इबादा करना सही नहीं है।मिसाल के तौर पर, अगर एक शाफ़ी-ई की वुज़ू के साथ ज्ल्दि पर खून आ जाता है, उसका वुज़ू नहीं टूटता, जबकि एक हनफ़ी का खून निकलते हुए वुज़ू टूट जाता है; दूसरी तरफ़, एक शाफ़ी-ई की जिल्द अगर किसी ना महरम औरत की जिल्द से टच/छू जाए तो उसका वुज़ू टूट जाता है, अलबत्ता हनफ़ी मसलक के मुताबिक उसका वुज़ू नहीं टूटता।इस वजह से, अगर एक शखस की जिल्द से खून बह रहा है या एक ना महरम औरत की जिल्द से वो छू जाता है वुज़ू करने के बाद, तो ऐसे वुज़ू के साथ सलात सही नहीं होगी।इसी तरह, एक मसलक के मुताबिक कोई अमल करते हुए दूसरे मसलक की तकलीद करना बातिल (नाजाईज़, गलत) है।मिसाल के तौर पर, अगर एक कुत्ता शाफ़ी-ई को छू ले जो, मसलक के मुताबिक, अपने गीले हाथ अपने सिर के बालों वाले थोड़े हिस्से पर हल्के से फैरे वुज़ू करते हुए, ये उसके लिए सही नहीं है [कुत्ते ने जो हिस्सा छुआ है उसे धोए बग़ैर] मालिकी मसलक की तकलीद करते हुए भी।शाफ़ी-ई मसलक के मुताबिक जिस शखस को कुत्ते ने छुआ है उसकी सलात सही नहीं है।बहरहाल, मालिकी मसलक के मुताबिक, एक कुत्ता मज़हबी नापाक (नजस) नहीं है, लेकिन एक शखस को अपने सिर के पूरे बाल वाले हिस्से को गीले हाथों से मलना होगा (जब वुज़ू कर रहा हो)।इसी तरह, हनफ़ी मसलक

में दबाव में दी गई तलाक सही नहीं है।इसलिए इस शखस के लिए इस बात की इजाज़त नहीं कि शाफ़ी-ई मसलक की तकलीद करते हुए उस औरत से शादी करले जिसे वो तलाक दे चुका है जबकि हनफ़ी मसलक की तकलीद करते हुए वो उसी वक्त में उसकी बहन से शादी करा हुआ है।उलेमा की इतेफ़ाक राए के मुताबिक ये सही नहीं है एक अमल को अदा करने में **तलफ़ीक** करना, यानी, मसालिक के रूखसा को ढूँढना और उसके मुताबिक अमल करना।इन चारां मसालिक में से किसी एक की तकलीद न करते हुए कोई काम करने की इजाज़त नहीं है।" [**दुर्र-उल-मुखतार**] की प्रस्तावना, और **राद-अल मुखतार** की उसकी तशरीह।) इसके अलावा, "शाफ़ी-ई मसलक में देर दोपहर की नमाज़ें ज़ोहर और असर, मग़रिब और ईशा की नमाज़ एक साथ पढ़ सकते हैं, अगर कोई उज़र मुश्किल हो, जैसे के सफ़र या तूफ़ानी बारिश हो।हनफ़ी मसलक में इसकी इजाज़त नहीं है।यह एक हनफ़ी के लिए हराम है, जब वो सफर में हैं तो शुरूआती दोपहर के ज़ोहर के वक्त की नमाज़ देर दोपहर के अस्र वक्त की नमाज़ के वक्त में बग़ैर किसी सगीन हालात या मुश्किल के अदा करे, यह उसके लिए बिल्कुल सही नहीं है कि देर दोपहर की नमाज़ शुरूआती दोपहर के साथ अदा करे।लेकिन शाफ़ी-ई मसलक में दोनो हालतें सही हैं।जब कुछ काम करने में (मिसाल के तौर पर एक इबादत) बड़ी मुश्किल (हर्ज, मशक्कत) हो उसके खुद के मसलक के मुताबिक, उसे उस काम को करने की अपने ही मसलक में आसान तरीका (रूसखा) करने की इजाज़त है।अगर रूखसा करने में भी उसको मुश्किल हो, तो उसे उस इबादत

को करने के लिए दूसरे मसलक की तकलीद करने की इजाज़त है। लेकिन फिर उसे दूसरे मसलक में उस इवादत मे संबंधित फर्ज़ और वाजिब अमल को अदा करना होगा।" (**इबिद** सलात के वक्त अनुभाग।) एक शखस जो दूसरे मसलक की नकल करता है जब कोई अमल या इवादा करे तो उसे अपने मसलक से बाहर नहीं होना चाहिए, उसे अपना मसलक तवदील नहीं करना होगा। सिर्फ़, उस काम को करते हुए, दूसरे मसलक के भी उसूलों पर अमल करना होगा।

इवन आविदीन (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि) ने लिखा: "अगर एक हनफ़ी जिसने बाज़ावता तौर पर एक वुज़ू करने की नियत किए बग़ैर एक वुज़ू किया इस वुज़ू के साथ उसने इवतेदाई दोपहर की नमाज़ अदा की, इसकी इजाज़त है; अगर वो देर दोपहर की नमाज़ के वक्त के बाद एक शाफ़ी-ई बन जाता है इस वुज़ू के साथ, तो ये सही नहीं है। उसे बाज़ावता तौर पर पहले एक वुज़ू करने की नीयत करनी होगी और दोबारा वुज़ू अदा करना होगा। (**राद अल-मुखतार, p.542.** शाफ़ी-ई मसलक में बाज़ावता नीयत करना फर्ज़ है, जवकि हनफ़ी में ये फर्ज़ नहीं है।)

अगर एक शखस दुनियावीं तहफ़ुज़ात के लिए अपना मसलक तवदील करता है बग़ैर किसी मज़हवी ज़रूरत या इल्म के मुतअल्लिक ज़रूरत के बग़ैर, वो इस्लाम का एक खेल बनाते हैं। उसे सज़ा मिलनी चाहिए। इस बात का डर है कि वो बग़ैर ईमान के मर सकता है। अल्लाह तआला ने ऐलान किया: **'उनसे**

पूछो जो जानते है।' इस वजह से, ये वाजिब हो जाता है कि एक मजतहिद से पूछा जााए, यानी एक मसलक की तकलीद की जाए।एक मसलक की तकलीद करना या तो ये कहकर जो शखस का मसलक है या, बग़ैर कहे, उसके साथ रहने का अपने दिल में इरादा करते हुए।एक मसलक को मानने का मतलव है माइ अल मसलक की तालीमात के मुताविक पढ़ना, सीखना और अमल करना।एक शखस से कहकर मसलक में शामिल नहीं हो सकता कि, मैं हनफ़ी हूँ; या मैं शाफ़ी-ई हूँ; बग़ैर उसे जाने हुए।ऐसे लोगों को इल्म अल हाल की किताबों से और मज़हवी आकाओं से इबादात को करने के अमल को सीखना होगा। (**राद अल-मुखतार** , ताज़ीर पर अनुभाग।)

''एक शखस जो मसलकों को हकीर समझता है और कुछ करने के लिए आसान तरीके पाने के लिए अपना मसलक बदलता है [यानी, जो मसालिक को एक करता है और उनके रूखास को चुनता है और एकट्ठा करता है] उसे गवाह के तौर पर कुबूल नहीं किया जा सकता।'' (**इबिद** गवाह पर अनुभाग।) इबन आबिदीन ने अपनी प्रस्तावना में कहा है कि खलीफा अर रशीद ने इमाम मालिक से कहा, ''मैं तुम्हारी किताबों को सारे मुस्लिम मुल्कों में फैलाना चाहता हूँ और सब को सिर्फ इन किताबों की तकलीद करने को कहूँगा।'' इमाम मालिक ने जवाब दिया,'' ए खलीफ़ा! ऐसा मत करिए! मसालिक में मुखतलिफ़ उलेमा उम्मत पर अल्लाह तआला की हमदर्दी है।हर

कोई जिस मसलक को पसंद करता है उसी की तकलीद करता है।सारे मसालिक सही हैं।"

एक **मोमिन** या **मुस्लिम** या **मुसलमान** वो है जो इस्लाम की **तालीमात** पर यकीन रखे जिन्है इंसानियत को मुहम्मद (अलैहि स-सलाम) के ज़रिए अल्लाह तआला ने भेंजी और जो मुसलमान मुल्कों में फैली हुई हैं।ये तालीमात कुरआन अल करीम में और हज़ारों हदीसों में ऐलान की गई हैं।सहाबत अल किराम ने इन्हें नवी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से सुनीं।**सलाफ़ अस-सालिहीन** यानी इस्लाम के उलेमा ने जो सहाबत अल किराम के बाद दूसरी और तीसरी सदी में आए, इनको अपनी किताबों में लिखा जिसे उन्होने बराहेदास्त सुना या उनके ज़रिए जिन्होने इसे सहाबत अल किराम से सुना।इस्लामी उलेमा जो उनके बाद आए उन्होने सलफ़ अस सालिहीन के ज़रिए बताई गई तालीमात की तशरीह की मुखतलिफ तरीके से की और एक दूसरे से मुखतलिफ़ की, इस तरह बहतर ग्रुप यकीन की तालीमात के मुतअलिक वुजूद में आए।उनमें से सिर्फ़ एक ग्रुप ने अपने विचार और राए की तकलीद नहीं की या तबदील या अपनी तशरीह में किसी चीज़ का इज़ाफ़ा नहीं किया।ये ग्रुप सही अकीदे के साथ **अहल अस सुन्नत** या **सुन्नी** कहलाते हैं।बाकी बहतर ग्रुप जो गलत तशरीह और ग़ैर वाज़ेह आयात और हदीसों की वज़ाहत के नतीजे में इन ग्रुप को **बिदअत** (या **दलाल,** इनहेराफ़, मुश्रिक) या **ला-मज़हबी** कहलाए जाते हैं; वो भी मुसलमान होते हैं, लेकिन वो बिदअत में होते हैं।

कुछ लोग, सलफ़ अस-सलिहीन रहमतुल्लाह तआला अलैहिम अजमईन की किताबों से अकीदे के इल्म को लेने के बजाए, कुरआन अल करीम और हदीस अश शरीफ़ को अपने दिमाग़ और राए के मुताबिक तआरीह करते थे; इस तरह उनके अकीद पूरे तौर पर भटक गए और वो काफ़िर बन गए जिन्हें मुलहिद कहते हैं। **मुलहिद** अपने आपको एक मुसलमान समझते हैं। और मुहम्मद (अलैहि स-सलाम) की उम्मत समझते हैं। **मुनाफ़िक** अपने आपको एक मुसलमान बताते हैं लेकिन वो दूसरे मज़हब में होते हैं। **ज़िंदीक** एक मुलहिद हैं और किसी मज़हब में यकीन नहीं रखते, लेकिन मुसलमान होने का दिखावा करते हैं, मुसलमानों को गैरमज़हबी, मुलहिद बनाने के लिए। वो इस्लाम में तबदीली लाने की कोशिश करता है और इस्लाम को तबदीली और बेहरमती के ज़रिए फना करने की कोशिश करते है। वो इस्लाम का दुश्मन है। वो यहूदियों और ईसाइयों से ज़्यादा नुकसानदायक है। और इसलिए फ्रीमेसन है।

एक मुसलमान होने के लिए सिर्फ़ ईमान के छः उसूलों की तालीमात में यकीन रखना ज़रूरी नहीं है। एक मुसलमान होने के लिए, ये भी ज़रूरी है के इस बात पर यकीन रखा जाए के जाने माने फराईज़ को अदा किया जाए। एक शख्स जो इस हकीकत से कुफ्र करता है के फराईज़ को अदा करना एक शख्स की इबतेदाई काम फर्ज़ अदा करना है और हराम को नज़र अंदाज़ करना है वो अपना ईमान खो देता है और एक **मुर्तदद** (पाखण्डी, बिदअती, मुश्रिक) बन जाता है। एक शख्स जो इसे मानता है लेकिन एक या ज़्यादा

फ़र्ज़ अदा नहीं करता या एक या एक से ज़्यादा फ़र्ज़ हराम का मुरतकिब हो जाता है वो एक मुसलमान है, लेकिन वो खतताकार, गुनाहगार मुसलमान है। ऐसे मुसलमान को **फासिक** कहते है। फ़र्ज़ अदा करना और हराम से परे रहना उसे इबादत अदा करना कहते है। "एक मुसलमान जो इबादात करने की कोशिश करता है और जो एक गलती होने पर फौरन उससे तौबा करता है वो **सालिह** कहलाता है।

आज, एक शखस जो आज़ाद दुनिया में रहता है उसके लिए ईमान के छः उसूलों और मारूफ़ फराईज़ और हराम को जानने के लिए कोई उज़र नहीं है। इनको न सीखन एक बड़ा गुनाह है। इनको मुखतसिर तौर पर जानना/सीखना और अपने बच्चों को सीखाना ज़रूरी है। अगर एक शखस ओछेपन की वजह से इन्है सीखना नज़र अंदाज़ करता है तो वो एक **काफ़िर** (ग़ैर मज़हबी) बन जाता है। कोई भी ग़ैर मुस्लिम जो सिर्फ़ ये कहे, **"अश्हदो अल ला इलाहा इल्लल्लाह व अशहदो अनन मुहम्मदन अबदुहु व रसूलुह,"** और जाने और इसके मआनी पर यकीन रखे वो फौरन एक मुसलमान बन जाता है। ताहम, बाद में उसे धीरे-धीरे हर मुसलमान के लिए ईमान के छः उसूल और मारूफ़ फराईज़ और हराम को सीखना ज़रूरी है, और मुसलमान जो उन्हें जानते हैं उन्हें उनको सिखाना चाहिए। अगर वो इन्हें नहीं सिखता तो वो इस्लाम से बाहर हो जाएगा और एक **मुर्तदद** बन जाएगा। ये ज़रूरी है कि

अहल अस-सुन्ना के आलिमों के ज़रिए लिखी गई **इल्म अल हाल** की हकीकी किताबों से इन्हें सीखें।

चार सच्चे, सही मसालिक का ईमान या एतिकाद एक जैसा है। इस्लाम में उनके बीच में कोई फर्क नहीं है। वो सारे अहल अस सुन्ना के ईमान रखते हैं। वो जो अहल अस सुन्ना पर यकीन नहीं रखते वो **बिदअत** के लोग यानी **"ला मज़हबी"** बन जाते हैं। वो अपने आपको पाँचवे मसलक का नुमाएंदा कहलाते हैं। उनके ये अलफाज़ सच्चे नहीं हैं। ऐसा कोई **पाँचवा मसलक नहीं है।** आज मज़हब के मुतअलिक इल्म हासिल करने का ज़रिया इन चारों मसालिक में से किसी एक की इल्म अल हाल की किताबों के अलावा और कोई नहीं हैं। हर कोई उस मसलक को चुनता है जो उसके लिए तकलीद करना आसान हो। वो उसकी किताबें पढ़ता है और उसे सीखता है। वो उससे हमआहंग सारे काम करता है, तकलीद करता है, और उसका मेमबर **(तकलीद)** बन जाता है। क्योंकि ये एक शखस के लिए आसान है जो उसने अपने माँ बाप से सुना और देखा उसे सिखना, एक मुसलमान आमतौर पर अपने माँ बाप के मसलक से तअल्लुक रखता है। मसलक एक नहीं बल्कि चार ये मुसलमानों के लिए एक सुविधा है। अपने मसलक को छोड़ने की और दूसरे में शामिल होने की इजाज़त है, फिर भी, नए वाले को पढ़ने और सीखने में सालो लग जाते हैं, और किसी काम का नहीं रहता और बल्कि कई चीज़ें करने में उलझाने पैदा करता है। ये किसी भी तरह जाईज़ नहीं है कि एक बंदा अपने

मसलक को नापसंद करते हुए उसे छोड़े, क्योंकि इस्लामी आलिमों का कहना है कि सलफ़ अस-सालिहीन को नापसंद करना या ये कहना कि वो लाइल्म थे यकीन न करना (कुफ्र) है। हाल ही में कुछ लोग जैसे पाकिस्तान के माऊदूदी और मिस्र के सय्यैद कुत्ब और रशीद रिदा ज़ाहिर हुए। वो और जो लोग उनकी किताबों के ज़रिए धोखे में आए उन्होने कहा कि चारो मसलक एक हो जाने चाहिए और ये कि इस्लाम को इन चारों मसालिक के रूखास को चुनकर और इकट्ठा करके आसान बनाया जाए। वो अपने इस ख्याल को अपने छोटे दिमाग़ औोर कम इल्म से बचाव करते थे। उनकी किताबों पर एक नज़र से इस हकीकत का पता चलता है कि वो तफ़सीर, हदीस, उसूल या फिकह के बारे में कुछ नहीं जानते, और ये कि उन्होने अपनी लाइल्मी अपनी बीमार सोच और झूठी तहरीरों के ज़रिए कीं। मंदरजाज़ेल पर ग़ौर करेंः

1) चारों मसलक के उलेमा कहते हैं, "मुलफिक की कटौती गलत है," यानी, एक वक्त में एक से ज़्यादा मसलक कै पैरवी करते हुए इबादत अदा करना बातिल (नाजाईज़), सही नहीं है, जब किसी भी एक मसलक में ये अदाएगी सही नहीं होता है। एक शख्स जो चारो मसालिक के उलेमा (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम अजमईन) की इतेफ़ाक राए की फरमानरदारी नहीं करता तो वो किसी भी मसलक में नहीं हैं। वो एक ला मज़हबी है। ऐसे ला मज़हबी शख्स के अमाल इस्लाम के हमआहंग नहीं है। वो बेकार है। वो इस्लाम का खेल बना रहा है।

2) मुसलमानों को और उनकी इबादत को एक तरीके पर सीमित करना इस्लाम को मुश्किल बनाता है। अल्लाह तआला और उसके नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) अगर चाहते तो सारी चीज़ें उस एक तरीके को मानते हुए तकलीद की जातीं। लेकिन इंसानी मखलूक पर दया आती है, अल्लाह तआला और उसके पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने हर चीज़ साफ़ ज़ाहिर नहीं की। अहल अस सुन्नत (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम अजमईन) के उलेमा की तआरीहात के नतीजे में मुखतलिफ़ मसालिक वुजूद में आए। जब एक शख्स को किसी मुश्किल का सामना होता है, तो वो अपने ही मसलक में आसान रास्ता चुनता है। बड़ी मुश्किल की हालत में, वो दूसरे मसलक की तकलीद करता है। और उस काम को आसानी से कर लेता है। अगर वहाँ सिर्फ़ एक मसलक होता तो ऐसी सुविधा नहीं होती। ला मज़हबी जो ये सोचते है क वो रूखास को इकट्ठा करके आसान तरीकों का एक वाहिद निज़ाम कायम कर सकते हैं, दरहकीकत, वो ये जाने बग़ैर कि वो किया कर रहे हैं, मुसलमानों के लिए मुश्किलें पैदा करते हैं।

3 इबादत के एक हिस्से कोएक मसलक के मुताविक और दूसरे हिस्से को दूसरे मसलक के मुताविक करने की कोशिस का मतलब है सावका मसलक के ईमाम की तालीम पर भरोसा न करना। जैसे के ऊपर लिखा गया है, कि सलफ़ अस सालिहीन (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम अजमईन) को लाइल्म कहना कुफ़ है।

तारीख कई लोगो की गवाह है जो इबादत में तबदीली करना चाहते थे और जो अहल अस सुन्नत के उलेमा (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम अजमई न) की बेईज़ज़ती करना चाहते थे। ये ज़ाहिर है कि वो लोग जो कहते थे कि मसलक के रूखास को चुन लो और चारों मसालिका को खत्म कर दो उन्होने एम्मात अला मसालिक की किताबों का एक सफ़ह भी सही तरीके से न तो पढ़ा या समझा है। मसालिक को समझने के लिए गहरे इल्म की ज़रूरत है। एक शख्स जो गहरे तौर पर आलिम है वो कभी भी एक जाहिलाना, बेवकूफ़ी वाला रास्ता खोलकर लोगों को बरबादी की तरफ़ नहीं ले जाएगा। लाइल्म और बिदअती लोगो की तकलीद करके जो तारीख के निसाब में ज़ाहिर हुए, अपने आपको अज़ाब में मुबतला करना है। **अहल अस सुन्नत** के उलेमा की तकलीद करके, जो **1400** सालो तक हर सदी में आए और जिनकी तारीफ़ हदीसों में की गई, वो खुशियों की तरफ़ ले जाते हैं। हमें, भी, अपने बुर्ज़गो, उन पाक, सालिह मुसलमानों के, उन शहीदों के जिन्होने अल्लाह तआला के नाम के लिए और इस्लाम को फैलाने के लिए अपनी जाने कुर्बान करीं। उनके सही रास्ते पर मज़बूती से कायम रहना है। और हमें कल के नवाब मुसलहीन की ज़हरीली नुकसानदायक मज़ामीन से धोखा नहीं खाना चाहिए।

बदकिस्मती से, अवदुह काहिरा मेसोलिका लॅज सरवराह के, ज़हरीले ख्यालात मिस्र में जामी अल-अज़हर में हाल ही में फैल गए हैं; इस तरह; मिस्र में **मज़हबी मुसलेहीन** जैसे के रशीद रिदा; अब्द मजीद अस सलीम, काहिरा के

मुफ़ती; महमूद अश शलवत, तनतावी अल जोहरी; अबद र-रज़िक पाशा; ज़की अल मुबारक; फरदि अल-वजदी; अब्बास अक्काद; अहमद अमीद; डॉक्टर ताहा हुसैन पाशा; कासिम अमीन; और हसन अल बनना ज़ाहिर हो गए। इससे भी ज़्यादा बदकिस्मती से, इनको "जदीद मुसलमान उलेमा" माना गया, और उनकी बहुत सारी किताबों को कई ज़बानों में तर्जुमा किया गया। उन्होने कई जाहिल मज़हबी मर्दो और जवान मुसलमानो को सही तरीके से बाहर निकलने का सबब बना दिया।

अज़ीम मुस्लिम आलिम सय्यैद अबदुलहकीम-अरवासी (रहमतुल्लाहि अलैहि), हिजरा की चैदहवीं सदी के मुजदिद ने कहाः "काहिरा के मुफ़ती अबदुह, इस्लाम के उलेमा की अफ़ज़लियत को नहीं समझ पाए। उसने अपने आपको इस्लाम के दुश्मनों को बेच दिया और आाखिरकार एक राहिब और ज़बरदस्त काफ़िर बन गया जिसने इस्लाम को कपट से मसख़ किया।

वो जो कुफ्र या जालसाज़ी में घुस गए, जैसे अबदुह, वो हमेशा एक दूसरे के साथ गुमराह करने में भाग लेते हैं वो जवान मज़हबी आदमी भी उनके बाद आए। उन्होने आफ़ात का बीढ़ा उठाया जिसकी पेशीनगोई हदीस अस शरीफ़ में की गई, **"मेरी उम्मत की बर्बादी फाजिर** (जालसाज़) **मज़हबी हिकमत के आादमियों के ज़रिए आएगी।"**

1323 (**1905** ए. डी) मिस्र में अबदुह की वफ़ात के बाद, उसके ज़रिए मिस्र में किए गए तरबीयत याफ़ता नौसिखिए नहीं बैठे; उन्होने बहुत सारी नुकसानदायक किताबें छपवाई जो एक इलाही लानत और ग़ज़ब झेलने का सबब बनीं। उनमें से एक रशीद रिदा की **मुहाबरात** हैं। इस किताब में उसने अपने मास्टर की तरह, अहल अस सुन्नत के चारो मसालिक पर हमला किया और, मसलक की सोच को आदर्शवादी इख़तलाफ़ात की शक्ल में और इजतिहाद के तरीको और शर्तो को रजअती तनाज़ात के तौर पर गलत ढंग से पेश किया, वो इतना जालसाज़ी में चला गया कि इस्लामी एकता कहने की हद तक तोड़ दिया। उसने आराम से हज़ारों सालो से चारो मसालिका में से एक की तकलीद करते हुए आ रहे लाखों मुसलमानों का मज़ाक बनाया। वो इस्लाम को तबदील करने के लिए उसमें असर ढूँढने में वो इस्लाम से बहुत दूर हो गया। एक चीज़ जो मज़हबी इसलांकारो के दरमियान एक थी वो थी कि वो हर कोई अपने आपको एक आसली मुसलमान औौर वसीह इल्म का इस्लामी आलिम बताता है जो असली इस्लाम और जदीद ज़रूरतों को समझता है। उन्होने उन सच्चे, पाक मुसलमानों को जिन्होने इस्लामी किताबें पढ़ीं और समझीं और जो अहल अस सुन्नत के उलेमा के नकशेकदम पर चले, जिन्हें ये अच्छी खबर दी गई कि वो रसूलुल्लाह (अलैहि स-सलाम) के वारिसो में से हैं औौर जिन्की हदीस अस शरीफ़ में तारीफ़ की गईः **"उनका वक्त सबसे अच्छा है।"** उनको "नकलची जो गंदा सोचते हैं" इस तरह वाज़ेह किया गया। इसलाहकारों की तकरीरें और मज़ामीन ये ज़ाहिर करती हैं के वो इस्लाम

के उसूलों या फिकह की तालीमात के बारे में कुछ नहीं जानते; यानी, वो मज़हबी इल्म से बिल्कुल मुबर्रा हैं और निहायत लाइल्म हैं।हदीस में, **"सबसे ऊँचे लोग वो हैं जो ईमान रखते हैं;" "मज़हबी के उलेमा नबियों के वारिस हैं," दिल का इल्म अल्लाह तआला का पोशिदा असरदार है;" "आलिम का स्दोना एक इबादत है;" "मेरी उम्मत के उलेमा का एहतराम करो! वो ज़मीन पर तारे है;" "फूकाहा बेशुमार है।उनकी संगत में होना एक इबादत है,"** और **"अपने शार्गिद के बीच में एक आलिम अपनी उम्मत के दरमियान एक नबी की तरह है,"** क्या हमारे नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने **13** सौ सालो के अहल अस सुन्त के आलिमो की तारीफ़ की या अबदुह औेर उसके नौसिखियों की, कल के नवाब जो बाद में उठ गए? सवाल का जवाब हमारे आका रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्ल्म) ने दोबारा दियाः **"हर सदी पहली सदी से ज़्यादा खराब होगी।इस तरह कयामत तक ये खराब होती जाएगी!" और "जैसे कयामत नज़दीक होती जाएगी, मज़हबी मरतबे के आदमी ज़्यादा सड़े हुए हो जाएंगे, गधे के सड़े मांस से भी ज़्यादा सड़े हुए।"** ये हदीसें **मुखतसारू तज़किरत अल कुर्तुबी** में लिखी हुई है।सारे इस्लामी उलेमा और हज़ारों औलिया, जिन की रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने तारीफ़ और सराहना की, इत्तिफ़ाक राए से कहते हैं कि वो रास्ता जो दोज़ख से निजअत की अच्छी खबर देता है वही रास्ता उलेमा का है जिन्हें **अहल अस सुन्नत वल जमाअ** कहते हैं, और वो जो सुन्नी राए से ये दोज़ख में जाएंगे, वो भी इत्तिफ़ाक राए से ये कहते हैं कि **तलफीक** (इत्तेहाद), यानी चारो मसालिक के

रूखास को चुनना और इकट्ठा करना और एक झूठा मसलक बनाना गलत और बेतुका है।

क्या एक माकूल शख्स अहल अस सुन्नत के रास्ते की तकलीद करेगा, जिसकी तारीफ़ इस्लाम के उलेमा (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम अजमईन) ने इत्तिफ़ाक राए की, जो हज़ार वर्ष के दौरान आया, या वो उन नाम निहाद तरक्की पसंद, मज़हब लोगों में यकीन रखेगा जो इस्लाम से अंजान हैं और जो पिछले सौ सालो में उभर कर आए?

बहत्तर फिरकों के नामवर और बातूनी, जिन्हें हदीस शरीफ़ ने बताया है कि दोज़ख में जाएंगे, हमेशा अहल अस सुन्नत (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम अजमईन) के उलेमा पर हमला करते रहते हैं और इन बरकती मुसलमानों की मज़म्मत करने में लगे रहते हैं; फिर भी वो आयत और हदीस की तसदीक के साथ जवाबात से बदनाम हो गए हैं। ये देखकर के वो अहले सुन्नत के खिलाफ़ इल्म के साथ नाकाम हैं वो छापे और कत्ल पर शुरू हो गए, हर सदी में उन्होने हज़ारों मुसलमान को कत्ल किया। दूसरी तरफ़, अहल अस सुन्नत के चारो मसालिक के नुमाएंदे हमेशा एक दूसरे से प्यार करते थे और भाई चारे से रहते थे।

रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने ऐलान कियाः **"रोज़ मर्रा की ज़िंदगी के मामले में मुसलमान मसालिक में बटें हैं ये अल्लाह तआला की**

हमदर्दी है [उनके लिए]।" लेकिन रशीद रिदा, जो **1282** (**1865** ए. डी) में काहिरा में पैदा हुआ था और आचानक **1354** (**1935** ए. डी) में काहिरा में मौत हो गई थी, उसके जैसे मज़हबी इसलाहकार ने कहा कि वो चारो मसालिक को एकजुट करके इस्लामी एकता कायम कर सकते हैं। लेकिन हमारे नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने दुनिया के सारे मुसलमानो को ईमान के एक वाहिद तरीके पर एकजूट होने के लिए हुकूम दिया अपने चार खलीफ़ा के सही रास्ते पर। एक साथ काम करके, इस्लाम के उलेमा (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम अजमईन) ने चारो खलीफाओं के ईमान के तरीके को ढूँढा और पढ़ा और उसे किताबों में मुंतकिल कर दिया। उन्होने इस अलबेले तरीके को, जिसे हमारे नबी ने हुकूम दिया, **अहल अस सुन्नत व ल जमाअ** का नाम दिया। दुनिया के सारे मुसलमान **अहले अस सुन्नत** के वाहिद तरीके पर एकजुट हो गए। वो जो **सुन्नत** के वाहिद तरीके चाहते हैं, अगर वो अपने लफ़्ज़ों में संजीदा है, तो वो इस कायम यूनियन में शामिल हो सकते हैं। लेकिन बदकिस्मती से राहिब और ज़िंदीक, जो इस्लाम को कपटी तरीके से खत्म करना चाहते थे, वो मुसलमानों को हमेशा ऐसे झूठे अलफ़ाज़ों जैसे 'एकता' से धोखा देते थे और अपने नारे "हम तआव्वुन लेकर आएंगे," के मुखौटे के नीचे, "ईमान की एकता" को टुकड़ो में बांटते हैं।

हमारे नबी के वक्त से इस्लाम के दुश्मन इस्लाम को फ़ना करने की कोशिश करते रहते थे। आज, राहिब, इश्तराकी, यहूदी और ईसाई मुख्तलिफ़

प्लेन से हमला करते हैं। वो पाखंण्डी मुसलमान भी, जो, जैसे के ऐलान किया गया, दोज़ख में जाएंगे, चाले चलते हैं और सही रास्ते की तकलीद करने वाले, अहले सुन्नत पर बोहतान लगाते हैं, और मुसलमानों को सच्चे रास्ते से भटकाते थे। इस तरह वो अहले अस सुन्नत का खात्मा करने के लिए इस्लाम के दुश्मनों के साथ तआवुन करते थे। इस तरह के हमलें **अंग्रेज़ी/बिटिश** के ज़रिए भी शुरू किए गए, जिन्होने अपने सारे शाही ज़राए, खज़ाने, फौजी ताकतें, बेड़े, सनअत व र्हफ़त, सियासतदान और लेखक अपनी इस बुनियादी जंग में लगा दी। इसलिए उन्होने दुनिया की दो बड़ी मुस्लिम रियास्तो को जो अहले सुन्नत की मुहाफिज़ थीं, जिनके नाम भारत में बाबर शाह गुरगानिया की(मुगल) रियास्त और उस्मानिया इस्लामी सलतन्त थी जो तीन बढे आज़म तक फैली हुई थी, उन्हें खत्म कर दिया। उन्होने सारे मुल्कों में से इस्लाम की कीमती किताबों को फना कर दिया और बहुत सारे मुल्कों से इस्लामी तालीमात का सफ़ाया कर दिया। दूसरी जंगे अज़ीम में कम्युनिस्ट पूरी तरह से हलाक होने वाले थे, जिसने उन्हें अपनी ताकत हासिल करने और दुनिया में सब तरफ़ फैलने में मदद की। **1917** में, बरतानवी वज़ीरे आज़म (**1902-5**) जेम्स बालफोर ने **सीहोनी/यहूदी** तनज़ीम कायम की, जिसने दोबारा एक यहूदी रियास्त फिलिस्तीन में कायम करने के लिए काम किया, मुसलमानो के लिए एक मुकददस जगह, और बरतानवी हुकूमत के ज़रिए मुसलसल हिमायत की वजह से **1366** (**1947** ए . डी) **वहाबी रियास्त** के कियाम का सबब बनीं सऊद के

बेटों को वहीर-ए अरव दिया जो उसने उसमानियों से छीना था।इस तरह उन्होने इस्लाम को गहरा धक्का पहुँचाया।

अबदुर्ररशीद इब्राहिम एफ़ंदी ने तुर्की किताब **आलम-ए-इस्लाम** की दूसरी जिल्द के एक इकतेवास जिसका उनवान "अंग्रेज़ी की इस्लाम के ख़िलाफ दुश्मनी" था में कहा जो इस्तांबुल में **1328** (**1910** ए . डी.) में छपीः "अंग्रेज़ो का सवसे पहला मकसद जितनी जल्दी मुमकिन हो सके मुसलमानों की खिलाफ़त को खत्म करना था।ये उनके ज़रिए योजना बनाई गई थी कि कीमियाई तुर्कियों का उन्होने होसला बढ़ाया उस्मानिया सलतन्त के खिलाफ़ ताकि वो खिलाफत को खत्म कर सकें।उनकी ये खुफ़िया और छल वाली नीयत पेरीस के मुहादे से साफ़ नज़र आई।उन्होने अपनी दिलों की दुश्म्नी लॉज़न के मुहादे में बनाई गई तजवीज़ में ज़ाहिर की, जो **1923** में आयोजित की गई।कुछ भी भेस बदला, और सारी आफ़तें जो भी तुर्कि लोगे पर आईं वो हमेशा अंग्रेज़ो के सवव आई इस्लाम को खत्म करना बरतानवी सियासतदानों अहम सियासी मकसद रहा है, क्योंकि वो हमेशा इस्लाम से डरते हैं।वो भोड़े के वातन का इस्तेमाल करते हैं मुसलमानों को धोखा देने के लिए।ये चालवाज़ और पाखंडी लोगों को बरतानवियों ने इस्लामी आलिमों की तरह पैश किया है।मुख्तसर ये कि, बरतानवी इस्लाम के सवसे वड़े दुश्मन हैं।"

न सिर्फ़ मुसलमान मुल्क सैकड़ों सालों से अंग्रेज़ों के ज़रिए खून से रंगे गए, बल्कि स्कॉच राहिवों ने हज़ारों मुसलमान और मज़हवी आदमियों को

धोखा दिया, उन्हें राहिब बनाया, और इस तरह के खाली अलफ़ाज़ जैसे "इंसानियत की मदद, भाईचारा," से उन्हें इस्लाम से असहमति का सबब बना दिया और वो मर्ज़ी से मुर्तद बन गए। इस्लाम को फना करने के लिए पूरे तौर पर, उन्होने इन मुर्तद राहिबों को औज़ार की तरह इस्तेमाल किया। इस तरह, मुसतफ़ा रशीद पाशा, आली पाशा, फ़ोद पाशा, मिदहत पाशा और तलत पाशा जैसे राहिबों को इस्लामी रियास्तें खतम करने के लिए इस्तेमाल किया गया। जमाल अद दीन अल अफ़ग़ानी, मुहम्मद अबदुह जैसे राहिब और उनके ज़रिए सिखाए गए नौसिखिए बिल्ली के पंजे की तरह थे इस्लामी इल्म को बेर्ह मत और फना करने के लिए। इन राहिब जो मज़हबी मरतबों पर काबिज़ थे के ज़रिए लिखी गई तबाहकुन और तखरीबी हज़ारों किताबों में से, मिस्र के रशीद रिदा के ज़रिए लिखी गई किताब **मुहावरात** बहुत सारी ज़बानों में तर्जुमा की गई और इस्लामी मुल्कों में बाटी गई; इस तरीके के ज़रिए, वो मुसलमानो के मज़हब और ईमान की बेर्हुमती करने की कोशिश करते थे। और ऐसा देखा गया। वो जवान मज़हबी आदमी जिन्होने अहले अस सुन्नत के उलेमा (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम अजमईन) के ज़रिए लिखी गई किताबों को न तो पढ़ा या समझा वो इस लहर के ज़रिए पकड़े गए और अज़ाब में मुबतला हुए और दूसरों पर भी अज़ाब लाए।

मुहावरत किताब ने अहले अस सुन्नत के चारो मसालिक पर हमला किया, **इजमा अल-उम्मा,** इस्लामी इल्म के चार ज़रियों में से एक से इंकार

किया, और कहा कि हर को किताब (कुरआन अल करीम) और सुन्नत (हदीस शरीफ़) में उसने जो नतीजे निकाले हैं उसके ऊपर अमल करना चाहिए; इस तरह, उसने इस्लामी तालीमात को खत्म करने की कोशिश की। (मुसलमान भाईयों को इस किताब की चालों और नुकसानो को बताने के लिए, हमने **1394** (**1974** ए.डी.) में अपने **इस्लाम के दुश्मन को जवाब** तैयाार किया और इसे तुर्की और अंग्रेज़ी में छपवाया।ये भी देकते हुए किताब **खुलासरत अत तहकीक फी बयानि हुकमि त-तकलीद व त-तलफ़ीक** अज़ीम मुसलमान आलिम अबद ग़नी अल-नबुलसी (रहमतुल्लाहि तआला अलैह) के (रहमतुल्लाहि तआला अलैह) के ज़रिए और **सैफ़ अल-अबरार** ***मुहम्मद*** ज़रिए और **हुज्जत-अल्लाहि अला ल-आलमीन** यूसुफ़ अन नभानी ***अबदुल रहमान अस-सिलहटी रहमतुल्लाहि तआला अलैह,*** भारत के उलेमा में से एक के ज़रिए, इस मिज़र किताब के ऐन तरदीदी थी; हम इन किताबों को ऑफ़सेट तरीके से दोबारा छापते हैं और पैश करते हैं।)

हुलासत उत-तहकीक किताब के खात्में में लिखा है एक मुसलमान या तो मुजतहिद बन जाता है या फिर इजतिहाद के मरतबे तक नहीं पहुँच पाता।एक मुजतहिद या तो **मुतलक** (पूरा) या **मुकय्यद** (एक मसलक से राब्ता रखने वाले) है।मुजतहिद मुतलक के लिए दूसरे मुजतहिद की तकलीद करने की इजाज़त नहीं होती; उसे अपने ही इजतिहाद की तकलीद करनी होती है।अगरचे, एक मुजतहिद मुकय्यद के लिए मुजतहिद मुतलक के मसलक के

तरीको की तकलीद करने की इजाज़त होती है; और वो अपने ही इजतिहाद के मुताबिक अमल करता है जिन्है उसने इन तरीकों के मुताबिक अपनाया होता है।

एक शख्स जो मुजतहिद नहीं है वो चारों मसालिक में जो भी चाहे उसकी तकलीद कर सकता है। बहरहाल, एक खास मसलक के मुताबिक अमल करते हुए, उसे उसके सही होने के लिए उस मसलक के ज़रिए ज़रूरी शर्तो का ध्यान रखना होगा। अगर वो इन शर्तो में से किसी एक का भी ध्यान नहीं रख पाए, तो उसका अमल सही नहीं होगा; ये इतिफ़ाक राए से हवाला दिया गया है कि ऐसा अमल बेकार (बातिल) हो जाएगा। अगरचे उसके लिए ये ज़रूरी नहीं के वो अपने मसलक को आला समझे, ये अच्छा है अगर वो ऐसा मानता है। **तलफीक,** यानी कोई अमल या इबादत एक से ज़्यादा मसलक के उसूलों के मुताबिक करना जो एक दूसरे असहमत हों या, उसे ज़्यादा साफ़ रख सकें, इन मसालिक के उन उसूलों को चुनौती दीजिए जो कि एक दूसरे से इन इबादत को अदा करने में असहमत हों,. मतलब कि चारों मसालिक से बाहर चले जाना और एक पाँचवा मसलक बनाना। ये इबादत किसी भी मसलक में सही नहीं है जो एक दूसरे से मिले हुए हैं; ये बेकार हैं और इसका मतलब है कि इस्लाम का एक खेल बनाना। मिसाल के तौर पर, अगर कुछ नजास पानी की एक खास

मिकदार में **होज़े कबीर** से कम और **कुलटेन (होज़ कबीर,** बड़ा पूल, कम से कम **25** मुर्रबा मीटर; **qullatain,** 217.75kg.) में गिर जाती हैं और

अगर पानी का रंग, मज़ा या बू बदलती नहीं और अगर एक शख्स इन पानी से वुज़ू कर लेता है बग़ैर वुज़ू की नीयत किए हुए और अगर वो मुकर्रा वक्त में अपने जिस्म के कुछ हिस्सों को नहीं धोता और अगर वो अपने हाथों को उनके साथ नहीं मलता और अगर वो एक दूसरे के बाद सही नहीं धोता और अगर वो अपना वुज़ू बग़ैर बिस्मिल्लाह कहे शुरू करे, तो इन चारों एइम्मात अल मसालिक में से किसी एक के भी मुताबिक उसका वुज़ू सही नहीं होगा। वो जो कहे कि ये सही है वो पाँचवा मसलक बना लेता है। एक मुजतहिद भी पाँचवी राए नहीं देता चारों मसालिक की इतिफ़ाक राए से असहमति करते हुए। [एक **qullatain** के बराबर पानी की मिकदार **लामतनाही खुशियाँ** के चौथे हिस्से के सातवें बाव में तफ़सील से वाज़ेह किया गया।] सदर अश-शरीअ ने अपनी किताब **तोज़ीह** में लिखा है, "जब दो मुखतलिफ़ राए किसी चीज़ के मुतअल्लिक सहाबत अल किराम से मुंतकिल होती हैं तो, पोस्टेरिअर उलेमा को इतिफ़ाक राए से एक तीसरी राए देने की इजाज़त नहीं थी। वहाँ ऐसे भी वो (आलिम) हैं जो कहते हैं कि हर सदी के उलेमा सहाबत अल-किराम की तरह हैं।" मौला खुसरों (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि) ने अपने काम **मिरात अल-उसूल** में लिखा है, "जब दो मुखतलिफ राए कुछ चीज़ करने के लिए पहली सदी के आलिमों से मुंतकिल होती थी, तो इजमा के मुताबिक इसकी इजाज़त नहीं थी, के तीसरी राए दी जाए। ये कहना सही है कि हर सदी के उलेमा अस सहाबत अल किराम की तरह थे। जलाल अद-दीन अल मिहाली **अल-जलालैन** तफसीर किताब के पहले लेखक **जम अल-जवामी**

अस-सयूती के ज़रिए तफसीर में कहा, "इजमअ के साथ असहमत होना हराम है। कुरआन अल-करीम में इसकी मनाही है। इस वजह से, जिस चीज़ पर सलफ़ अस-सालिहीन असहमत थे उस पर तीसरी राए ज़ाहिर करना हराम है।"

एक शख्स दूसरे, तीसरे या चौथे मसालिक के उसूलों को मानते हुए एक इबादत करे एक दूसरे से नातिफ़ाकी राए रखते हुए वो नाफ़रमाबरदारी है इन मसालिक के इजमअ की; ऐसी इबादत किसी भी मसलक में सही नहीं होगी। यानि, **तलफीक** की इजाज़त नहीं होगी। कासिम इब्न कल्लूबग़ ने **अत-तसहीह** में लिखा, "ये इतिफ़ाक राए से बयान है कि दो मुखतलिफ। इजतिहाद को मानते हुए एक इबादत करना सही नहीं है। इस वजह से, अगर एक शख्स जबकि वो वुज़ू कर रहा हो, अपने पूरे सिर पर अपने गीले हाथ नहीं फैरता और अगर तब उसे एक कुत्ता छू जाए और फिर वो सलात अदा करले, तो उसकी सलात सही नहीं होगी। ये शिहाब उद-दीन अहमद इब्न अल इमाद (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि), एक शाफ़ी-ई आलिम के ज़रिए लिखी गई **तौफीफ़ अल-हुक्काम** किताब में लिखा है, ऐसी सलात इतिफ़ाक राए के मुताबिक गलत होगी।" इमाम मालिक और अल इमाम अश शाफ़ी-ई (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम) के मुताबिक, ऐसे शख्स का वुज़ू और सलात सही नहीं होगा क्योंकि, सावका इमाम के मुताबिक, उसने अपने गीले हाथ अपने पूरे सिर पर नहीं फैरे, बाद के इमाम के मुताबिक, उसने एक कुत्ते को छुआ।

मुहम्मद अल-बग़दादी (रहमतुल्लाहि तआला अलैह), एक हनफ़ी आलिम, अपनी किताबचह **तकलीद** में लिखते हैं, "दूसरे मसलक की नकल करने की तीन शर्ते हैं। सबसे पहली, जिसे इबन हुमाम ने भी अपने काम, **तहरीर,** में लिखा, वो ये कि एक शख्स दूसरे मसलक में एक इबादत के काम को पूरा नहीं कर सकता जो उसने अपने मसलक के मुताबिक शुरू किया। मिसाल के तौर पर, वो एक वुज़ू जो उसने हनफ़ी मसलक के मुताबिक अदा किया उसके साथ वो शाफ़ी-ई मसलक के मुताबिक सलात अदा नहीं कर सकता। दूसरी शर्त, जैसे कि इब्न इमाम के ज़रिए उनकी **तहरीर** अहमद इब्न इद्रीस अल-कराफ़ी से हवाला दी गई, वो ये कि उसके ज़रिए तकलीद किए गए दोनो ही मसलक अदा की गई इबादत को बातिल नहीं मानेंगे; अगर वो, शाफ़ी-ई मसलक की तकलीद करते हुए वुज़ू करता है और अपने हाथ जिस्म के उन हिस्सों पर नहीं मलता जो उसे वुज़ू में धोने चाहिएँ, और फिर अगर वो एक औरत को छू लेता है [जिससे उसे शादी करने की इजाज़त है] और सोचता है ऐसा करके मालिकी मसलक के मुताबिक उसका वुज़ू नहीं टूटा, तो इस वुज़ू के साथ अदा की गई सलात किसी भी मसलक के मुताबिक सही नहीं है। तीसरी शर्त ये है कि किसी को मसालिक के रूखास को तलाश नहीं करना चाहिए।" इमाम अल-नववी और दूसरे उलेमा ने इसी शर्त की अहमियत पर ज़ोर दिया है। इबन हुमाम ने इस शर्त का हवाला नहीं दिया। हसन अश-शसबलाली ने अपनी **अर्लइक्द अल फरीद** में लिखा है, **"वली** (इरादा किए हुए जोड़े के सरपरस्त जो अभी तक बालिग़ नहीं हुए) की मौजूदगी के

बग़ैर हनफ़ी मसलक की तकलीद करते हुए निकाह अदा किया जाए, ये जिसे मालिकी मसलक की तकलीद करते हुए बग़ैर किसी गवाह के अदा कराना, सही है। अगरचे, सरपरस्त और गवाहो दोनो की ग़ैर मौजूदगी में निकाह अदा करना सही नहीं है। क्योंकि आम आदमी के लिए इस तीसरी शर्त का ध्यान रखना बहुत मुश्किल है उन्हें दूसरे मसलक की नकल करने की इजाज़त नहीं जब तक कि ऐसा करने के लिए वहाँशदीद ज़रूरत न हो। ये कहा जाता है कि बग़ैर किसी आलिम से सलाह लिए हुए दूसरे मसलक की नकल/तकलीद करना सही नहीं है।"

इसमाईल अल-नबलुसी (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि) **अद-दरर** की तशरीह की तफसीर के लिए **अल-इकद अल फरीद** से मुराद है और कहा, "कोई एक मसलक से मुंसंलिक/वाबस्ता नहीं रह सकता। उसे अपनी इवादत अदा करने के लिए दूसरे मसलक की भी नकल करनी पड़ेगी। लेकिन तव उसे उस मसलक में उस इबादत के लिए ज़रूरी सारी शर्ते पूरी करनी होगीं। दो इबादात को जो एक दूसरे से राब्ता न रखती हों दो मुखतलिफ़ तरीको से दो मुखतलिफ़ मसलकों की तकलीद करते हुए वो उन्हें अदा कर सकता है।" जब दूसरे मसलक की नकल की जाए तो सारी शर्तो की ज़रूरत का ध्यान रखना इस हकीकत को ज़ाहिर करता है कि मसलक का इत्तिहाद (तलफ़ीक) सही नहीं है।

अवद अर-रहमान अल-इमादी (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि), एक हनफ़ी आलिम ने, अपनी किताब **अल-मुकददिमा** में कहा, "एक शख्स अपने मसलक के अलावा तीनो में से किसी एक की तकलीद कर सकता है अगर वहाँ शदीद ज़रूरत हो। ताहम, उसे उस इबादत के लिए उस मसलक में ज़रूरी शर्तो को पूरा करना होगा। मिसाल के तौर पर एक हनफ़ी जो **qullatain** पानी की मिकदार से जो नजास से भरा है वुज़ू कर रहा है शाफ़ी-ई मसलक की नकल करते हुए, अपने हाथ जिस्म के उन हिस्सो पर फैरने होंगे जिन्हें वुज़ू में धोया जाता है, सलात में इमाम [जमाअत में] के पीछे अल-फातिह पढ़नी होगी, और यकीनी तौर पर तादील-अल-अरकान अदा करने होंगे। ये इतिफ़ाक राए से वाज़ेह हैं कि उसकी सलात सही नहीं होगी अगर वो इन सबको नहीं करेगा।" उनका तबसरा 'अहम ज़रूरत' दूसरे मसलक की नकल करने के लिए ज़रूरत से ज़्यादा है। 'ज़रूरत' से उनकी मुराद नकल के लिए 'ज़रूरत' है; क्योंकि, उलेमा की अकसरियत के मुताबिक, किसी को उसी मसलक को लगातार तकलीद करने की ज़रूरत नहीं है। एक सख्स दूसरे मसलक की तकलीद कर सकता है अगर एक मुश्किल (हर्ज) ज़ाहिर हो जाए अपने मसलक की तकलीद करते हुए। वो सारा जे अब तक लिखा जा चुका है ये दिखाता है कि मसालिक का इत्तिहाद (तलफ़ीक) सही नहीं है।

इबन हुमाम का काम **तहरीर** किसी हवाले को नहीं रखती जो बताए कि तलफ़ीक सही है। मुहम्मद अल-बग़दादी और अल इमाम अल-मनावी ने

लिखा कि इबन-हुमाम ने **फतह अल-कदीर** में कहाः "अपने आपको दूसरे मसलक में मुंतकिल करना एक इजतिहाद या एक सबूत के ज़रि एक दस्तावेज़ का इस्तेमाल करते हुए ये एक गुनाह है। ऐसे शख्स पर ताज़ीर (अज़ाब) नाज़िल होगा। बग़ैर एक इजतिहाद, एक सहारे के मुंतकिल होना और ज़्यादा खराब है। (इस मतन में) मुंतकिल होने का मतलब है कि एक इबादत को दूसरे मसलक के मुताबिक अदा करना। कोई सिर्फ़ ये कहकर कि वो मुंतकिल हो गया बदली नहीं कर सकता। ये वादा कहलाया जएगा, बदली/मुंतकली नहीं। चाहे अगर कोई ऐसा कहे, तो वो उस मसलक की तकलीद नहीं कर सकता। आयत अल-करीमा, **'उनसे पूछो जो इसके बारे में जानते हैं जोकी तुम नहीं जानते,'** हमें हुकूम देती हैं कि उस शख्स से पूछो जो जाना [पुख्ता सोच] जाता है एक उसूल का आलिम (मज़हवी)। आलिमें का एक के मसलक को बदलने के खिलाफ़ मनाही मसालिक के रूखास को इकट्ठा करने की कोशिश को रोकने की नियत से है। कई आलिमों को, हर मुसलमान इजतिहाद की तकलीद कर सकता है जो मुख्तलिफ़ मामलों में आसानी से उस तक आते हैं।" अगर एक मूर्ख कहे कि इबन हुमाम का आखिरी बयान ये ज़ाहिर करता है कि मसालिक का इत्तिहाद सही है, उसका या जववाज़ गलत है, क्योंकि बयान से ज़ाहिर है कि किसी का पूरा अमल एक वाहिद मसलक के मुताबिक है, न की एक से ज़्यादा मसलक की तकलीद के मुताबिक। वो जो एक मसलक को और मज़हवी इसलाहकारों को नहीं मानते जो इसे नहीं समझते वो इबन हुमाम को अपने लिए एक गलत गवाह के तौर पर आगे कर लेते हैं। इसके बरखिलाफ़,

इबन हमाम ने साफ़ तौर से अपने काम **तहरीर** में लिखा है कि मसालिक के इत्तिहाद की इजाज़त नहीं है।

मज़हबी इसलाहकारों ने इबन नुजैम (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि) की तहरीर को तलफ़ीक की इजाज़त की मिसाल के तौर पर इशारा किया है, "कादी-खान के ज़रिए जारी किए गए फतवें में लिखा है कि अगर एक ज़मीन का टुकड़ा जो वक्फ़ को दिया गया वो गावान फाहिश कीमत पर बेच दिया जाए तो, ये गैर कानूनी होगा, अबू यूसुफ़ (रहमतुल्लाहि तआला अलेहि) के मुताबिक, गाबान फाहिश कीमत की वजह से।दूसरी तरफ़, अबू हनीफ़ा के मुताबिक डिप्टी को इसी ग़ाबान फाहिश (हद से दो ज़्यादा) कीमत पर बेचने की इजाज़त है; इस तरह दो इजतिहाद इस बेचने को सही बनाने के लिए मुतहिद हो गए। "अगरचे, इस मिसाल में तल्लफ़ीकए क ही मसलक के अंदर रोनुमा हुई।दोनो फैसले एक ही उसूल के नतीजे हैं।ऐसा दो मसलक की तलफ़ीक के मामले में नहीं हैं।दूसरा सबूत जो दिखाते हैं कि इब्नी न्यजैम ये नहीं कहते कि उनका अपना बयान तलफीक के लिए एवीकार्य नहीं है।" एक शख्स जो एक जमाअत का इमाम बनता हे जिसके सदस्य दूसरे मसलक के हैं (और नमाज़ जमाअत से करा रहे हैं) उस मसलक के भी उसूलों का ध्यान रखना होगा। "जो **बहर-उर-राईक** में मौजूद हैं, एक तफ़सीर जो उन्होने **कंज़** किताव के लिए लिखी। (**खुलासत अत-तहकीक,** आखिरी हिस्सा।) इस नुक्ते

पर हम **खुलासत अत-तहकीक** किताब के आखिरी हिस्से के तर्जुमे को खत्म करते हैं।

मुहम्मद अबद अर रहमान अस-सिलहटी (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि) भारत के एक आलिम, ने अपनी फारसी की किताब **सैफ अल-अबरार अल-मसलूल अल-ल-फुज्जार** में लिखा है, "एक हदीस अश श्रीफ़ की वज़ाहत करते हुए; '**इसे आसान बनाओ! इसे मुश्किल मत बनाओ!**' अल्लामा हाफ़िज़ हसन इबन मुहम्मद अत- तय्यैबी (अत-तय्यैबी) **743** (**1343** ए. डी.) में दमिक्श में फौत हो गए। उनकी किताब का पहला एडीशन भारत में **1300** (**1882** ए . डी.) में छपा।)ने अपनी **मिशकात** की तफसीर में कहा, "एक शख्स जो मसलकों के आसान तरीके ढूँढता है वो एक ज़िंदीक बन जाता है।" खुलासे मेंः

1) हर मुसलमान को चारों में से एक मसलक की तकलीद अपने इबादत या काम को अदा करते हुए करनी चाहिए। किसी आलिम की तकलीद करने की इजाज़त नहीं है जो इन चारों में सो किसी एक भी सुन्नी मसलक में न हो।

2) हर मुसलमान को चारों में से किसी एक की तकलीद करनी चाहिए जिसे वो पसंद करे और आसानी से उस तक आ जाए। वो एक इबादत (या एक अमल) एक मसलक के साथ कर सकता है और दूसरी इबादत दूसरे मसलक के मुताबिक कर सकता है।

3) एक इबादत को एक मसलक से ज़्यादा के मुताबिक करने के लिए, इन मसालिक में किसी एक की सारी ज़रूरयात पूरी करनी होंगी उस इबादत के पक्का होने के लिए। इसको **तकबा** बोलते हैं, और ये अच्छा है। एक शाख्स को उस मसलक की रहनुमाई (**तकलीद**) करनी चाहिए और दूसरे मसालिक की शर्तो को देखना चाहिए। एक मसलक की तकलीद करने की उसे इजाज़त है उसकी सारी शर्तो को देखते हुए। अगर एक शाख्स की इबादत सही नहीं है किसी एक मसलक के मुताबिक जिसकी वो तकलीद करता है, इसे **तलफ़ीक** कहते हैं, जिसकी कभी इजाज़त नहीं होती।

4) कोई एक मसलक के साथ हमेशा जुड़ कर नहीं रह सकता जिसे उसने चुना हो। कोई भी अपने आपको जब चाहे किसी भी वक्त दूसरे मसलक में मुंतकिल कर सकता है। अपने आपको किसी मसलक में डालने के लिए उस मसलक के फिकह की तालीमात को अच्छे सिखने की ज़रूरत है, जो कि इल्म अल हाल की किताबों से सीखी जा सकती है। इसलिए, ये आसान है कि हर वक्त अपने मसलक से जुड़े रहें। अपने आपको मुंतकिल करना, या, एक मामले के लिए, दूसरे मसलक की नकल करना बहुत मुश्किल है। ये सिर्फ़ ज़रूरत की हालत में किया जाना चाहिए, यानी, जब वहाँ हर्ज हो, और इस शर्त पर कि एक शख्स इसकी सारी शर्तो पूरी करेगा क्योंकि दूसरे मसलक में फिकह की तालीम को सीखना बहुत मुश्किल है, फिकह के आलिम जाहिल को यानी, जिनको फिकह का इल्म नहीं है उनको दूसरे मसलक की नकल करने से ममनुअ

कर देते हैं। मिसाल के तौर पर, **बहर अल फतावा** में लिखा है, "अगर हनफ़ी मसलक में एक शख्स के ज़ख्म हो जिसमें से लगातार खून रिस रहा हो और हर इबादत के वक्त उसके लिए वुज़ू करना मुश्किल हो, तो उसके लिए इस बात की इजाज़त नहीं हे कि वो शाफ़ी-ई मसलक में बताई गए तरीके के मुताबिक सलात अदा करे बग़ैर उस मसलक की शर्तो को पूरा किए हुए।" इबन आबिदीन ने "ताज़ीर" के ऊपर सबक में इसे तफ़सील से बताया है। लाइल्मों की इबादत को भ्रषटाचार से बचाने के लिए, अहले सुन्नत के आलिमों (रहमतुल्लाहि अलैहिम अजमईन) ने सिर्फ़ हर्ज के मामले के अलावा उनको दूसरे मसलक की नकल करने की इजाज़त नहीं दी।

अत -तहतावी लिखते हैंः "कुछ तफ़सीर के आलिमों का कहना हे कि सूरत आल-ए-इमरान की **103**वीं आयत, **'अल्लाह तआला की रस्सी को मज़्बूती से पकड़ो,'** का मतलब 'फूकह जो कहते हैं उसे मज़बूती से पकड़ो। लोग जो फिकह की किताबों की तकलीद नहीं करते वो बिदअत में घिर जाते हैं, अल्लाह की मदद से महरूम रह जाते हैं, और दोज़ख की आग में जलाए जाएंगे। ए मोमिनो! इस आयत-ए करीमा पर ध्यान करो और **अहले अस सुन्नत वल-जमात** के ग्रुप से चिपट जाओ, जो खुशी की लहरे देंगे कि वो दोज़ख से महफूज़ हैं। अल्लाह तआला की रज़ा और मदद सिर्फ़ उनके लिए है जो इस ग्रुप में हैं। जो इस ग्रुप में नहीं हैं अल्लाह तआला दोज़ख में उन्हें गुस्सा और अज़ाब नाज़िल करेगा। आज, अहले सुन्नत में होने के लिए चारो में से

एक मसलक की तकलीद होनी चाहिए; वो जो इन चारो में से किसी एक की भी तकलीद नहीं करता वो बिदअती आदमी है और दोज़ख में जाएगा।" (अत-ताहवी की **दुर्र अल-मुख्तार** पर तबसरा, ज़बाइट पर सेकशन।) एक शख्स जो चारों मसालिक के आसान तरकिे इकट्ठे करता है वो चारों में से किसी की भी तकलीद नहीं करता।जैसा के दैखा गया है, कोई भी जो चारों मसालिक में से किसी एक की भी तकलीद नहीं करता ला मज़हबी होता है।कोई जो चारो मसालिक की तलफ़ीक बनाता है, यानी, चारों को मिलाकर, जो मसलक उसे आसान लगे उसके मुताबिक अमल करे, वो भी ला मज़हबी हे।कोई जो चारो मसालिक में से एक की तकलीद करता है लेकिन अहले सुन्नत के लिए ग़ैर यकीनी ईमान रखता है वो ला मज़हबी है।ये तीनो सुन्नी नहीं हैं, ये बिदअत के लोग हैं जो इलहादी (दलाल) की तकलीद करते हैं।सच्चे मुसलमान, बाहरहाल, इन चारों में से एक की तकलीद करते हैं, यानी, सच्चा रास्ता।'

2-अहल अस-सुन्नत का अकीदा

इमाम मुहम्मद अल ग़ज़ाली (रहमतुल्लाहि अलैह) अपनी किताब **किमया-ए-सआदत** में लखते हैंः "जब कोई मुसलमान बनता हैं, तो ये उसका बुनियादी फर्ज़ बन जाता है कि इस जुमले **ला इलाहा इल्लल्लाहु, मुहम्मदुन रसूलुल्लाह** को जाने और उसके मआनी में यकीन रखे।इस जुमले की **कालिमात**

अत-तौहीद कहते हैं। ये हर मुसलमान के लिए काफी है कि बग़ैर किसी शक के कि इस जुमले का मआनी किय उस पर यकीन करे। ये उसके लिए फर्ज़ नहीं कि इसको किसी सबूत के साथ साबित करे या अपने दिमाग़ को मुतमईन करे। रसूलुल्लाह (सल्लाल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने अरब के लोगो को ये हुकूम नहीं दिया था कि जाने या कोई उसके मुतअलिक सबूत दें या ढूँढे और कोई मुमकिन शकूक को वाज़ करें। आपने सिर्फ़ ईमान करने के लिए हुकूम दिया था और शक करने के लिए नहीं। हर किसी के लिए सतही तौर पर इस पर यकीन रखना काफ़ी है। ताहम ये फर्ज़ किफ़ाया है के हर शहर में कुछ आलिम मौजूद हों। इन आलिम के लिए ये वाजिब हैं कि सबूतों को जानें, शकूक दूर करें और सवालो के जवाब दें। वो मुसलमानों के लिए चरवाहों की तरह हैं। एक तरफ़, वो उन्हें ईमान की तालीम देते हैं, जो ईमान की जानकारी हैं और दूसरी तरफ़, वो इस्लाम के दुश्मनों के बोहतानों का जवाब देते हैं।

कुरआन अल करीम कलिमात अत-तौहिद का मआनी बयान करता है और रसूलुल्लाह (सल्लाल्लाहु अलैहि वसल्लम) जो इस में ऐलान से वाज़ेह करते हैं। सारे सहाबत अल किराम ने इन वज़ाहतों को सीखा और जो उनके बाद आए उन्हें भेजा। आलिम जिन्हे सहाबत अल किराम ने आगाह किया उसे बताया, अपनी किताबों में बग़ैर किसी काट छाँट के, उन्हें **अहले सुन्नत** कहते हैं। हर किसी को अहले सुन्नत के एतिकाद को सीखना चाहिए और एकजुट

होना चाहिए और एक दूसरे से प्यार करना चाहिए। खुशियों का बीज इसी एतिकाद और इस एकता में हैं।

अहले सुन्नत के उलेमा ने कलिमात अत-तौहीद के मआनी को मंदरजाज़ेल तरीके वाज़ेह कियाः आदमी ग़ैर मौजूद थे। वो बाद में तखलीक किए गए। उनका खालिक एक हे। वो वाहिद हे जिसने सब चीज़ें तखलीक कीं। तखलीककार एक हे। उसका कोई साथी या सानी नहीं। कोई दूसरा उसके सिवा नहीं। वो हमेशा से मौजूद हे; उसकी मौजूदगी की कोई शुरूआत नहीं। वो हमेशा से मौजूद हे; उसकी मौजूदगी की कोई शुरूआत नहीं। वो हमेशा मौजूद रहेगा; उसकी मौजूदगी का कोई खात्मा नहीं। उसका वुजूद कभी खत्म नहीं होगा। उसकी मौजूदी हमेशा ज़रूरी हे। उसकी गैरमौजूदगी नामुमकिन हे। उसका वुजूद खुद का हे। उसे किसी ज़राए की ज़रूरत नहीं। ऐसा कोई नहीं जिसे उसकी ज़रूरत नहीं। वो वाहिद हे जो सब चीज़ें बनाता हे और उन्हें वुजूद में लाता हे। वो कोई मवाद या चीज़ नहीं हे। वो किसी एक जगह में या किसी माद्धे में नहीं हे। उसकी कोई साख्त नहीं हे और उसे नापा नहीं जा सकता। ये नहीं पूछा जा सकता कि वो कैसा हे; जब हम कहते हैं वो, कोई भी चीज़ हमारे दिमाग़ में नहीं आती या जिसे हम सोच सकें कि वो। वो इनके बरअकस हैं। वो सब उसकी तखलीक हैं। वो अपनी तखलीक की तरह नहीं। वो सारी चीज़ों का बनाने वाला हे जो दिमाग़ में आती हैं, हर भ्रम और भ्रम। न वो ऊपर हे, न नीचे या एक साईड में। उसकी कोई जगह नहीं। हर मखलूक अर्श से नीचे हैं

और अर्श उसके कब्ज़े में है, उसकी कुदरत ए कामल में वो अर्श के ऊपर हे। ताहम इसका मतलब ये नहीं कि अर्श उसे उठाए हुए है। अर्श उसकी हिमायत से वुजूद में और उसकी कुदरत-ए कामल में है। वो अब भी वैसा ही है जैसा अबद में था, अबदी माज़ी में। वो लाज़वाल मुस्तकबिल में भी हमेशा ऐसा होगा जैसा वो अर्श को बनाने से पहले था। उसमें कोई तबदीली नहीं आई उसकी अपनी सिफात है। उसकी सिफ़ात **अस-सिफ़ात अस-सबूतिया** कहलाती है आठ हैः **हयात** (ज़िंदगी), **इल्म** (सब जानने वाला), **सम** (सुनने वाला), **बस्र** (देखने वाला), **कुदरा** (कुदरत रखने वाला), **इरादा** (मर्ज़ी), **कलाम** (आवाज़, लफ़्ज़) और **तकवीन** (तख़लीककार)। उसकी इन सिफ़ात में कभी तबदीली नहीं आई। बदलाव कमी का इशारा हे। उसके पास कोई कमी या खामी नहीं। अगरचे वो अपनी किसी मखलूक से मिलता हुआ नहीं, ये मुमकिन हैं कि उसको इस दुनिया में इतना जान लेना जितना उसने अपने आपको जानने वाला बनाया और आखिरत में देखने वाला। यहाँ वो बग़ैर अंदाज़ा लगाए के वो कैसा हे जाना जाता हे। और वहाँ वो समझ से बाहर तरीके से नज़र आएगा।

अल्लाह तआला ने अपनी इंसानी तखलीक के लिए नबियों (अलैहिम अस सलाम) को भेजा। इन आला लोगो के ज़रिए, उसने अपनी मखलूक को दिखाया कि काम जो खुशियाँ लाएंगे और बरतर नबी(**मुहम्मद** (अलैहि स सलाम, आखिरी नबी हैं। वो ज़मीन पर हर शख्स पाक या ग़ैर मज़हबी, हर

जगह के लिए और हर कौम के लिए नबी बनाकर भेजे गए। वो सारी आलमियत, फरिश्तों और जिन्नातों के नबी हैं। दुनिया के हर कोने में, हर कोई आपकी तकलीद करता है और अपने आपको इस ऊँचे नबी के मुताबिक ढालता है") (**किमया अस सआदा**। मुहम्मद अल ग़ज़ाली (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि) अज़ीम इस्लामी आलिमों में से एक हैंउन्होने हज़ारों किताबे लिखी। उनकी सारी किताबे बहुत कीमती हैं। वो **450** (**1068** ए .डी.) में तूस, यानी मेशद, peria में पैदा हुए और वहाँ **505** (**111** ए .डी) में मौत हो गई।

सय्यैद अबदुलहकीम-ए अरवासी (रहमतुल्लाही अलैहि) (सय्यैद अबदुलहकीम अरवासि बसकला **1281** (**1864** ए .डी.) में पैदा हुए और अंकादा **1362** (**1943** ए .डी.) में रहलत फरमा गए।) ने कहाः "रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वस्ल्लम) के तीन काम थे। सबसे पहला काम बातचीत और कुरआन अल करीम के उसूलों को मश्हूर (**तबलिग़**) करना, यानी, सारी आलमियत को ईमान का इल्म और अहकाम फिकहया को बताना। **अहकाम फिकहया** हुकूम दिए गए अमाल और अमाले ममनुअ पर मुश्तमिल हैं। आपका दूसरा काम कुरआन अल करीम के रूहानी उसूलों को, अल्लाह तआला के खुद के बारे में और उसकी सिफ़ात के बारे में जानकारी सिर्फ़ अपनी उम्मत के सबसे ऊँची के दिलो तक पहुँचाना। आपका पहला काम, तबलीग़, इस दूसरे काम के साथ उलझन में नहीं आना चाहिए। ला मज़हबी दूसरे काम को मना करते

हैं।लेकिन, अबू बक रज़ी अल्लाहु अन्ह) ने कहा 'मैने दो किस्म की जानकारी रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्ल्म) से सीखी।मैने उनमें से एक बता दी।अगर मैने दूसरी बता दी तो तुम मुझे कत्ल कर दोगे।हज़रत अबू हुरेरा के ये अलफ़ाज़ **बुखारी, मिशकात, हदीका** किताबों में, और **मकतूबात** के **267** और **268** नवरों के खतूत में लिखें हुए हैं।तीसरा काम उन मुसलमानों की तरफ़ हिदायत थी जो अहकाम फिकहया की सलाह और खुतबात की फरमावरदारी नहीं करते थे।चाहे अहकाम फिकहया की फरमावरदारी कराने के लिए उन पर ताकत क्यों न लगा दी जाए।

रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के बाद, चारो खलीफ़ा (रज़ी-अल्लाहु अनहुम) में हर एक ने इन तीनो कामों को बखूबी अंजाम दिया।हज़रत हसन (रज़ी अल्लाहु अनह) के दौर में फितने और बिदअत बढ़ गई।इस्लाम तीन वर्रे आज़ामों तक फैल गया था।रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की रूहानी रोशनी ज़मीन से दूर हटने लगी थी।सहावत अल किराम (रज़ी अल्लाहु अन्हुम) की तादाद में कमी होने लगी थी।बाद में, कोई भी इस लायक नहीं था जो इन तीनो कामों को खुद एक साथ कर सके।इसलिए, इन कामों को लोगो के तीन गुपो के ज़रिए शुरू किया गया। ईमान और अहकाम फ़िकहया की वातचीत के लिए मज़हबी रहनुमाओं को तर्कुर किया गुया जिन्हें **मुजतहिद** बुलाया गया इन मुजतहिद के दरमियान जो ईमान की इशाअत करते थे उन्हें **मुताकलिमून** बुलाया गया, और जो फिकह की

इशाअत करते थे उन्हें **फुकह** बुलाया गया। दूसरा काम, यानी, मुसलमान कुरआन अल करीम के रूहानी उसूलों को हासिल करने के लिए तैयार थे, वो अहले बैत (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम) के बारह इमामों और तसव्वुफ़ के अज़ीम आदमियों को सौंप दी गई। सिरी)(सरी) अस सकती (डी **251/876** बग़दाद में) और अल जुनेद अल बग़दादी (बी. **207/821** और डी. **298/911** बग़दाद में) उनमें से दो थे (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम)।

तीसरा काम, मज़हबी उसूलों को ताकत और हाकमियत के ज़रिए लागू कराना था जो सुलतानों यानी हुकूमतों को सौंपा गया। पहले दर्जे के सेकशन को मसालिक कहा गया। दूसरे दर्जे के सेकशन को **तरीकास** (अहले सुन्नत के उलेमा ने हमारे नबी (अलैहि स सलाम) के इस दूसरे काम को बारह इमामों (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम) से इल्म अत-तसव्वुफ़ जमा करके नहीं रखते। इससे ज़ाहिर होता है कि उनका बारह इमामों से कोई राबता नहीं। अगर वो अहले बैत की तकलीद करते, तो उन्हें हमारे नबी के इस दूसरे काम को बारह इमामों से सीख लिया होता और उनमें बहुत सारे तसव्वुफ़ के आलिम और औलिया होते। लेकिन वहाँ ऐसा कोई नहीं, और इसके अलावा, वो ये भी यकीन नहीं करते कि ऐसे आलिम मौजूद हो सकते थे। ये ज़ाहिर है कि बारह इमाम अहले सुन्नत के इमाम हैं। ये अहले सुन्नत हैं जो अहले बैत को प्यार करते हैं और बारह इमामो की तकलीद करते हैं। इस्लाम का आलिम बनने के लिए एक शख्स को इन दोनो कामों में रसूलुल्लाह (अलैहि स-सलाम) का

वारिस होना चाहिए। यानी, एक शख्स को इल्म की इन दोनो शाखाओं में माहिर होना चाहिए। 'अबद अल-ग़नी अन नेबलसी' (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि), ऐसे ही एक आलिम थे, अपने काम **अल-हदीकत अन-नदिय्या** के सफ़ह **233** और **649** में उन्होने कुरआन अल करीम के रूहानी उसूलों को वाजेह करने वाली हदीसों का हवाला दिया और इस बात की तरफ़ इशारा किया कि इन उसूलों से कुफ्र करना लाइल्मी और अज़ाब का इशारा है।) कहा गया, और तीसरे को **हुकूक** (कानून) कहा गया। मसालिक जो ईमान के बारे में बताते हैं वो **एतिकाद के मसालिक कहलाते हैं**। हमारे नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने वाज़ेह किया कि मुसलमान तहत्रर ग्रुपों में बंट जाएंगे ईमान के मामले में, और इनमें से सिर्फ़ एक सही होगा और बाकी सारे गलत। और ये हो गया है। वो ग्रुप जो सही रास्ते पर होने की खुश्खबरी सुनाता है वो **अहले -सुन्नत व ल-जमात** कहलाता है। बाकी बहत्तर ग्रुप, जो गलत बताए गए, वो **बिदअत के ग्रुप** हैं, यानी इलहादी। उनमें से कोई भी कफ़िर नहीं होगा। वो सब मुसलमान होंगे। लेकिन, अगर एक मुसलमान जो ये कहे वो इन बहत्तर ग्रुपों में से एक से राब्ता रखता है कुरान अल करीम जो बातें बताई गई हैं उनमें से किसी एक पर, हदीस शरीफ़ या मुसलमानों के दरमियान फैलाई गई, उनमें से किसी एक पर भी यकीन करता है तो वो एक काफ़िर बन जाता है। आज बहुत सारे लोग हैं जो मुसलमानों का नाम रखते हुए भी, अहल अस सुन्नत के मसलक से फिरचुके हैं और काफ़िर या गैर-मस्लिम बन चुके हैं। हज़रत अबदुलहकीम एफंदी के हवाले यहाँ खत्म हुआ।

मुसलमान परवरिश से लेकर कब्र तक सीखता रहता है। तालीम जो मुसलमानो को सखिनी है वह **अल-उलूम अल इसलामिया** (इस्लामी साईंस), जो दो हिस्सों पर मुश्तिमिल हैः **1** अल उलूम अन-नकलिया, **2** अल-उलूम अल-अकलिया।

1 अल-उलूम अन-नकालिया (मज़हबी साईंस)ः ये उलूम अहले सुन्नत के उलेमा की किताबों को पढ़कर हासिल किया जा रहा है। इस्लाम के उलेमा ने ये उलूम चार मुख्य ज़राए से लिया। ये चार ज़राए **अल-अदिलात अश शरिया** कहलाए जाते हैं। वो **कुरआन अल करीम, अल हदीस अश शरीफ़, इजमअ अल उम्मा** और **कियास अल-फुकह** हैं।

मज़हबी उलूम आठ अहम शाखाओं पर मुश्तमिल हैंः

1 इल्म अत-तफ़सीर (कुरआन अल-करीम के उलूम की तश्रीह)। इस शाखा के माहिर को **मुफस्सिर** कहा जाता है; वो गहराई से सीखा हुआ आलिम होता है जो अल्लाह तआला के लफ़्ज़ों के मआनी को समझने के काबिल होता है।

2 इल्म अल-उसूल अल हदीस। **ये** शाखा हदीस की दर्जा बंदी से तअल्लुक रखती है। मुख्तलिफ़ किस्म की हदीसें **सआदत-ए-अबदिया** के दूसरे हिस्से के, छठे सबक में वाज़ेह हैं।

3 इल्म अल-हदीस। ये शाखा हमारे नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की हिदायतें (हदीस), बरातव (सुन्नत), और अलाक (हॉल) को बहुत बारिकी से मुतालअ करती हैं।

4 इल्म अल-उसूल अल-कलाम। ये शाखा कुरआन अल-करीम और अल हदीस अश-शरीफ़ से लिए गए इल्म अल-कलाम के तरीको का मुतालअ करती हैं।

5 इल्म अल-कलाम। षे शाखा कलिमात अत-तौहीद और कलिमात अश-शहादत और ईमान की छः बुनियादी बातों के मुतालअ को शामिल करती हैं, जो इन पर मुवनी हैं। ये तालीमात दिल से यकीन की जाती हैं। कलाम के आलिम आमतौर पर इल्म अल उसूल कलाम और इल्म अल कलाम को एक साथ लिखते हैं। इसलिए, आम इल्म की इन दो शाखाओ को एक वाहिद शाखा की तरह लेते हैं।

6 इल्म अल-उसूल अल-फिकह। ये शाखा कुरआन अल-करीम और हदीस अश शरीफ़ से फिकह के तरीको को निकालती हैं।

7 इल्म अल-फिकह। ये शाखा **अफाल अल मुकल्लफीन** का मुतालअ करती हैं, यानी, ये बताती हैं के जो समझदार और बालिग़ हैं वो जिस्म के मामले में किस तरह अमल करें। ये जानकारी जिस्म के लिए ज़रूरी हैं। अफ़ाल अल-मुकल्लफ़ीन के आठ सेकशन हैंः फर्ज़, वाजिब, सुन्नत, मुसतहाब, मुबह,

हराम, मरूह और मुफ़सिद। फिर भी, ये तीन ग्रुप में मुखतसिर तौर पर दर्जो बंद की जाती हैंः अमाल-ए हुकूम, अमाल ए ममनुअ, अमाल की इजाज़त (मुबह)।

8 इल्म अत-तसव्वुफ़। इस शाखाा को **इल्म अल अखलाक** भी कहते हैं। ये सिर्फ़ उन चीज़ों को वाज़ह नहीं करती जो हम करते हैं और जो हम नहीं करते दिल के साथ बल्कि यकीन को दिली वनाती है, और मुसलमानों का इल्म अल फिकह में सीखाई गई फर्ज़ को करने में आसानी करते हैं और उसको मअरिफ़ हासिल करने में मदद करती है। ये हर मुसलमान आदमी या औरत के लिए फर्ज़ -ए-ऐन हैं, कलाम, फिकह और तसव्वुफ़ को इन आठ शाखाओं में से जितना ज़्यादा ज़रूरी हो उतना सीखना, और इनको न सीखना एक गलती, एक गुनाह है। (**अल-हदीका,** सफ़ह **323** और **रादद अल-मोहतार** के प्रस्तावना में) **अल-उलूम अल-अकलिया** (तर्जुबाती उलूम भी कहा जाता है)ः ये उलूम दो ग्रुप में बटा हैः फनी उलूम और अदवी उलूम। मुसलमान के लिए साईंस इन उलूम को सीखना फर्ज़ किफाय है। इस्लामी उलूम के लिए, जितना ज़रूरी हो उतना सीखना फर्ज़ ऐन है। जितना ज़रूरी है उससे ज़्यादा सीखना, यानी, इस्लामी उलूम में माहिर हो जाना ये फर्ज़ किफ़ाया है। अगर शहर में कोई आलिम न हो जो ये उलूम जानता हो, तो सारे शहरी और सरकारी हुकाम गुनाहगाह होंगे।

वक्त के अमल में मज़हबी तालीमात में कोई तबदीली नहीं हुई। इल्म अल कलाम पर बोलते हुए एक गलती या गुनाह कर देना कोई उज़र नहीं बल्कि एक जुर्म है। फिकह के मामले में, इस्लाम के ज़रिए दिखाए गए मुख्तलिफ़ हालतें और सुविधाओं का फाएदा उठाया जा सकता है जब किसी के पास इस्लाम के ज़रिए दिखाए गए उज़र हों। इस बात की कभी इजाज़त नहीं हो सकती कि मज़हबी मामलों में काँट छाँट या कोई तरमीम की जाए किसी के नज़रिए या राए के मुताबिक। ये किसी को भी इस्लाम से बाहर करने का सबब बन सकता है। अल-उलूम अल अकलिया में तबदीली, बहतरी और तरक्की की इजाज़त है। ये ज़रूरी है कि उनकी तलाश्डा खोज के ज़रिए तरक्की की जाए और चाहे तो गैर-मुस्लिमें से सीख कर भी।

मंदरजाज़ेल लेख **अल-मजमूअत अज़ ज़हदिया** किताब से बयान है। इसे साबका वज़ीरे तालीम, सय्यैद अहमद ज़ूहदू पाशा (रहमतुल्लाहि तआला अलैह) के ज़रिए इकट्ठा किया गयाः

'फिकह' का लफ़ज़, जब 'फकिह यफ़कह' की शक्ल में इस्तेमाल हो, यानी, चौथी किस्म में, मतलब जानना, समझना। जब ये पाँचवे ज़मरे में इस्तेमाल हो, इसका मतलब है, जानना, समझना इस्लाम को। इल्म अल फिकह में एक

आलिम को **फकीह** कहते हैं। इल्म अल फिकह उन आमाल के साथ डील करती है, जिसे लोग करते हैं और जिन्हें लोग नहीं करते। फिकह का इल्म कियास से

बना हुआ है। सहाबत अल-किराम और मुजतहीद जो उनके बाद आए उनकी आम सहमति को **इजमअ अल उम्मा** कहते हैं। मज़हब के उसूल कुरआन अल करीम, हदीस अश शरीफ़ और इजमअ अल उम्मा से किए गए उन्हें **कियास अल-फुकहा** कहते हैं। अगर ये कुरआन अल करीम या हदीस शरीफ़ से समझ न आए कि क्या एक अमल हलाल (लाईज़) था या हराम (ममनुअ), फिर इस अमल को दूसरे अमल के साथ तुलना करो जो जाना हुआ है। इस तुलना को **कियास** कहते हैं। कियास करने के लिए बाद के अमल की ज़रूरत एक ही अनसर हो जो साबका अमल को जाईज़ या ममनुअ बनाए। और ये सिर्फ़ उन गहरे उलेमा के ज़रिए इंसाफ़ किया जाएगा जिन्होने इजतिहाद के मरतबे को हासिल किया हो।

इल्म अल-फिकह बहुत बरनीह हैं। इसकी अहम डिविजन हैंः

1 इबादत, ये पाँच उप विभाजनों से बना हैः सलात (नमाज़), सौम (रोज़ा), ज़ुकात, हज, जिहाद। हर एक के कई दर्जे हैं। जैसे के देखा गया है, जिहाद के लिए तैयारी करना एक इबादत है। हमारे नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने वाज़ेह किया के इस्लाम के दुश्मनों के खिलाफ़ जिहाद दो किस्म का थाः अमाल के ज़रिए और लफ़ज़ो के ज़रिए। अमाल के ज़रिए जिहाद के लिए तैयारी करते हुए नए हथियारों को कैसे बनाया जाए और कैसे इस्तेमाल किया जाए सीखना फर्ज़ है। जिहाद रियास्त के ज़रिए किया जाता है। ये लोगो के लिए फर्ज़ हैं कि जिहाद में रियास्त के कानून के मुतअल्लिक हुकूम को

फरमाबरदारी करते हुए उसमें शामिल हों।आजकल, दुश्मन इशाात, तहरीक तसावीर, रेडियो नशरयात और प्रचार के हर ज़रिए से हमला कर रहे हैं दूसरी किस्म की जंग काफ़ी बढ़ चुकी हे; इसलिए इस मैदान में दुश्मनो के खिलाफ़ खड़े होना भी जिहाद है।

2 मुनाकहात, उप विभागो से बना हे, जैसे के शादी, तलाक, गुज़ारा भत्ता, और वहुत से दूसरे [**सआदत-ए-अबदिया** किताव में तफ़सील से लिखें हैं]।

3 मुआमलात, कई उप विभागों से बने हुए, जैसे के खरीद, फरोख्त, किराया, मुश्तरका मिलकियत, सूद, मिरास वग़ैराह।

4 उकूबात (penal code), पाँच उपविभागो से बनी हुईः किसास (लेक्स टेलिअढोनिस), सिकत (चोरी), ज़िना (fornication और adultery), काज़ी (एक नेक औरत पर हूश का इल्ज़ाम लगाना) और रिददा (एक विदअती बनने का मामला।)

हर मुसलमान के लिए फिकह के इबादात के हिस्से को सीखना फर्ज़ है।मुनाकहात और मुआमलात को सीखना फर्ज़ किफ़ाया है; दूसरे लफ़ज़ों में, जिन्हें उनसे कुछ करना उन्हें उसको ज़रूर सीखना चाहिए।इल्म अत तफ़सीर, इल्म अल हदीस और इल्म अल कलाम के वाद सवसे ज़्यादा ताज़ीम वाला इल्म अल फिकह है।मंदरजाज़ेल छः हदीसें फिकह और फकीहः रहमतुल्लाहि तआलाा अलैहि अजमईन की इज़्ज़त की निशानदही करने के लिए काफ़ी हैं

‘अगर अल्लाह तआला अपने किसी बंदे पर रहमतें नाज़िल करना चाहता हैं, तो वो उसे फकीह बना देता है।’

‘अगर एक शख्स फकीह बन जाता है, अल्लाह तआला जो वो चाहता है और उसकी रोज़ी ग़ैर मुतवकअ ज़रियों से भेज देता है।’

‘एक शख्स जिसके बारे में अल्लाह तआला ने कहा है

“सबसे बरतर” वो मज़हब में एक फकीह है।’

‘शैतान के खिलाफ़, एक फकीह एक हज़ार आबिदों (वो जो बहुत इबादत करते हैं) **से ज़्यादा बहादुर है।’**

‘हर चीज़ की बुनियादी उसका सुतून मज़हब का बुनियादी सुतून फिकह का इल्म है।’

‘सबसे अच्छी और कीमती इबादत फिकह को सीखना और पढ़ाना है।’

इमाम अल आज़म अबू हनीफ़ा (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि) की बरतरी भी इन हदीसों से समझी जा सकती है।

हनफ़ी मसलक में इस्लाम के उसूल अवदुल्लाह इवन मसूद (रज़ी अल्लाहु अनह) के साथ एक कढ़ी की तरह शुरू हुए, जो कि एक सहावी थे।अल-इमाम अल आज़म अबू हनीफ़ा (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि),

मसलक के बानी, ने फिकह की तालीम इम्माद से ली, और हम्माद ने इब्राहिम अन नखाई से ली। इब्राहिम अन नखाई को अलकमा ने पढ़ाया, और अलकमा ने अबदुलाह इबन मसूद के नीचे तालीम हासिल की जो रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के ज़रिए पढ़ाए गए।

अबू यूसुफ़, इमाम मुहम्मद अश-शैबानी, ज़फर इबन हुज़ेल और हसन इबन ज़ियाद सब अल इमाम अल आज़म के शार्गिद थे (रहि माहुम-अल्लाह)। इनमें से इमाम मुहम्मद ने इस्लामी तालीमात पर कोई हज़ार के करीब किताबें लिखीं। वो **135** ए . एच में पैदा हुए और इरान, रए में **189** (**805** ए .डी) में फौत हो गए। क्योंकि अल इमाम अश शाफ़ी-ई, उनके शार्गिदों में एक, की माँके साथ उनकी शादी हुई थी, तो उनकी मौत के बाद सारी किताबें शाफ़ी-ई के पास छूट गई, इस तरह शाफ़ी-ई का इल्म बढ़ गया। इस वजह से अल इमाम अश शाफ़ी-ई (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि) ने कहा, ' मैं कसम खाता हूँ कि मेरा फिकह का इल्म इमाम मुहम्मद की किताबें पढ़कर बढ़ा। वो जो अपने फिकह के इल्म को गहरा करना चाहते हैं उन्हें अबू हनीफ़ा के शार्गिददों की सोहबत में रहना चाहिए।' और एक बार उन्होने कहा, 'सारे मुसलमान अल इमाम अल अज़ाम के घरेलू बच्चों की तरह हैं।' यानी, जैसे एक आदमी अपने बीवी और बच्चों के लिए कमाता है, अल इमाम अल आज़ाम ने इसे अपने ऊपर लिया और मज़हबी इल्म को खोजा जिसे लोगों को

अपने मामलात में ज़रूरत थी।इस तरह, उन्होने सख्त मेहनत की बहुत कुछ मुसलमानों के लिए छोड़ा।

अल इमाम अल-आज़ाम अबू हनीफ़ा (रहमतुल्लाहि अलैहि) ने फिकह की तालीम को इकट्ठा किया, इसे शाखाओ और ज़ेली शाखाओं में दर्जा बंदी की, और उसके लिए उसूल (तरीके) मरतकिब किए।उन्होने एतिकाद का इल्म भी इकट्ठा किया जैसा कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने और अस सहावत अल किराम (रिज़वान अल्लाहि अलैहि अजमईन) ने तबलीग़ की, अपने हज़ारों शार्गिदों को उन्हें सीखाया उनके शार्गिदों में से कुछ इल्म अल कलाम के माहिर बन गए, यानी, ईमान की तालीमात में।उनमें से अबू बक्र अल जुरजानी इमाम मुहम्मद अश शैबानी के शार्गिदों में से एक मश्हूर हुए।और अबू नसर अल-इयाद, उनके शार्गिदों में से एक ने अबू मनसूर अल-मातरीदी को इल्म अल-कलाम में तालीम याफ़ता किया।अबू जैसे के वो अल इमाम अल आज़म (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि) से आई हैं।बिदअतियों एतिकाद को जमाया।दूर दूर तक इसे वस्वीह तौर पर फैलाया।वो **333** (**944** ए . डी) में समरकंद में फौत हो गए।ये अज़ीम आलिम और दूसरे आलिम अबु ल-हसन अल-अशारी अहल अस- सुन्नत के **एतिकाद के मसालिक के इमाम** कहलाए जाते हैं।

फिकह के आलिम सात दर्जो में ग्रुप किए गए हैं। कमाल पाशा ज़हद अहमद इबन सुलैमान एफंदी (रहमतुल्लाहि तआला अलैह) ने अपने काम वक्फ़ अन-नियात, में इन सात दर्जो को मंदरजाज़ेल वाज़ेह कियाः

1 इस्लाम के मुजतहिद, जिन्होने मज़हब के चारों ज़रियों से उसूलों के तरीके और उसूल हासिल किए (आदिल्ला-ए-अरबा) और उसूलों को अपने कायम किए हुए उसूलों के मुताबिक माख्रूज किया। चार **अइम्मात अल-मसालिक** इन में से थीं।

2 एक मसलक में मुजतहिद, जो, मसलक के इमाम के ज़रिए तैयार किए गए उसूलों की ताकलीद करते हैं, चारों ज़रियों से कवानीन माख्रूज़ करते हैं। वो हैं इमाम अबू यूसुफ़, इमाम मुहम्मद, वगैराह (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम अजमईन)।

3 मामलों (मसअला) पर मुजतहिद, जो मसलक के बानी की तरफ़ मामलात के लिए निमटाए नहीं गए, उन्होने मसलक के तरीको और मामलात का इस्तेमाल करते हुए कवानीन माख्रूज़ किए। अभी तक ऐसा करने में, उन्हें इमाम की तकलीद करनी पड़ती थी। वो अत-तहावी (**238-321** ए . एच . मिस्र में), हस्साफ़ अहमद इबन उमर (डी . **261**, बग़दाद में), अबदुल्लाह इबन हुसैन अल-करखी (**340**), शमस अल-अइम्मा अल-हलवानी (**456**, बुखारा में), शमस अल-अएम्मा अस-सरहसी (**483**), फख़र-उल इस्लाम 'अली इबन

मुहम्मद अल-पज़दवी (**400-482**, समरकंद में), कादी खान हसन इबन मनसूर अल-फरग़ानी (**592**), वग़ैरह (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम अजमईन) थे।

4 असहाब अत-तखरीज, जो इजतिहाद को काम में लेने के काबिल न थे। वो आलिम थे जो मुख्तसिर तौर पर मुजतहिदों से हासिल किए गए कवानीन को मुख्तसिर तौर पर वाज़ेह बयान करते थे। हसाम अंद-दीन अर-राजी अली इबन अहमद (ड़ी**593** ए एच . दमिक्श में) उनमें से एक थे। उन्होने (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि) **अल-कुदरी** के लिए एक तफ़सीर लिखी।

5 अरबाब अत-तरजीह, जिन्होने मुजतहिदों से आई हुई कई रिवायत (मुजतहिद की रिवायत या राए बयान करने के तौर पर) में से एक को तरजीह दी। वो अबु ल हसन अल-कुदूरी (**362-428** ए . एच, बग़दाद में) और बुरहान अद दीन अली अल-मरग़नानी, **अल-हिदाया** के लेखक, जिन्हें चंगेज़ के सिपाहियों ने बुखारा कत्ले आम में **593** ए . एच [**1198** ए . डी] में शहीद कर दिया था, सब थे।

6 जिन्होने अपनी मज़बूती के एहतराम के लिए एक तरतीब से एक मामले के बारे में मुख्तलिफ़ रिवायत लिखीं वो मुकल्लिद कहलाते हैं। वो अपनी किताबों में कोई मना की हुई रिवाया को नहीं शामिल करते। अबूल-बराकत अबदुल्लाह इबन अहमद अन-नसफ़ी (डी . **710** ए . एच), **कंज़ अद-दकाईक**

के लेखक, अबदुल्लाह इबन महमूद अल- मसूली (डी . 683), **मुखतार** के लेखक; बुरहान अश- शरीअ महमूद इबन सदर अश-शरीअ उबैद-अल्लाह (डी . 673), **अल-विकाया** के लेखक; और इबन अस- सा आती अहमद इबन अली अल-बग़दादी (डी . 694), . **मजमअ अल-बहतरीन** के लेखक, उनमें से कुछ थे। (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम अजमईन)।

7 वो भी मुकल्लिद थे फिकह के आलिमों में शुमार किए जाते थे क्योंकि जो वो पढ़ते थे उसे समझ सकते थे, और मुकल्लिदों को उन्हें वाज़ेह करते थे जिन्हें वो समझ नहीं पाते थे।)जो कमज़ोर रिवायत को हकीकी वालो से इमतियाज़ करने में नाकांबिल हैं।

3-अल-इमाम अल-आज़म अबू हनीफ़ा (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि)

कामूस अल-आलम किताब से रिवायत हैः अल-इमाम अल आज़म अबू हनीफ़ा का नाम नोमान था। उनके बाप का नाम साबित था। उनके दादा का नाम भी नोमान था। वो अहले सुन्नत के चार बड़े इमामों में पहले थे। **'इमाम'** का मतलब है गहराई से सीखा हुआ आलिम। वो मुहम्मद (अलैहि स-सलाम) के शानदार मज़हब के अहम सुतूनों में से एक थे। वो फारसी की काबिले ज़िकर नसल में से थे। उनके दादा ने इस्लाम को गले लगाया वो **80**

(**698** ए .डी .) में कूफ़ा में पैदा हुए। वो अनस इबन मालिक, अबदुल्लाह इबन अबी ओफ़ा, सहल इबन साद अस-सैदी और अबू अल-फ़ज़ल आमिर इबन वासिला, चार सहाबियों (रज़ी अल्लाहु तआला अनहुम) को दौर देखा। उन्होने इल्म अल-फिकह को हम्माद इबन अबी-सुलैमान से सीखा उन्होने कई काबिले ज़िकर ताबईन की और इमाम जाफ़र अस-सादिक रहमतुल्लाहि तआला अलैह की सोहबत हासील की। उन्हें बेशुमार हदीसें याद थीं। उनकी परवरिश इस तरह हुई थी कि उन्हें एक आदा जज बनना था, लेकिन वो एक इमाम अल मसलक बन गए। वो एक आला और हैरत अंग्रेज़ गहरी अकल के मालिक थे। इल्म अल-फिकह में, थोड़े ही अरसे में उन्होने बेमिसाल ग्रेड हासिल किए। उनका नाम और शौहरत दुनिया भर में हो गई।

यज़ीद इबन अमर, ईराक का गर्वनर मरवान इबन मुहम्मद चौदहवाँ और आखिरी उमय्यद खलीफ़ा के दौर में, जो मरवान इबन हकम (रहमतुल्लाहि तआला अलैह) का पौता और जो खिलाफत ल्होने के पाँच साल बाद मिस्र में **132** (**750** ए डी) में कत्ल कर दिया गया, उसने अबू हनीफ़ा (रहमतुल्ल्लाहि तआला अलैह) को कूफ़ा की कानूनी अदालत का जज बनने की तजवीज़ दी। लेकिन, चूँक उनके पास जितना ज़ुहुद, तकवा और वरा था उतनी ही तालीम और अकल थी, तो उन्होने इंकार कर दिया। उनको डर था कि वो इंसानी हुकूक की हिफ़ाज़त नहीं कर पाएंगे इंसानी कमज़ोरियों की वजह से। यजीद, के हुकूम से, **110** सिर पर कोढ़े लगाए गए। उनका मुबारक चेहरा

और सूज गया। दूसरे दिन, यज़ीद इमाम को बाहर ले गया और अपनी पेशकश दोबारा उन्हें देकर ज़ुल्म किया। इमाम ने कहा, “मुझे सलह करने दो ,” और जाने की इजाज़त माँगी। वो मुबारक शहर मक्का चले गए और वहाँपर पाँच या छः साल रहे।

अब्बासी खलीफ़ा अबू जाफ़र मनसूर (रहमतुल्लाहि तआला अलैह) ने **150** ए . एच में [**767** ए . डी.] में सुप्रिम कार्ट के अपील के चीफ़ होने के लिए हुकूम दिया। उन्होने उसे मना कर दिया और उन्हों जेल में डाल दिया गया। उन्हें हर दिन दस कोढ़े ज़्यादा मारने की रज़ा मिली। जब कोढ़े की तादाद **100** पहुँच गई, वो शहीद हो गए। अबू साद मुहम्मद इबन मनसूर अल-खावारिज़मी (रहमतुल्लाहि तआला अलैह), मलिकशाह (**447-485** ए . एच, तीसरे सतजुकी सुल्तान और सुल्तान अलपरसलन के बेटे) के विज़ीरों में से एक ने, उनकी कब्र पर एक खुबसूरत गुंबद बनवाया। बाद में, उसमानिया सुल्तानो ने इसे सजाया और उनके मकबरे को कई बार बहाल किया गया।

अबू हनीफ़ा (रहमतुल्लाहि तआला अलैह) सबसे पहले थे जिन्होने इल्म अल-फिकह की दर्जा बंदी की इकट्ठा किया, और उन्होने हर इल्म की शाखा के लिए जानकारी इकट्ठा की। उन्होने **फर्राज** और **शुरूत** किताबें लिखी। वहाँ पर बेशुमार किताबें हैं जो उनके फिकह के वसीह इल्म को वाज़ेह करती हैं; उनकी कियास में ग़ैर मामूली काबिलियत; और उनकी ज़ुहद तकवा, कोमलता और

सच्चाई में हक्का बक्का कर देने वाली बरतरी को वाज़ेह करती हैं। उनके बहुत सारे शार्गिद थे, उनमें से कुछ आला मुजतहिद बने।

उसमानिया सलतनत के वक्त में हनफ़ी मसलक दूर दूर तक फैला ये लगभग रियास्त का सरकारी मसलक बन गया था। आज, ज़मीन पर आधे से ज़्यादा मुसलमान और ज़्यादातर अहल अस सुन्नत हनफ़ी मसलक के मुताबिक इबादत अदा करते हैं। **कामूस-उल आलम** किताब से हवाला यहाँ खत्म होता है।

मीरात अल-काएनात से रिवायत हैंः

अल-इमाम अल आज़म (रहमतुल्लाहि तआला अलैह) के पूर्वज इरान के फारिस सुबे से आए थे। उनके बाप, साबित इमाम अली (रज़ी अल्लाहु अनह) से कूफ़ा में मिले और हज़रत अली ने उन पर और उनकी नसल दुआ दी। अल इमाम अल-आज़म ताबईन में सबसे आला थे और अनस इबन मालिक (रज़ी अल्लाहु अनह) और तीन या सात से ज़्यादा अरन-सहाबत अल किराम को देखा। उन्होने उनसे-हदीस-शरीफ़ सीखीं।

एक हदीस शरीफ़, जिसे अल-इमाम अल-खारिज़मी ने अबू हुरेरा (रज़ी अल्लाहु अनह) से इसनाद मुत्तसिल (नामानिगारो की निरंतर ज़ंज़ीर) के ज़रिए सुचना ली, हवाला हैः **"मेरी उम्मत के दरमियान, एक आदमी आएगा जिसे अबू हनीफ़ा बुलाएंगे। उठाए जाने वाले दिन वो मेरी उम्मत की रोशनी**

हापेगा।"दूसरी हदीदस शरीफ़ से रिवायत हैः **"एक आदमी नौमान इबन साबित नाम का और जिसे अबू हनीफ़ा बुलाया जाएगा वो आएगा और अल्लाह तआला के मज़हब और मेरी सुन्नत को फिर से जानदार करेगा।"** और एक दूसरी से रिवायत हैः **"हर सदी में, मेरी उम्मत की एक बड़ी तादाद ऊँचे दर्जो को हासिल करेगी।अबू हनीफ़ा अपने वक्त के सबसे ऊँचे होंगे।**ये तीन हदीसें **मौजूआत अल-उलूम** और **दुर्र अल-मुखतार** किताब में लिखी हैं।ये हदीस शरीफ़ भी बहुत मश्हूर हैंः **"मेरी उम्मत के दरमियान, एक आदमी अबू हनीफ़ा दिखाई देगा।उसके दोनो कंधो के बीच एक खुबसूरत निशान होगा।अल्लाह तआला अपना मज़हब उसके हाथों फिर से ज़िंदा कराएगा।"**

दुर्र अल-मुखतार की प्रस्तावना में लिखा हैः "एक हदीस शरीफ़ से रिवायत हैः **"जैसे कि आदम (अलैहि-स-सलाम) को मुझ पर गर्व था इसलिए मुझे अपनी उम्मत के नौमान नामी एक आदमी जिसे अबू हनीफ़ा बुलाया जाता है उस पर गर्व है।वो मेरी उम्मत की रोशनी है।"** एक दूसरी हदीस शरीफ़ से रिवायत हैः **"नबी (अलैहिमु-स-सलाम) मुझ पर गर्व करते हैं और मैं अबू हनीफ़ा पर करता हूँ वो जो उससे प्यार करते हैं वो मुझ से प्यार करते हैं।वो जो उसकी तरफ़ दुश्मनी रखते हैं वो मेरी तरफ़ भी दुश्मनी रखते हैं।"** ये हदीसें **अल-मुकददिमा** गहरे आलिम हज़रत अबू ल-लैज़ अस समरकंदी के ज़रिए किताब में और **तकददुमा,** जो सावका की तफ़सीर हैं उसमें लिखी हुई हैं।फिकह की किताब **अल मुकददिमा** अल ग़ज़नवी के ज़रिए प्रस्तावना में

उसकी तारीफ़ में हदीसें बयान हैं। **दिया अल-मानवी** में, एक तफसीर में, कादी अबी ल-बका ने कहा, 'अबू ल-फर्ज' अबद अर-रहमान इबन अल-जौजी, अल-खतीब अल बग़दादी के लफ़ज़ों पर मुबनी हैं, कि ये हदीसें मौंजू हैं। अब तक उनका कहना तअसुबी था, इसके लिए कोई हदीसें बहुत सारे ट्रांसमीटरो खज़िंज़ीर से सूचना दे चुकी हैं। इबन आबिदीन ने अपनी **दुर्र अल-मुख्तार** की तफ़सीर में, साबित किया के ये हदीसें मौंजू/mawdu नहीं हैं और इबन खजर अल-मक्की के ज़रिए **अल-खेरात अल-हिसान** किताब में मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ बयान हैंः **"दुनिया का गहना 150 साल में ले लिया जाएगा।"** फिकह क अज़ीम आलिम शमस अल-अएम्मा अबद अल-ग़फ्फ़ार अल-करदारी (d.562/1166 ए.डी) ने कहा, ये ज़ाहिर है कि ये हदीस शरीफ़ अल-इमाम अल आज़म अबू हनीफ़ी से मुराद है, क्योंक वो 150 में फौत हो गए थे।" अल-बुखारी और मुस्लिम में दी हुई हदीस शरीफ़ कहती हैं, **"अगर ईमान ज़ोहरा सय्यारे पर चला गया, तो एक फारिस** (pessian) **नसल का आदमी उसे वापिस ले आएगा।"** इमाम अस-सयूती, एक शाफ़ी-ई आलिम ने कहा, "ये इतिफ़ाक राए से नशर किया गया कि ये हदीस शरीफ़ अल इमाम अल-आज़म से मुराद हैं।" नौमान अलूसी किताब **ग़ालियाा** में लिखते हैं के ये हदीस-शरीफ़ अबू हनीफ़ा से मुराद है और उनके दादा एक फरिस/फारसी कुंवे की नसल से थे। 'अल्लामा यूसुफ़, एक हनबली आलिम, अपने काम तनवीर अस-सहीफ़ा में हाफ़िज़ अल्लामा यूसुफ़ इबन अबद अल-बर्र (बी. 368/978 और डी. 463/1071 शातिब बामें) लिस्बन, पुर्तगाल के कादी, से बयान हैंः

'अबू हनीफ़ा को बदनाम मत करो और जो उन्हें बदनाम कर रहे हैं उन पर यकीन मत करो! मैं अल्लाह तआला की कसम खाता हूँ के मैं उनसे ज़्यादा बरतर किसी आदमी को नहीं जानता,।जो अल-खतीब अल-बग़दादी कहता हे उस पर यकीन मत करो! वो उलेमा की तरफ़ मुनफर/खिलाब तबीयत का है।वो अबू हनीफ़ा, इमाम अहमद और उनके शार्गिदों को बदनाम करता है।इस्लाम के उलेमा ने उसकी मज़मत की और उसे खारिज कर दिया।इबन अल-जौज़ी के पौते, 'अल्लामा यूसुफ़ शमस अद-दीन-अल बग़दादी ने और **40** जिल्दो वाली किताब **मिरात अज़ ज़मान** में लिखा कि वो हैरान था कि उसके दादा अल-खतीब की तकलीद करते थे।इमाम अल-ग़ज़ाली (रहमतुल्लाहि तआला अलैह) ने अपनी **हया** में इमाम अल-आज़म की 'आबिद, ज़ाहिद और अल-आरिफ़ बिल्कुल जैसे अलफ़ाज़ से तारीफ़ की।अगर सहाबत अल-किराम और इस्लाम के उलेमा एक दूसरे से मुखतलिफ़ नज़रिया रखते थे, ये इस वजह से नहीं था के वो एक दूसरे के लफ़्ज़ो को रज़ाामंद नहीं करते थे या वो एक दूसरे से मिलनसार नहीं थे या वो एक दूसरे को नापसंद करते थे; मुजतहिद (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम अजमईन) एक दूसरे से अल्लाह तआला की रज़ा के लिए और इस्लाम की खिदमत के लिए इजतिहाद के मामले में एक दूसरे से नाइत्तिफाक़ी रखते थे।(ये **सआदत-ए-अबदिया** के दूसरे हिस्से में वाज़ेह कि एक **मौज़ू हदीस** का मतलब इल्म अल-उसूल अल-हदीस में 'गलत' हदीस बनाना नहीं है।)

एक आलिम ने रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को सपने में देखा और आपसे पूछा, "आप अबू हनीफ़ा की तालीम के बारे में क्या कहते हैं?" आपने जवाब दिया, "हर किसी को उसके इल्म की ज़रूरत है।" एक दूसरे आलिम ने अपने सपने में पूछा, "या रसूलुल्लाह! आप नौमान इबन साबित जो इल्म रखता है उसके बारे में क्या कहते हैं, जो कूफ़ा में रहता है?" आपने जवाब दिया, "उससे सीखो और जैसा वो कहें वैसा करो।वो एक अच्छा इंसान है।" इमाम अली (रज़ी-अल्लाहु अनह) ने कहा, अबू हनीफ़ा का दिल इल्म और हिकमा (अकल) से भरा है।दुनिया के आखिर में, बहुत सारे लोग नाश हो जाएंगे उनकी सराहना न करने की वजह से, जिस तरह शिया अबू बक्र और उमर (रज़ी अल्लाहु अनहुमा) की सराहना न करो की वजह से फना होंगे।" इमाम मुहम्मद अल-बाकिर इबन जैन अल-आबिदीन अली इबन हुसैन (रहमतुल्लाहि अलैहिम, बी . **57** ए. एच . मदीना में दफ़न हैं) ने अबू हनीफ़ा को देखा और कहा, जब वो जो मेरे बुर्जुगो का मज़हब मसख कर रहें हैं उनकी तादाद बढ़ जाएगी, तुम उसे बहाल करोगे।तुम जो डरे हुए होंगे उनके मुहाफिज़ होंगे और जो उलझन में होंगे उनकी पनाहगाह! तुम बिदअतियों को सही रास्ते पर रहनुमाई करोगे! अल्लाह तआला तुम्हारी मदद करे! "जब वो जवान थे, अल-इमाम अल-आज़म (रहमतुल्लाहि तआला अलैह) ने इल्म अल-कलाम और मअरिफ़ा पढ़ा और बहुत काबिल बन गए।इमाम हम्माद की **28** सालों तक खिदमत करने के बाद उन्हें पुख्तगी हासिल हुई।जब हम्माद का इंतेकाल हो गया तो, उन्होने मुजतहिद और मुफ़्ती के तौर पर उनकी जगह

ली।उनका इल्म और अफ़ज़लियत दूर दूर तक फैल मशहूर हो गई।उनकी नेकी, होशियारी, अकलमंदी, जुहद, तकवा, अमानत, अकल की आमादगी, इस्लाम की अकीदत, रास्तवाज़ी और हर मामले में कामिल इंसान वो अपने वक्त के सारे लोगो से ऊपर थे।सारे मुजतहिद और जो उनसे आगे बढ़े और महान लोग-यहाँ तक की ईसाई भी- उनकी तारीफ़ करते थे।अल-इमाम अस शाफ़ी-ई (रहमतुल्लाहि तआला अलैह) ने कहा, "सारे फिकह के आदमी अबू हनीफ़ा के बच्चे हैं।" उन्होने एक बार कहा," मुझे दुआएँ (तब्वरूक) मिलीं अबू हनफ़ी की [रूह से]।मैं उनके मकबरे पर रोज़ जाता था।जब मैं किसी मुश्किल में होता था तो, उनके मकबरे पर जाकर दो रकअत नमाज़ पढ़ता था।मैं अल्लाह तआला से दुआ करता था, और जो मैं चाहता था वो मुझे देता था।" अल इमाम अस शाफ़ी इमाम मुहम्मद के शार्गिद थे। (अल इमाम मुहम्मद अस-शैवानी अस-शैवानी और इमाम अबू यूसुफ़ (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम थे।) उन्होने कहा, "अल्लाह तआला ने दो लोगो के ज़रिए मुझ पर इल्म निछावर किया।मैने हदीस शरीफ़ सुफ़यान इबन उयेना से फिकह मुहम्मद अस-शौवानी से सीखा।" उन्होने एक बार कहा, "मज़हबी इल्म और दुनियावी मामलो के मैदान में, वहाँ सिर्फ़ एक शख्स हैं, जिसका मैं शुक्र गुज़ार हूँ।वो इमाम मुहम्मद हैं।और दोबारा अल इमाम शाफ़ी ने कहा, "इमाम मुहम्मद से जो मैंने सीखा और लिखा उन्हें एक जानवर किताबो से लादा जा सकता है।मैं कोई इल्म हासिल नहीं कर सकता था अगर वो मेरे उस्ताद न होते।सारे इल्म

के आदमी इराक के ‘उलेमा’ के बच्चे हैं, जो कूफ़ा के उलेमा के शार्गिद थे। और वो अबू हनीफ़ा के शार्गिद थे।”

अल-इमाम अल-आज़म ने चार हज़ार लोगों से इल्म हासिल किया।

हर सदी के उलेमा ने अल इमाम अल-आज़म की अज़मत वाज़ेह करते हुए बहुत सारी किताबें लिखीं।

हनफ़ी मसलक में, पाँच लाख मज़हबी मसाईल हल किए गए और उन सबका जवाब दिया गया।

अल-हफ़ीज़ अल-कबीर अबू बक्र अहमद अल-खारिज़मी ने अपनी किताब **मसनद** में लिखा, “सैफ़ अल-अइम्मा ने बताया कि जब अल-इमाम अल-आज़म अबू हनीफ़ा कुरआन करीम और हदीस शरीफ़ से एक मामला लेते थे, तो वो इसे अपने आकाओं के सामने पेश करते थे। वो सवाल पूछने वाले का जब तक जवाब नहीं देते जब तक वो सारे उसकी पुष्टि न कर दें।” जब वो कूफ़ा शहर की मस्जिद में पढ़ाते थे तो एक हज़ार उनके शार्गिद उनकी सारी कलासों में भाग लेते थे। उनमें से चालीस मुजतहिद थे। जब वो एक मामले का जवाब ढूँढ लेते थे तो उसे अपने शार्गिदो का बयान कर देते थे। वो एक साथ मिलकर उसका मुतालअ करते थे और, जब वो सारे इस बात से सहमत हो जाते थे कि वो कुरआन अल करीम और हदीस शरीफ़ के मुतावातिर हैं और सहाबत अल-किराम के लफ़्ज़ों के साथ, तो वो बहुत खुश होते थे और कहते

थे, "अलहुम्दु लिल्लाह वल्लाहु अकबर," और वो सब जो मौजूद होते थे उनके अलफ़ाज़ दोहराते थे। फिर उसके बाद वो इसे उन्हें लिखने के लिए कहते थे।

[**राद्ध अल-वहाबी**] सबसे पहले **1264** (**1848** ए . डी़) में भारत में छापी गई; **1401** (**1981** ए . डी) में इस्तांबुल में फारसी में दुबारा छापी गई।) किताब में लिखा है; **मुजतहिद** होने के लिए सबसे पहले अरबी ज़बान और मुखतलिफ़ लिसानी उलूम जैसे के औदत, सहीह, मखी, मुत्तवातिर, राद के तरीके; मौंज़ू लुग़त; फसीह, रदी और मज़मून शक्लें; मुफ़दर, शाज़, नादिर, मुसतमल, मुहमल, मुरब, मारिफ़ा, इस्हतिकाक, हकीका, मजाज़, मुशतरक, इज़दाद, मुतलक, मुकय्यद, इबदाल और कलब इन सब में माहिर होना चाहिए। उसके बाद तुम्हें सर्फ़, नूह, मआनी, बयान, बदी, बलाग़ात, इल्म अल-उसूल अत-तफसीर में भी माहिर होना चाहिए, और जरह और तअदिल के इमामों के लफ़्ज़ो याद करना चाहिए। इसके अलावा, एक **फकीह** होने के लिए ज़रूरी है, कि हर मामले में सुबूत जानना और मुराद और तावील के सुबूत के मआनी का मुतालअ करना। **मुहदिस** होने के लिए, यानी, हदीस का आलिम होने के लिए सिर्फ जैसे के उसे सुना जाए उन्हें याद करलें; इस्लाम के उसूल के लिए मआनी, मुराद, तावीले, या उनके सुबूतों को समझना ज़रूरी नहीं है। अगर एक फकीह और मुहदिस किसी हदीस शरीफ़ के बारे में असहमत हो जाते हैं, मिसाल के तौर पर, अगर पहला कहे के ये सही है और दूसरा कहे कि ये दाई फ़/जाईज़ है, तो फकीह के लफ़्ज़ जायज़ हैं, इसलिए, अल इमाम

अल-आज़म के लद्ज़ या फैसला ज़्यादा कीमती है बाकी सब दूसरे से क्योंकि वो पहले मुजतहिद थे और सब से ज़्यादा अज़ीम फकीह उन्होने बग़ैर किसी मदाखलत के बहुत सारी हदीसें नराहेरास्त सहाबत अल किराम से सुनीं।एक हदीस शरीफ़ जो इस अज़ीम इमाम ने कही कि सही हैं वो सारे इस्लामी आलिमों के ज़रिए सही कही गई थी।एक मुहदिस एक फकीह के दर्जे में नहीं आ सकता।और वो इमाम अल मसलक के दर्जे पर भी कभी नहीं पहुँच सकता।

अबदुलहक-देहलवी, हदीस के एक आलिम ने, अपनी किताब **सिरात-ए-मुसतकीम** में लिखा, "कुछ हदीसें जो अल-इमाम अस शाफ़ी ने दस्तावेज़ के तौर पर लिए उन्हें अल इमाम अल आज़म अबू हनीफ़ा ने दस्तावेज़ के तौर पर नहीं लिया।ये देखकर, ला-मज़हबियों ने इसे अल इमाम अल-आज़म को बदनाम करने के मौके के तौर पर लिया और दावा किया कि अबू हनीफ़ा हदीस-शरीफ़ की तकलीद नहीं करते।अगरचे, हज़रत अल इमाम अल-आज़म अबू हनीफ़ा ढूँढकर दूसरी हदीसें लेते थे जो कि उस मामले की दस्तावेज कारी में ज़्यादा सही और काबिले एतमाद थीं।"

एक हदीस शरीफ़ से रिवायत हैः **"सबसे ज़्यादा मेरी उम्मत में फायदेमंद वो है जो मेरे वक्त में रहे।अगले सबसे ज़्यादा फायदेमंद लोग वो हैं जो उनके बाद आए।और अगले सबसे ज़्यादा फायदेमंद वो हैं जो उनके बाद आएंगे।"** ये हदीस शरीफ़ दिखाती हैं कि ताबिऊन तावा ऊत ताबईन से ज़्यादा फायदेमंद थे।इस्लामी उलेमा सब इस बात से सहमत थे कि अल इमाम

अल आज़म अबू हनीफ़ा ने कुछ सहाबत अल-किराम को देखा, उनसे हदीसें सुनीं, और, इसलिए, ताबिइन में से एक हैं।मिसाल के तौर पर, अल-इमाम अल- आज़म ने अबदुल्लाह इबन औफ़ा, जोकि एक सहाबी थे, उनसे एक हदीस सुनीं, **"एक शख्स जो अल्लाह की रज़ा के लिए एक मस्जिद बनवाता है उसे जन्नत में एक महल मिलेगा।"** जलालुददीन अस-सुयूती, एक शाफ़ी-आलिम ने अपनी किताब **तबयीद अस-सहीफ़ा** में लिखा। अल इमामा अबदुलकरीम, शाफ़ी-ई आलिमों में से एक ने, अल इमाम अल-आज़म ने जिन सहाबियों को देखा था उनका बयान करते हुए एक पूरी किताब लिखी।ये **दुर्र अल-मुख्तार** में लिखा है कि अल इमाम अल-आज़म ने सात सहाबियों को देखा।चारों अइम्मात अल मसालिक में से, सिर्फ़ अल इमाम अल-आज़म को एक ताबिइन होने का शर्फ मिला।**इल्म-अल-उसूल** में कानून हे के उनके नज़रिए को जो किसी चीज़ को मान लें उसे पसंद किया जाता है बनिस्बत उनके जो इसे नाकार दें।ये साफ़ है कि अल इमाम अल-आज़म अबू हनीफ़ा ताबिइन में से एक होने की वजह से अइम्मात अल मसालिक में सबसे अफ़ज़ल हैं।ला-मज़हबी अल इमाम-अल-आज़म की बरतरी से इंकार करते हैं या वो इस ऊंचे इमाम को गाली देने की कोशिश करते हैं ये कहकर कि वो हदीस के इल्म में कमज़ोर थे, ये उसी के बराबर हैं जैसे कि हज़रत अबू बक्र ओर हज़रत उमर (रज़ी-अल्लाहु अन्हुम) की बरतरी से इंकार करना।उनकी ये टेढ़ी नफ़ी इस तरह की बीमारी नहीं हैं जो तबलीग़ या अल्लाह से ठीक हो जाए।अल्लाह तआला उनका इलाज करे! मुसलमानो के खलीफ़ा उमर (रज़ी

अल्लाहुनह) ने अपने खुतबे के दौरान कहाः "ए मुसलमानो! जैसे के मैं तुम्हें अब बता रहा हूँ, रसूलुल्लाह (सल्लल्ल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने अपने खुतबे के दौरान हमें बतायाः **"सबसे ज़्यादा फाएदेमंद लोग मेरे सहाबा हैं। उनके बाद सबसे ज़्यादा फायदेमंद उनके बाद वाले लोग हैं। और उसके बाद सबसे ज़्यादा फायदेमंद जो उनके बाद आएंगे। जो इनके बाद आएंगे उनके दरमियान झूठे भी होंगे।"**

चार मसलक जिसकी आज मुसलमान तकलीद करता है और नकल करता है वो उन फायदेमंद लोगों के मसलक हैं जिनकी अच्छाई की रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने दावा किया। इस्लामी उलेमा ने आम सहमति में ये ऐलान किया कि इन चार मसालिक के लिए किसी और मसलक को अपनाने की इजाज़त नहीं है।

इबन नजीम अल मिसरी (रहमतुल्लाहि तआला अलैह) **बहतर अर-राईक** के लेखक ने, अपने काम **अस्बाह** में लिखा, "हज़रत अल इमाम अस-शाफ़ी-ई ने कहा एक शख्स जो फिकह के इल्म में माहिर होना चाहता है उसे अबू हनीफ़ा की किताबें ज़रूर पढ़नी चाहिए।" अबदुल्लाह इबन मुबारक ने कहा, "मैने फिकह के इल्म में कोई दूसरा माहिर इतना ज़्यादा आलिम नहीं देखा जितना कि अबू हनीफ़ा। अज़ीम आलिम मिसार अबू हनीफ़ा के सामने घुटने टेका करते थे और जो उन्हें नहीं आता था उनसे पूछकर सीखते थे। मैं हज़ारों उलेमा के नीचे पढ़ा हूँ। अगर, मैने अबू हनीफ़ा को नहीं देखा होता, तो

में ग्रीक/यूनानी फलसफ़े की दलदल में गिर जाताा।" अबू यूसुफ़ ने कहा, "मैने अबू हनीफ़ा से ज़्यादा हदीस के इल्म में इतना ऊँचा आलिम कोई दूसरा शख्स नहीं देखा।वहाँ और कोई दूसरा आलिम नहीं जिसने हदीसों को इतने साफ़ तरीके से वज़ाहत की जैसे उन्होने की।" अज़ीम आलिम और मुजतहिद सुफयान अस-सूरी ने कहा, "अबू हनीफ़ा के मुकाबले, हम लोग फालकन बमुकाबला चिड़ियाँ थे।अबू हनीफ़ा उलेमा के लीडर हैं।" अली इबन आसिम ने कहा, "अगर अबू हनीफ़ा का इल्म उनके वक्त के सारे उलेमा के कुल इल्म से नापा जाए तो, अबू हनीफ़ा का इल्म सबसे बड़ा साबित होगा।" मुज़ीद इबन हारून ने कहा, "मैं हज़ारो उलेमा के तहत पढ़ा हूँ।उनमें मैं से किसी को भी इतना ज़्यादा इल्म वाला नहीं पाया जितना अबू हनीफ़ा को या कोई इतना ज़्यादा अकलमंद हो जितना के अबू हनीफा (रहमतुल्लाहि तआला अलैह)।" मुहम्मद इबन यूसुफ़ अस-शाफ़ी-ई दमिस्सेन/दमिक्श उलेमा में से एक, अल इमाम अल-आज़म अबू हनीफ़ा की बहुत तारीफ़ की, उनकी बरतरी तफसील से वाज़ेह की और कहा के वो सारे मुजतहिद के लीडर हैं अपनी किताब **उकूद अल-जमान फी मनाकबिन-नौमान में**।अल-इमाम अल-आज़म अबू हनीफ़ा ने कहा, "हम रसूलुल्लाह (अलैहि स-सलाम) की हदीसों को सबसे ऊपर इज़्ज़त और प्यार देते हैं।हम सहावत अल- किराम के लफ़्ज़ों को ढूँढते हैं, चुनते हैं और उन्हें अपना लेते हैं।ताबिईन के अलफ़ाज़ के लिए, वो हमारे लफ़्ज़ो जैसे होते हैं। **राद्द-ए वहाबी** से तर्जुमा यहाँ पर खत्म होता है।ये किताब **भारत** और

इस्तांबुल में **1264** (**1848** ए .डी.) ओर **1401** (**1981** ए .डी.) में हसबे तरकीब छपवाई गई थी।

सैफ़-उल-मुकल्लिदीन अला आनाक-इल-मुनकरीन किताब में मौलाना मुहम्मद अबदुल-जलील ने फ़ारसी में लिखाः "ला-मज़हबी कहते हैं कि अबू हनीफ़ा हदीस के इल्म में कमज़ोर थे। उनका दावा ये बतााता हे कि या तो वो जाहिल हैं या हासिद। अल-इमाम अज़-ज़हबी और इबन हजर अल-मक्की कहते हैं कि अल इमाम अल-आज़म ने हदीस सीखी थीं। उलेमा थे। अल इमाम अस-शारानी **अल-मीज़ान** की पहली जिल्द में कहते हैं कि, 'मैने अल-इमाम अल-आज़म की तीन **मसनद** पढ़ी हैं। वो सब ताबिइन के जाने माने उलेमा से जानकारी सौंपती हैं। दुश्मनी जो ला-मज़हबी लोग सलफ़ अस-सालिहीन के खिलाफ़ रखते हैं और मुजतहिद के इमामों के लिए उनका हसद खासतौर से उनके रहनुमा अल-इमाम अल-मुस्लिमीन अबू हनीफ़ा की तरफ़, उनके ख्याल और ज़मीर को इस हद तक रूकावट डालते हैं कि वो इन इस्लामी उलेमा की खुबसूरती और बरतरी से इंकार करते हैं। वो इस हकीकत को सहन नहीं कर सकते कि जो पाक लोगो के पास हैं वो उनके पास नहीं। इसी वजह से वो इस्लाम के इमामों की बरतरी से इंकार करते हैं और इस तरह हसद के र्शिक/शिरक (मुश्रिक) के जोखिम में घुस जाते हैं। **हदाइक** किताब में ये लिखा हैः 'जब अल-इमाम अल-आज़म अबू हनीफ़ा हदीस को याद कर लेते थे तो वो उन्हें लिख लेते थे। वो जो हदीस की किताबें लिख लेते थे उन्हें लकड़ी

के बक्सों में रख देते थे, जहाँ कहीं भी वो जाते थे उनमें से कुछ अपने हाथ में रखते थे। उनके सिर्फ़ चंद हदीस के हवाले से ये ज़ाहिर नहीं होता कि हदीस की तादाद जो उन्होने याद की वो थोड़ी थीं। सिर्फ़ इस्लाम के कट्टर दुश्मन ही ऐसा कह सकते हैं। उनका कट्टरपन अल-इमाम अल आज़म का कमाल साबित करता है; एक जाहिल शख्स की आलिम पर झूठे इल्ज़ाम लगाना आलिम के कमाल को ज़ाहिर करता है। एक अज़ीम मसलक को कायम करना और लाखों सवालों के जवाब देना आयात और हदीसों से दस्तावेज़कारी करके ऐसे शख्स के ज़रिए नहीं किया जा सकता जो तफ़सीर ओर हदीस के उलूम में गहराई से माहिर न हो। दरहकीकत, एक नया, अनोखा मसलक बग़ैर एक नमूने या एक मिसाल के आगे लाना ये अल-इमाम अल आज़म के तफ़सीह और हदीस के उलूम में महारत का सुबूत हैं। क्योंकि इस मसलक को आगे लाने में उनहोने गैर मामूली ताकत के साथ काम किया, उनके पास वक्त नहीं था हदीस का हवाला देने का या अपने तर्जुमों को एक के बाद एक पेश करने का; इस बात को उस इमाम को बदनाम करने का सबब नहीं बना सकते हसद के ज़रिए उन पर इल्ज़ाम तराशी करके ये कहना कि वो हदीस के इल्म में कमज़ोर थे। ये मानी हुई हकीकत है कि रिवाय्त (पहुँचाई) बग़ैर ज़राए/दिराया (काबिलियत, समझदारी) की कोई कीमत नहीं हैं। मिसाल के तौर पर, इबन अबद अल-बर्र ने कहा, 'अगर रिवाया बग़ैर जराया कीमती होती तो, एक कूढ़े वाले का हदीस का हवाला देने लुकमान की समझ से बरतर होता। इबन हजर अल मक्की शाफ़ी-ई मसलक के उलेमा में से एक थे, लेकिन उन्होने अपनी किताब **कलाइद**

में लिखाः हदीस के अज़ीम आलिम अमाश ने अल-इमाम अल-आज़म अबू हनीफ़ा से बहुत सारे सवाल किए। अल-इमाम अल-आज़म ने उनके हर सवाल का जवाब की हदीस के बारे में इतनी गहरी तालीम को देखते हुए, आमाश ने कहा, "ए,तुम, फिकह के उलेमा! तुम एक माहिर डॉक्टर की तरह हो, ओर हम हदीस के उलेमा फारमासिस्ट/दवाई बनाने वालो की तरह हैं। हम हदोसो और उनके ट्रांसमीटरों/कहने वालो का हवाला देते हैं, लेकिन तुम वो हो जो इनके मआनी को समझते हो।"**उकूद अल-जवाहिरी ल-मुनीफ़ा** किताब में ये लिखा हैः 'जबकि उबेदउल्लाह इबन अमर, अज़ीम हदीस के आलिम अमाश की संगत में बैठे थे, कोई आया और उसने एक सवाल किया। जैसे अमाश जवाब के बारे में सोचने लगे, अल-इमाम अल-आज़म वहाँ शामिल हो गए। अमाश ने सवाल इमाम को दोहराया और उनसे जवाब देने की इलतिजा की। अल इमाम अल-आज़म ने फौरन तफ़सील से उसका जवाब दिया। जवाब को निहारते हुए, अमाश ने कहा, "ए इमाम! तुमने किस हदीस अस शरीफ़ से ये लिया?" अल-इमाम अल-आज़म ने जिस हदीस अस शरीफ़ से जवाब लिया था उसको बयान किया और मज़ीद कहा, "ये मैने तुम से सुनी थी।"अल-इमाम अल बुखारी को तीन लाख हदीसें मुह ज़बानी याद थीं। उन्होने उनमें से सिर्फ़ बारह हज़ार किताबों में लिखी थी। क्योंकि उन्हें हदीस अस-शरीफ़ में खतरों का डर था। **"अगर एक शख्स हदीस के नाम पर हवाल देदे, जो मैने नहीं कही, उसे दोज़ख में शदीद अज़ाब दिया जाएगा।"** वारा और तकवा ज़्यादा होने की वजह से, अल-इमाम अल-आज़म ने हदीसों को पहुँचाने के लिए सख्त शर्तें

लगाई थीं। सिर्फ़ वही हदीस को पहुँचा सकते थे जिसकी शर्ते पूरी की गई हों। कुछ उलेमा ने बेशुमार हदीस भेंजी क्योंकि उनकी शाखा वसीह थी और शर्ते हल्की थीं। हदीस के उलेमा मुख्तलिफ़ शर्ते होने के सबब एक दूसरे को कभी हकीर नहीं समझते। ऐसा बिल्कुल नहीं होता था, इमाम मस्लिम ने अल-इमाम अल-बुखारी रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम की तोहीन करने को कुछ कहा होगा। अल-इमाम अल-आज़म अबू हनीफ़ा ने सिर्फ़ कुछ ही हदीसो को ट्रासमिट किया क्योंकि उनकी निगरानी और तकवा उनकी तारीफ़ और सराहना एक अच्छा सबब हो सकती हैं।" (**सैफ़ अल-मुकल्लिदीन अला अनाकी ल-मुनकिरीन**।)

मिरात अल-काएनात आगे बढ़ती हैः "अल-इमाम अल-आज़म अबू हनीफ़ा (रहमतुल्लाहि तआला अलैह) सुबह की नमाज़ एक मस्जिद में पढ़ते थे और रोज़ाना दोपहर तक अपने शार्गिदों के सवालों के जवाब देते थे। दोपहर की नमाज़ के बाद, वो अपने शार्गिदों को दोबारा रात की नमाज़ तक पढ़ाते थे। उसके बाद वो घर चले जाते और, थोड़ा आराम करने के बाद, वापिस मस्जिद चले जाते और सुबह की नमाज़ तक इबादत करते। मिसार इबन कदम अल-कूफ़ी, सलफ़ अस-सालिहीन में से एक, जो **115** (**733** ए डी.) में चल बसे थे, और दूसरे और अज़ीम लोगो ने इस हकीकत की खबर दी।

जो तिजारत के ज़रिए हलाल तरीके से अपनी रोज़ी कमाते थे। वो सामान दूसरी जगह भेजते थे और अपनी कमाई से वो अपने शार्गिदों की

ज़रूरयात पूरी करते थे। उन्होने अपने घर के लिए ज़्यादा खर्च किया और उसके बराबर की कीमत गरीबो को दान के तौर पर दी। इसके अलावा, हर जुम्मे को वो अपने वालदेन की जानो के लिए बीस सोने के सिक्के गरीबों को देते थे। वो अपनी टाँगे अपने उस्ताद हम्माद (रहमतुल्लाहि तआला अलैह) के घर की तरफ़ नहीं फैलाते थे। अगरचे वो सात सड़कों दूर के फासले पर रहते थे। एक बार उन्हें पता लगा कि उनके हिस्सेदार ने सामान की एक बड़ी तादाद बेच दी जो इस्लाम से मुतावकत नहीं रखती थी। उन्होने नौ हज़ार अचास जो कमाए थे वो सारे गरीबों में बाँट दिए, उसका एक पैसा भी उन्होने नहीं लिया। ब्रिगेंडस/लुटेरों के कूफ़ा शहर में छापे के बाद और भेड़ें चुराने के बाद, उन्होने, सोचा कि ये चोरी हुई भेड़ें हो सकते हैं ज़िब्ह कर दी गई हों और शहर में बेच दीं गई हों, सात साल तक उन्होने भेड़ का गोश्त नहीं खाया कयोंकी भेड़ सात साल तक ज़िंदा रह सकती हैं। वो इस हद तक हराम से परहेज़ करते थे। वो अपने हर अमल में इस्लाम को देखते थे।

"चालीस सालों तक इमाम अल-आज़म (रहमतुल्लाहि तआला अलैह) ने सुबह की नमाज़ रात की नमाज़ के लिए वुज़ू के साथ अदाकी [यानी, वो रात की नमाज़ के बाद सोते नहीं थे।] उन्होने **55** बार हज अदा किया। आखिरी वाले के दौरान, वो काबा में चले गए, दो रकाअत की नमाज़ अदाकी और इबादत के दरमियान पूरा कुरआन अल-करीम की तिलावत करी। फिर, रोने लगे, उन्होने दुआ की, 'ए मेरे अल्लाह तआला! मैं तेरे पास किसी काबिल

तरीके से इबादत नहीं कर पाया हूँ। फिर भी मैं बहुत अच्छी तरह से समझ गया कि तुमको अकल के ज़रिए से समझा नहीं जा सकता मेरी इस समझ के लिए, बराए महरबानी मेरी खिदमत में जो कमियाँ हैं उन्हें माफ़ करदो! उस मेरी खिदमत में जो कमियाँ हैं उन्हें माफ़ करदो! उस लम्हा एक आवाज़ सुनाई दी, ए अबू हनीफ़ा! तुमने मुझे बहुत अच्छी तरह से मना लिया और मेरी बहुत खुबसूरती के साथ खिदमत की। मैने तुम्हें और उन्हें जो तुम्हारे मसलक में हैं और दुनिया के खात्में तक तुम्हारी तकलीद करते रहेंगे माफ़ कर दिया। वो कुरआन अल-करीम को शुरू से लेकर आखिर तक रोज़ाना दिन में एक बार और रोज़ाना रात में एक बार पढ़ते थे।

"अल इमाम अल-आज़म में इतना तकवा था कि तीस सालो तक उन्होने रोज़ रोज़ा रखा [साल के उन पाँच दिनो के अलावा जिनमें रोज़ा रखना हराम था]। वो अकसर पूरे कुरआन अल-करीम को एक या दो रकाअत में पढ़ लेते थे। और कभी कभी, सलात के दरमियान या उसके बाहर, वो एक आयत को जो दोज़ख और जन्नत के बारे में बयान करती थी उसे बार बार पढ़ते थे और रोते थे और अफसोस करते थे। (सलात में अल्लाह तआला के लिए रोना हनफ़ी मसलक में सलात को तोड़ता नहीं है।) वो जो उनको सुनते थे उन पर दया करते थे। मुहम्मद (अलैहि स-सलाम) की उम्मत के दरमियान पूरे कुरआन अल-करीम को एक वाहिद सलात की रकाअत में पढ़ना सिर्फ़ उसमान इबन अफ़फ़ान, तमीम अद-दारी, साद इबन जुबैर और अल-इमाम अल-आज़म अबू

हनीफ़ा तक लिए था। वो कभी किसी से कोई हदीया नहीं लेते थे। वो गरीबों की तरह लिबास पहनते थे। फिर भी कई बार, अल्लाह तआला की बरकात दिखाने के लिए, वो बहुत कीमती कपड़े पहनते थे। उन्होने हज **55** बार किया और मक्का में कई सालो तक रहे। जहाँ उनकी रूह उनको ले जाती थी सिर्फ़ उसी जगह पर वो पूरा क़ुरआन अल-करीम सात हज़ार बार पढ़ते थे। वो कहते थे, "मैं ज़िंदगी में सिर्फ़ एक बार हंसा, और मुझे उसका पछतावा है।" वो बहुत कम बोलते थे और सोचते ज़्यादा थे। वो अपने शार्गिदों के साथ कुछ मज़हबी मामलात पर बातचीत कर रहे थे। एक रात जमाअत के साथ रात की नमाज़ अदा करने के फौरन बाद वो मस्जिद से जा रहे थे, उन्होने कुछ मामले पर अपने शार्गिद ज़फर से बात करनी शुरू कर दी। उनका एक पैर मस्जिद के अन्दर और एक बाहर था। बातचीत सुबह की अज़ान तक जारी रही। फिर, दूसरा पैर बाहर निकाले बग़ैर, वो वापिस अन्दर चले गए सुबह की नमाज़ के लिए। क्योंकि अली (रज़ी-अल्लाहु अनह) ने कहा, इस बात की इजाज़त है कि ज़ाती भत्ता चार हज़ार द्रिहम तक रख लिया जाए, उनकी कमाई जो चार हज़ार द्रिहम से ज़्यादा थी वो उसे गरीबो में बाँटते थे।

खलीफ़ा मनसूर इमाम का बहुत अहतराम करते थे। उसने उन्हें दस हज़ार अकचा और एक जारिया दी। इमाम ने उनको कुबूल नहीं किया। उस वक्त एक अकसा एक चाँी के द्रिहम के बराबर था **1145** ए . एच में इब्रहिम इबन अबदुल्लाह इबन हसन इबन अली आदमियों को भरती कर रहा था अपने

भाई मुहम्मद (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम अजमईन) की मदद करने के सिलसिले में, जिसने अल-मदीनत अल-मुनव्वरा में अपने आपको खलीफ़ा ऐलान कर दिया। जब वो कूफ़ा आया तो ये अफवा थी कि अबू हनीफ़ा ने उसकी मदद की। मनसूर ने ये सुन लिया और इमाम को कूफ़ा से बग़दाद ले गया। उसने उनसे कहा के सबको बता दो कि मनसूर ही हक से खलीफ़ा है। बदले में उसने उन्हें सुप्रिम कार्ट अपील की सदारत की पेशकश की। उसने उन पर बहुत दबाव डाला। इमाम ने इसे कुबूल नहीं किया। मनसूर ने उन्हें बंदी बना लिया और एक छड़ी के साथ तीस स्ट्रोक लगाकर उनकी पिटाई की। उनके मुबारक पैर से खून बहने लगा। मनसूर को पछतावा हुआ और उसने **30** हज़ार अकचास उन्हें भेजे, सिर्फ एक बार फिर से इंकार करने के लिए। उन्हें फिर से कैदी बना लिया गया और रोज़ दस स्ट्रोक से ज़्यादा उनकी पिटाई हुई। [कुछ खबर के मुताबिक], ग्यारहवें दिन, इस डर से के लोग कहीं बग़ावत न कर दें, उन्हें ज़बरदस्ती कमर के बल लिटाया गया और ज़हरीला शरबत (एक मठिए फल का शरबत) उनके मुंह में डाला गया। जैसे के वो मरने वाले थे सजदे में झुक गए। करीब पचास हज़ार लोगों ने जनाज़े की नमाज़ अदा की। बहुत ज़्यादा भीड़ होने की वजह से, इसे बड़ी मुश्किल से अदा किया गया और अस्र की नमाज़ से पहले पूरी नहीं हुई। बीस दिनो तक बहुत सारे लोग उनके मज़ार पर आते रहे और उनके मज़ार के नज़दीक नमाज़े जनाज़ा पढ़ते रहे।

"उनके **730** शार्गिद थे।उनमें से हर एक अपनी नेकी और पाक कामों के लिए मश्हूर था।उनमें से कई कादीस और मुफ़ती बनें।उनके बेटे हम्माद (रहमतुल्लाहि तआला अलैह) उनके जाने माने शार्गिदों में से थे।" **मिरात-उल-काएनात** किताब से पेसेज यहाँ खत्म होते हैं।

वो अहल-ए दीन के रहनुमा हो गए, रहमतुल्लाहि अलैहिम अजमईन।

इजतिहाद के ज़रिए जो मालूमात अकज़ होनी थी उन पर अल-इमाम अल-आज़म और उनके शार्गिदों के दरमियान कुछ इखतेलाफ़ात थे।मंदरजाज़ेल हदीस अस-शरीफ़ वाज़ेह करती हैं कि ये इखतेलाफ़ात फायदेमंद थेः **"मेरी उम्मत के बीच** (अमाल की अदाएगी पर) **इखतेलाफ** [अल्लाह तआला की] रहम **हे।"** वो अल्लाह तआला से बहुत ज़्यादा डरते थे और कुरआन अल-करीम की तकलीद करने में बहुत ज़्यादा सावधान थे।उन्होने अपने शार्गिदों से कहा, "अगर तुम एक विषय पर दस्तावोज़ (सनद) को मेरे लफ़ज़ों के साथ नामुनासिब पाते हो तो, मेरे लफ़ज़ों को नज़र अन्दाज़ कर दो और उस दस्तावेज़ की तकलीद करो।" उनके सारे शार्गिदों ने कसम खाई, "यहाँ तक कि हमारे अल्फ़ाज़ उनके अल्फ़ाज़ के साथ मुताबकत नहीं रखते वो वेशक उस सुबूब (दलील,सनद) पर मुनहसिर हैं जो हमने उनसे सुनी थीं।"

हनफ़ी मुफ़्तियों को जो अल-इमाम अल-आज़म ने कहा उस पर सहमत फतवा जारी करना होगा। अगर वो उनके लफ़्ज़ नहीं ढूँढ पाएँ, तो उन्हें इमाम अबू यूसुफ़ की तकलीद करनी होगी। उनके बाद,इमाम मुहम्मद की तकलीद की जा सकती है। अगर इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद के लफ़्ज़ एक तरफ़ और अल-इमाम अल-आज़म के दूसरी तरफ़ हो तो, एक मुफ़्ती किसी भी ज़मनी के मुताबिक फतवा जारी कर सकता है। जब वहाँ दरूरा (एक सख्त मुश्किल) हो तो, वो मुजतहिद के लफ़्ज़ो के माकूल जो आसान तरीका दिखाए एक फतवा जारी कर सकता है। वो ऐसा फतवा जारी नहीं कर सकता जो किसी भी मुजतहिद के लफ़्ज़ों पर मुबनी न हों; मुददा एक फतवा नहीं कहलाया जाएगा।

4-वहाबियत और अहले-सुन्नत की तरफ़ से इसकी तरदीद

अगरचे वो कहते हैं कि वो मुसलमान हैं, **वहाबी,** उन्हें **नजदी** भी कहा जाता है, वो उन फिरको में से हैं जो अहले सुन्नत से अलग हो गए थे।

अहमद सैफ़दत पाश, एक स्टेट्रस्मन/मोअरिख, और अयूब सबरी पासा [डी .1308 (1890 ए .डी .)], रियर एडमिरल/नौ सेनापति 34वें उस्मानिया सुल्तान अबदु-हमीद खान [1258-1336 (1842-1918), इस्तांबुल में सुल्तान महमूद के मज़ार में दफ़नाए गए] (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम) ने हर एक तारीख की किताब लिखी, जिसमें उन्होने वहाबियत को तफ़सील पूरा वाज़ेह

किया। (पहले वाले की तारीख ए-उस्मानी की 12 जिल्दो के सातवीं जिल्द में और बाद वाले की **मिरात-अल-हरमैन** की 5 जिल्दो में से तीसरी जिल्द में (सफ़ह 99. तुर्की, सुलेमानियाा की लाएब्रेर मे है)। **ज़्यादातर हिस्से के लिए, मंदरजाज़ेल बाद वाले की किताब से लिया गया है, जिन्होने ज़एनी दहलान से ये मालूमात लीं** (अहमद दहलान रहमतुल्लाहि अलैह (1231 [1816], मक्का-1304 [1886], मदीना) मक्का के मुफ़ती थे।)**"फितनत अल वहाबिया" किताब से। वो 1308 (1890 ए. डी.) में फौत हो गए।**

वहाबियत मुहम्मद इबन अबदुल वहाब ने कायम की। वो हुरेमिला 1111 (1699 ए. डी.) नजद में पैदा हुआ और 1206 (1791 ए. डी) मे मर गया। पहले, वो बसरा,बग़दाद, इरान,भारत और दमिक्श में घूमने और तिजारत की गर्ज़ से गया। वो बसरा में था, 1125 [1713 ए. डी.] में जब वो हेम्फ्फर के ज़रिए फंदे में फंस गया, जो बेशुमार अंग्रज़ी जासूसों में से एक था, और **(इस्लाम को तबाह)** करने के बरतानवी पलान में एक मोहरे की तरह काम करता था। उसने वहाबियत के नाम पर जासूस के ज़रिए तैयार किए गए बेवकूफ़ाना कामों को छपवाया। हमारी किताब **एक अंग्रेज़ जासूस के एतराफात/confession of british spy** में वहाबियत के कयाम पर तफ़सीली जानकरी है। वहाँ उसने हररान के अहमद इबन तेमिया [661-728 (1263-1328), दी. दमिक्श में] के ज़रिए लिखी किताबो को पाया और पढ़ा, जिसका मवाद अहले-सुन्नत के मुताबिक न था। बहुत ज़्यादा होशियार

शख्स होने की वजह से, वो अस-शैख अन-नजदी के नाम से मश्हूर हुआ। उसकी किताब **किताब अत-तौहीद** (मक्का के आलिमों ने **किताब अत-तौहीद** को बहुत खुबसूरत जवाबात लिखे और **1221** में पक्के दस्तावेज़ों के साथ उसकी तरदीद की। उनकी तरदीद का मजमआ, **सैफ अल-जब्बार** के नाम से जो बाद में पाक्स्तिान में छपी, इस्तांबुल में **1395** [**1975** ए . डी.] में दोबारा छपी गई।) जिसे उसने बरतानवी जासूस के तआवुन से तैयार किया, उसके पौते अबद अर-रहमान के ज़रिए एनोटेट/तफसील के साथ तशरीह की गई और मिस्र में **फतह अल-मजीद** के उनवान से मुहम्मद हमीद नामी एक वहाबी के ज़रिए दर्ज करके छपवाई गई। मुहम्मद इबन अबदुल वहाब के खयालात, गाँव वालों, दरिया के रहने वालो और उनके सरबराह, मुहम्मद इबन सऊद के दरमियान फैले। वो जिन्होने उसके खयालात को कुबूला, जिन्हें उसने वहाबिया करार दिया वो वहाबी या नजदी कहलाए। वो तादाद में बढ़ गए, और उसने अपने आपको काज़ी के तौर पर और मुहम्मद इबन सुऊद को अमीर (शासक) के तौर पर थोप दिया। उसने ये कानून बना दिया कि सिर्फ़ उनकी खुद की औलादें उनकी फातेह बनेंगी।

मुहम्मद के बाप, 'अबदुल-वहाबी, जोकि एक सालिह मुसलमान और मदीना का एक आलिम थे, इबन अबद अल-वहबी के लफ़्ज़ों से उन्हें शक हुआ के उसने एक भटकी हुई तहरीक चलाई है उन्होने हर एक को सलाह दी कि उसके साथ बात न करें। लेकिन उसने **1150** (**1737** ए . डी.) में वहाबियत

का ऐलान कर दिया। वो इतना ज़्यादा आगे बढ़ गया कि अहले-सुन्नत को "काफिर" बुलाने लगा। उसने कहा कि जो नबी या वली के मज़ार पर जाएगा और उन्हें "या नबी अल्लाह!"(ए अल्लाह के नबी) या 'या अबद अल-कादिर!" ऐसे कहकर बुलाएगा वो एक शिर्क करने वाला (मुश्रिक) बन जाएगा।

वहाबी का नज़रिये ये हैं के वो जो कहे कि अल्लाह तआला के अलावा किसी ने कुछ किया वो एक मुश्रिक बन जाएगा, एक काफ़िर। मिसाल के तौर पर, वो जो कहे, "फला दावाई से मुझे आराम मिला," या "अल्लाह तआला ने फला फला नबी या वली के मज़ार के पास मेरी दुआ सुन ली" वो मुश्रिक बन जाएगा। इन खयालात को साबित करने के लिए, उसने आयत अल-करीमाः "**इय्याका नसताईन**" **(सिर्फ़ तेरी मदद चाहिए)** सूरत अल फातिह और आयत तवक्कुल को दस्तावेज़ के तौर पर आगे किया। (इन आयात के सही मआनी अहले-सुन्नत के उलेमा के ज़रिए और तौहीद और तवक्कुल के मामलात **सआदत-ए-अबदिया,** के तीसरे हिस्से के, **35**वें सबक में तदसील से लिखें हैं। वो जो तौहीद के सही मआनी जानते हैं वो समझ जाएंगे कि वहाब, जो अपने आपको मोहददीस कहता हे, वो मोहददीस (तौहीद के मानने वाला) नहीं हे।)

अल-उसूल-उल-अरबा फ़ी-तरदीद-इल-वहाबिया किताब अपने दूसरे हिस्से के आखिर में, फारसी में लिखती हेः वहाबी और दूसरे ला-मज़हबी लोग

जब भी कोई कहता कि उसने मजाज़ किया है, (मजाज़ एक लफ़्ज़ का इस्तेमाल इसके आम या वाज़ेह मआनी में नहीं है, बल्कि इसके मआनी से जुड़ा एक मतलब है। जब एक खास लफ़्ज़ अल्लाह तआला का मजाज़ी (अलामती,अलफ़िकार) समझ में आदमियों के लिए इस्तेमाल हो, वहाबी इसको अदबी मआनी में लेंगे और जो उसे अलामती तौर पर इस्तेमाल कर उसे एक मुश्रिक और काफिर मानते हैं; वो इस बात से अनजान हैं कि ऐसे लफ़्ज़ कुरआन अल-करीम और हदीस अस-शरीफ़ मे आदमियों के लिए अलामती समझ में इस्तेमाल होते हैं।) और **इसतिआरा** (मवाज़ना) के मआनी को समझ नहीं सकते। वो उसे एक मुश्रिक या एक काफ़िर बुलाते अगरचे उसका इज़हार एक मजाज़ हो। बहरहाल, अल्लाह तआला ने कुरआन अल-करीम की बहुत सारी आयात में ये ऐलान किया कि वो हर अमल का हकीकी खालिक हे और ये कि आदमी मजाज़ी बनाने वाला है। सूरत अल-अनाम की **57**वीं आयत और सूरत यूसुफ़ में, उसने कहा; **"फैसला (हुकूम) अकेले अल्लाह तआला का है,"** यानी, सिर्फ़ अल्लाह तआला ही तय करने वाला है (हाकिम)। सूरत अन-निसा की **64**वीं आयत में, उसने कहाः **"वो मोमिन नहीं हो सकते जब तक के वो** (नबी)**जज न बना लें** (युहक्क्मिूनक) **उस चीज़ का जो उनके बीच में झगड़ा है।"** पहली वाली आयत ये बयान करती है कि अल्लाह तआला सिर्फ़ असली हाकिम है, और बाद वाली कहती है के आदमी सिर्फ़ तशबीहा करके हाकिम के तौर पर हवाल दिया गया है।

हर मुसलमान जानता है कि वाहिद अल्लाह तआला है जो अकेला ज़िंदगी देता और लेता है।क्योंकि उसने ऐलान कियाः सूरत यूनुस की **56**वीं आयत में कहा गया, **"वो अकेला ज़िंदगी देता और लेता है,"** और सूरत अज़-ज़ुमर में **42**वीं आयत में, **"अल्लाह तआला अकेला है जो आदमी को उसकी मौत के वक्त मारता है,"** सूरत अस-सजदा की **11**वीं आयत में, वो मजाज़ के तौर पर कहता हैः **"फरिश्ता जो ज़िंदगी लेने का नायब मुकर्रर है वो तुम्हारी ज़िंदगी लेगा।"**

अल्लाह तआला वाहिद अकेले ही बीमार को सेहत देता है, क्योंकि सूरत अस-शूरा की **80**वीं आयत में बयान हैंः **"जब मैं बीमार होता हूँ तो, सिर्फ़ वो मुझे सेहत देता है।"** उन्होने ईसा (अलैहि स-सलाम) का हवाला दिया सूरह आल-ए-इमरान की **49**वीं आयत में ये कहते हुएः **मैं अंधे और बरस**

(एक जिल्द का बीमार शख्स, albion या vitilligo मुकम्मल या जुज़वी सफ़ेदी बिल्तरतीब, जिल्द।) **को ठीक करता हूँ, और अल्लाह तआला की इजाज़त से मुरदे को वापिस ज़िंदगी में लाता हूँ"** जिसने एक आदमी को बच्चा दिया वो असल में वही है; सूरत मरियम की **18**वीं आयत जिब्राईल (अलैहि स-सलाम) [मुकर्रब फरिश्ते] के मजाज़ी लफ़ज़ो का हवाल दिया, **"मैं तुम्हें पाक बेटा दे रहा हूँ।"**

आदमी का असली मालिक अल्लाह तआला है।सूरत अल-बकरा की **257**वी आयत ने खुले तौर पर बयान कियाः **"अल्लाह तआला उनका वली** (मुहाफ़िज़,सरपरस्त) **है जो यकीन रखते हैं।"** बिलतरतीब **56**वीं और **6**वीं सूरह अल-माएदा और अल-अहज़ाब की आयत मे ये कहा गया है, **"अल्लाह तआला और उसके नबी** (अलैहि स-सलाम) **तुम्हारे वली हैं,"** और **"नबी मोमिनो की खुद से ज़्यादा हिफ़ाज़त करते हैं।"** उनका मतलब है कि आदमी, भी अगरचे अलामती तौर पर, एक वली है।इसी तरह, असली मददगार अल्लाह तआला है और वो आदमियों की भी तशबिहन मुईन (मददगार) पुकारता है।सूरत अल-माएदा की तीसरी आयत मेंः "अच्छाई और दया (तकवा) में एक दूसरे की मदद करो।"वहाबी उन मुसलमानो के लिए मुशरिक (शिर्क वाला) लफ़्ज़ इस्तेमाल करते हैं जो किसी को अबद (नौकर,गुलाम) कहते हैं अल्लाह तआला के अलावा, मिसाल के तौर पर, "अबद अन-नबी," या अबद अर-रसूल; बहरहाल, सूरत अन-नूर की **32**वीं आयत में, ये वाज़ेह हैंः अपनी ग़ैर शादी शुदा औरतों की और तुम्हारे गुलाम लडके लड़कीयों के बीच पाक लोगो की शादी कराओ।"आदमी का असली रब (उस्ताद) अल्लाह तआला है, लेकिन तशबिहन किसी और को भी पुकार सकते हैं; सूरत यूसुफ़ की **42**वीं आयत मे कहा,"अपने रब की हाज़िरी में मेरा ज़िकर करो।"

'इस्तिखारा' वो है जिसकी वहाबी सबसे ज़्यादा मुखालफ़त करते हैंः अल्लाह तआला के अलावा किसी से मदद या हिफ़ाज़त का पूछना, जिसे वो

शिर्क कहते हैं।असल में, जैसे के सारे मुसलमान जानते हैं; सच्चा इस्तिखारा सिर्फ़ अल्लाह तआला के लिए होता है। बहरहाल, इस बात की इजाज़त है ये कहना तशबिहन कि कोई किसी के लिए इस्तिखारा कर सकता है, क्योंकि, सूरत अल-किस्सास की 15वीं आयत में ऐलान हैः **"उसके काबिले के लोग दुश्मन के खिलाफ़ उसके लिए इस्तिखारा कर सकते हैं।"** एक हदीस शरीफ़ से रिवायत है, **"वो आदम** (अलैहि स-सलाम) **के लिए महशर के मकाम पर इस्तिखारा कर सकते हैं।"** अल--हसीन में एक हदीस शरीफ़ से रिवायत है, **"जिसे मदद चाहिए वो कह सकता है, ए अल्लाह के बंदे! मेरी मदद कर!"** ये हदीस शरीफ़ एक शख्स को हुकूम देती है जो उसके नज़दीक नहीं हैं उसे वो मदद के लिए **पुकार सकता है। (अल-उसूल अल-अरवा फी तरदीद अल वहाबिया** (फारसी में) दूसरे हिस्से का आखिर, भारत, **1346 1928** ए . डी ; फोटोग्राफ़िक रिप्रोडक्शन, इस्तांबुल, **1395 1975** ए . डी। ये किताब मुहम्मद हसन जान साहिब, हज़रत इमाम रब्बानी रहमतुल्लाहि तआला अलैहिमा के पौतों में से एक के ज़रिए लिखी गई थी।मुसंनिफ़, जान साहिब ने, वहाबियों और दूसरे ला-मज़हबियों की अपने अरबी के काम **तरीक अन-नजाअत,** भारत, **1350** (उर्दू तुर्जमें के साथ); फोटोग्राफ़ी की पनदोतबादन/repruduction, इस्तांबुल, **1396** (**1976** ए . डी .) में तरदीद की।) **अल-उसूल-उल-अरबा** से तर्जुमा यहाँ खत्म हुआ।

[हर लफ़्ज़ अलग शनाखत का मआनी रखता है, जिसे उस लफ़्ज़ का असली मआनी कहा जाता है। लफ़्ज़ को मजाज़ कह सकते हैं जब ये अपनी असली मआनी में इस्तेमाल न हो लेकिन किसी दूसरे मआनी में जो उससे मिलता हुआ हो जब एक लफ़्ज़ अल्लाह तआला के लिए मखसूस इंसानी मखलूक के लिए इस्तेमाल होता है **मजाज़** के तौर पर तो, वहाबी लोग सोचते हैं कि ये लफ़्ज़ उसके असली मआनी के साथ इस्तेमाल हुआ। इसलिए, वो उस शख्स को जिसने ये लफ़्ज़ इस्तेमाल किया उसे मुश्रिक या काफ़िर कहते हैं। लेकिन उन्हें इस हकीकत पर ध्यान देना चहिए कि ये अलफ़ाज़ आयात और हदीस-ए-शरीफ़ में इंसानी मखलूक के लिए इस्तेमाल किए गए हैं।]

रसूलुल्लाह (अलैहि-स-सलाम) की और औलिया की शफ़ाअत (हिमायत और मदद मांगने का मतलब ये नहीं हैं कि अल्लाह तआला की तरफ़ से हट गए या अपने खालिक को भूल गए हैं। ये उसी तरह है जैसे उससे बारिश की उम्मीद करना बादलो के सबब या वासते से; दवाई लेते हुए उससे इलाज की उम्मीद रखना, तोपों, बम रॉकेट और जहाज़ों का इस्तेमाल करते हुए उससे जीत की उम्मीद करना। ये सब असबाब हैं। अल्लाह तआला इन असबाब के ज़रिए सब चीज़ें तखलीक करता है। इन चीज़ों पर कायम रहना मुश्रिक पन (शिर्क) नहीं है। नबी अलैहिम -उस-सलाम हमेशा असबाब को चिमटते थे। जैसे कि हम फव्वारे पर जाते हैं पानी पीने के लिए, जो अल्लाह तआला ने बनाया, और बेकरी जाते हैं ब्रेड लेने के लिए, जिसे फिर अल्लाह तआला ने

बनाया, और जैसे कि हम हथ्थियार बनाते हैं और अपने सैनिकों को ड्रिल और सीखाते हैं ताकि अल्लाह तआला हमें जीत दे सके, इसलिए हम अपने दिलो को नबी या वली की रूहों पर लगाते हैं ताकि अल्लाह तआला हमारी इबादात कुवूल कर ले। एक रेडियो का इस्तेमाल करना आवाज़ सुनने के लिए जिसे तखलिक किया उसका मतलव ये नहीं कि हम उसे भूल गए और एक बॉक्स का सहारा लिया, क्योंकि वो अकेला है जिसने ये खासियत, ये ताकत रेडियो बॉक्स के औज़ार को दी। अल्लाह तआला ने अपनी कुदरते कामल सब चीज़ों में छपवाई है। एक मुश्रिक बुतो को पूजता है लेकिन अल्लाह तआला के बारे में नहीं सोचता। एक मुसलमान, जब वो असबाब और ज़राए को इस्तेमाल करता है अल्लाह तआला के बारे में सोचता है, जो असबाव और तखलीकों को खासियतें और तासिर देता है। जो कुछ वो चाहता है वो अल्लाह तआला से इसकी उम्मीद करता है। वो जानता है कि जो कुछ भी वो ले रहा हैं वो अल्लाह से आ रहा है। ऊपर बताई गई आयत का मआनी ये ज़ाहिर करते हैं कि ये सही है। यानी, जब हर सलात में सूरह अल-फातिहा कहते हैं तो मोमिन कहता है, 'ए मेरे रब! मैं अपनी दुनियावी इच्छाऔं और ज़रूरतों को हासिल करने के लिए, माद्दी और साईसी असवाबों पर पकड़ रखता हूँ और मेरी मदद करने के लिए अपने प्यारे बंदो से पूछता हूँ जैसा कि मैने ऐसा किया, और हमैशा, मैं यकीन रखता हूँ कि तू अकेला देने वाला है, इच्छाओं का खालिक। अकेले तुझ से ही मुझे उम्मीद है मोमिन जो रोज़ ये कहते हैं वो मुश्रिक नहीं हो सकते।

नबियों और औलिया की रूहों से माँगना इन असबाब को पकड़ना है, जिन्हें अल्लाह तआला ने तखलीक किया है। सूरतउल-फातिहा की ये आयत वाज़ेह तौर पर बयान करती है कि वो मुश्रिक नहीं बल्कि सच्चे मोमिन हैं। वहाबी भी माद्दी और साईंसी ज़राओं पर कायम हैं। वो अपनी जनसी खवाहिशत को किसी भी ज़रिए से पूरा करते हैं। बल्कि वो नबियों या औलियाओं को सालिस के तौर पर सहारा लेने को शिर्क कहते हैं।)

क्योंकि मुहम्मद इबन अबदुल वहाब के लफ़्ज़ जनसी ख़ुवाहिशात के मुताबिक थे वो जो मज़हबी इल्म नहीं रखते थे उन्हें आसानी से यकीन कर लेते थे। वो इस बात पर ज़ोर देते थे कि अहले-सुन्नत के उलेमा ओर सही रास्ते/तरीके के मुसलमान काफ़िर थे। अमीर (रहनुमा) वहाबियत को उनकी ताकत को बढाने की ख़ुवाहिशात और अपनी ज़मीनों और हदों को बढ़ाने में मुवातिर होते थे। वो अरब कबीलों को वहाबी बनने पर ज़ोर दे ते थे। जो उन पर यकीन नहीं रखते थे उन्हें वो कत्ल कर देते थे। गाँव वाले मौत के डर से, दरिया के अमीर, मुहम्मद इबन सऊद की फरमाबरदारी करते थे वह अमीर के तौर पर ऐसा सिपाही बना जो अपनी ख़ुवाहिशातों के लिए ग़ैर वहाबियों की जाएदाद ज़िंदगी और अज़मत पर हमला करता।

शैख सुलैमान, मुहम्मद इबन अबद-वहाबी के भाई जो अहले-सुन्नत के आलिम थे। इस मुबारक शख्स ने वहाबियत की अपनी किताब **अस-सवाईक अल-इलाहिया फी र-रददी अला ल-वहाबिया** में बड़ी मज़म्मत की ओर इसके

बिदअती अकाईद को बढ़ने से रोक दिया। ये कीमती किताब साल **1306** में छपी थी। ये ऑफसेट अमल में इस्तांबुल में **1395** [**1975** ए .डी.] भी छपी। मुहम्मद के उस्ताद जिन्हें एहसास हुआ कि इसने बुराई की तरफ रास्ता खोल दिया है, उसकी गलत किताबों की तरदीद की। उन्होने ये ऐलान किया कि वो रास्ते से भटक गया है। उन्होने साबित किया कि वहाबियों ने आयात और हदीसों को गलत मआनी दिए है। ताहम गाँव वाले की नाराज़गी और दुश्मनी मोमिनो के खिलाफ़ और बढ़ गई।

वहाबियत इल्म से नहीं फैला बल्कि ला इल्म लोगो के ज़रिए जुल्म और खूनखराबे से फैला। इन ज़ालिमो में से सबसे ज़ालिम मुहम्मद इबन सऊद दरिया का अमीर था जो बहुत पत्थर दिल था। ये आदमी बनी हनीफ़ी कबीले का था और उन बेवकूफ़ों की नसलो में से जो मुसेलमत अल-कज़ाब को नबी मानते थे। वो **1178** [**1765**ए. डी]में मर गया था ओर उसका बेटा अबद-उल-अज़ीज़ उसका जानशीन बना, जो अपनी बारी में, **1217** में एक शिया के ज़रिए मारा गया। उसका बेटा सऊद उसका जानशीन बना, जो **1231** में मर गया। उसके बेटे अबदुल्लाह ने उसकी जगह ली, **1240** में सिर्फ़ इस्तांबुल में फाँसी दिए जाने के लिए। फिर उसकी जगह अबद-उल-अज़ीज़ के पोते तरकी बिन अबदुल्लाह ने ली। जिस शख्स ने उसकी जगह ली, **1254** में, वो उसका बेटा फैसल था, जिस पर उसकी बारी में उसका बेटा अबदुल्लाह **1282** में कामयाब हुआ। उसका भाई अबदुल रहमान और उसका बेटा अबदुल अज़ीज़ कुवैत में

मुकीम हो गए। **1319** [**1901** ए .डी.] में अबदुल-अज़ीज़ रियाद चला गया और अमीर बन गया। **1918** में उसने बरतानिया की मदद से मक्का पर हमला किया। **1351** [**1932** ए डी.] में उसने सऊदी अरबी रियास्त कायम की। हमने **1991** में जारी अखबारों में पढ़ा कि सऊदी के अमीर, फाहद ने रूस के काफ़िरों को इमदाद के तौर पर चार बिलिअन डॉलर भेजे जो अफ़ग़ानिस्तान में मुजाहिदीन से लड़ रहे थे।

वहअबी दावा करते हैं कि वो अल्लाह तआला की वहदानियत को मानने के रास्ते में ओर कुफ्र से बचने में संजीदा हैं, ये कि मुसलमान छ सौ सालो से मुश्रिक है; और वो उन्हें कुफ्र से बाचाने की कोशिश में लगे हैं। अपने आपको सही साबित करने के लिए, उन्होने सूरत अल-एहकाफ़ की **5**वीं आयत करीमा ओर सूरत यूनुस की **106**वीं आयत करीमा को पेश किया। अगरचे, कुरआन अल-करीम के सारे तवसरे इतिफ़ाक राए से ये लिखते हैं कि ये दोनो आयात और दूसरी बहुत सी मुश्रिकीन के लिए उतारी गई। इन आयात में से पहलीः **"उस से ज़्यादा कोई हयातयाती नहीं जो अल्लाह तआला से फिर जाए और उन चीज़ें की इबादात करे जो दुनिया के खात्में तक सुनाई न दे।"** और दूसरी हैः "मक्का के मुश्रिकीन को बता दो, **'मैंने चीज़ों की इबादात करने के लिए हुकूम नहीं दिया, जो न तो फाएदेमंद हैं और न ही नुकसानदायक। अगर तुम अल्लाह तआला के अलाव किसी और की इबादत करते हो तो तुम अपने आप को तशद्दुद और नुकसान पहुँचाते हो।**

कशफ़ अश-शुबहात किताब सूरत अज़-ज़ुमर की तीसरी आयत से मआमलात जो ऐलान करती हैः **"जो लोग अल्लाह तआला के सिवा चीज़े कुबूल करते हैं जिसपे कि मुहाफ़िज़ीन कहते हैं; अगर हम उनकी इबादत करते हैं; ताकि वो हमें अल्लाह तआला तक पहुँचाने में मदद कर सकें और हमारे लिए शिफात करे।"** ये आयत करीमा मुश्रिकीन के लफ़्ज़ बयान करते हैं जो बुतों की पूजा करते हैं। ये किताब मुसलमान को पसंद करती हैं जो ऐसे मुश्रिकों से शिफ़ाअत का पूछते हैं और जानबूझ कर कहते हैं कि मुश्रिकीन भी ये मानते हैं कि उनके बुत तखलीकी नहीं हैं बल्कि वो अल्लाह तआला अकेला बनाने वाला है। इस आयत करीमा की तश्रीह में, **रूह अल-बयान** किताब कहती है, "इंसानी तखलीक को खालिक की काबिलियत मानने के साथ तखलीक किया जाता है, जिसने उन्हें और सारी चीज़ों को तखलीक किया। हर इंसानी तखलीक अपने खालिक की इबादत करने की और उसकी तरफ़ मतवज्जेह होतो है। ताहम, ये काबिलियत और इच्छा बेकार है, नफ़स के लिए, शैतान या बुरे साथी आदमी को धोखा दे सकते हैं, [और नतीजे के तौर पर, ये नाजाईज़ इच्छा पामाल हो जाती हैं;] और आदमी एक [या तो वो खालिक और आखिरी दिन का काफ़िर जैसे इश्तराकी और राहिब या] मुश्तरिक बन जाता है। एक मुश्रिक अल्लाह तआला तक रसाई नहीं कर सकता, नाहीं वो उसे जानता है। कीमती चीज़ मारिफ़अ इल्म है, जो शिर्क को खत्म करके और तौहीद को गले लगाकर आगे बढ़ती है। इसकी नबियों (अलैहि स-सलाम) और उनकी किताबो पर यकीन करना है और उनकी तकलीद करना

है।अल्लाह तआला की तरफ़ जाने का सिर्फ़ यही रास्ता है।सजदा करने की खुवी खुद कुदरती शैतान को दी गई थी, लेकिन उसने अपने नफ़स के लिए नामुनासिब तरीके से सजदे से इंकार कर दिया।कदीम यूनानी फलसफ़ी काफ़िर हो गया था क्योंकि वो अल्लाह तआला तक रसाई नबियों (अलैहि स-सलाम) की तकलीद करके नहीं बल्कि अपने वुजुहात और नफ़स के ज़रिए चाहता था।मुसलमान, अल्लाह तआला की तरफ़ मतवज्जेह होते हैं, अगरचे आपको इस्लाम में ढालते हैं, इस तरह उनके दिल रूहानी रोशनी से भर जाते हैं।अल्लाह तअशला की सिफ़त 'जमाल' (खुवसूरती) खुद उनकी रूहों में ज़ाहिर होती है।मुशरिकीन, नबी या इस्लाम की तकलीद न करते हुए, बल्कि अपने नफस, अपने खराब दिमाग़ो और विदअत के ज़रिए, अल्लाह तआला तक रसाई करता है और इस तरह उनके दिल सियाह और उनकी रूहें छिप जाती हैं।इस आयत करीमा के खात्में पर अल्लाह तआला फरमाता है, कि वो अपने बयानात में झूठे हैं; के "हम बुतों की इबादत करते हैं ताकि वो हमारी श्फ़ाअत करें।" जैसे के देखा गया ये बहुत बेइंसाफ़ी है।

सूरत अल-लुकमान की 25वीं आयत करीमा, जो कहती है, **"अगर तुम काफिरों से पूछोगे, 'ज़मीन और आसमान किसने बनाए?' वो कहेंगे, बेशक अल्लाह तआला ने उन्हें तखलीक किया,"** और सूरत अज़-ज़खरफ़, जो कहती है, **"अगर तुम उनसे पूछोगे जो अल्लाह तआला के अलावा दूसरी चीज़ों की इबादत करते है, 'उन्हें किसने बनाया?' वो कहेंगे, बेशक अल्लाह तआला ने**

उन्हें बनाया," दस्तावेज़ के तौर पर लेना और कहना कि "मुशरिकीन, भी, जानते हैं कि खालिक अकेला अल्लाह है। वो बुतों की इबादत करते है ताकि वो इंसाफ़ वाले दिन हमारे लिए शफ़ाअत करें। इस वजह से वो मुश्रिक और काफ़िर बन गए।" जमील सिददीक-अज़-ज़हावी रहमतुलाहि तआला अलैह इराक के एक आलिम ने अपने काम **अल-फज़्र अस-सादिक फि-र-रददी अला ल-मनकिरि त-तवस्सुलि व ल-करामति व ल-हवारिक,** [मिस्र में 1323 (1905 ए .डी.) में छपी], फोटोग्रफ़िक दूसरा reproduction, इस्तांबुल, 196 (1976 ए .डी.) में इस आयत ए करीमा को वाज़ेह किया और साबित किया कि इसकी गलत तशरीह की गई है। जमील सादिक इस्तांबुल की युनिवर्सिटी में इल्म अल-कलाम पढ़ाते थे। वो 1355 (1936 ए .डी़) में फौत हुए। 1956 का अल-मुनजिद उनकी एक तस्वीर देता है।)

हम, मुसलमान, नबियों (अलैहि स-सलाम) या औलिया (रहिमाहुम -अल्लाह तआला) की इबादत नहीं करते और कहते हैं के वो अल्लाह तआला के साथी या शरीक नहीं हैं। हम मानते हैं कि वो तखलीक और इंसानी बशर थे और ये कि वो इबादत के लायक नहीं। हम मानते हैं कि वो अल्लाह तआला के प्यारे बंदे हैं, और वो अपने बंदो पर अपने प्यारों के लिए रहम करता है। अल्लाह तआला अकेला फायदे और नुकसान को बनाने वाला है। वो अकेला इबादत के लायक है। हम कहते हैं कि़ वो अपने बंदो पर अपने प्यारों के लिए रहम करता है। मुश्रिकों के लिए, अगरचे वो, अपनी तखलीक के

अंदर बसी जानकारी के सबब, कहते हैं कि उनके बुत तखलीकी नहीं हैं, और क्योंकि उन्होने नबियों (अलैहि स-सलाम) की तकलीद के ज़रिए ये छिपा हुआ इल्म तैयार किया, वो मानते हैं कि उनके बुत इबादत के लायक हैं, और इसलिए वो उनकी इबादत करते हैं। क्योंकि वो कहते हैं कि उनके बुत इबादत के लायक हैं, वो मुश्रिक बन जाते हैं। दूसरी सूरत में, वो ये कहकर कि वो शफ़ाअत चाहते हैं मुश्रिक नहीं बन सकते। जेसे के देखा गया अहले सुन्नत को बुतपरस्त काफ़िरों से मिलाना पूरे तौर पर गलत है। ये सारी आयतें बुतपरस्त काफ़िरों ओर मुश्रिकीन के लिए भेजी गई। **कशफ़ अश-शुबहात** किताब ने इन आयात को गलत मआनी दिए हैं, गलत तर्क देते हुए और कहना के अहले सुन्नत के मुसलमान मुश्रिक हैं। इस्दा बात की भी सिफ़ारिश की गई कि ग़ैर-वहावी मुसलमानो को मार दिया जाए और उनकी जाएदाद पर कब्ज़ा कर लिया जाए।

अबदुल्लाह इबन उमर (रज़ी-अल्लाहु अनहुमा) के ज़रिए दो हदीसे रिवायत हैंः **"उन्होने सीधा रास्ता छोड़ दिया। मुसलमानो पर वो आयत लगाते हैं जो काफ़िरो के लिए नाज़िल की गई थीं,"** और "उम्मत की तरफ़ से मेरे सारे खौफ़, सबसे ज़्यादा खतरनाक चीज़ कुरआन अल-करीम की तशरीह उनकी अपनी राए के मुताबिक और ग़लत तर्जुमा है। ये दो हदीसें पहले बतााई गई थीं कि ला-मज़हबी ज़ाहिर होंगे और जो आयत काफ़िरों के लिए उतारी गई उनकी गलत तशरीह कर वो उन्हें मुसलमानों के खिलाफ़ इस्तेमाल करेंगे।

दूसरा शख्स जिसने ये बावर किया के मुहम्मद इबन अबद अल वहाब गलत खयालात रखता है और बाद में नुकसानदायक हो सकता है और जो उसे सलाह देते थे वो शेख मुहम्मद इबन सुलैमान अल मदनी (डी . **1194/1780** मदीना, रहिमाल्लाहु तआला) मदीना के अज़ीम उलेमा में से एक थे।वो शाफ़ी-ई फिकह के आलिम थे और अपने बहुत सारी किताबें लिखीं।इबन हजर अल-मक्की (रहिमह-अल्लाहु तआला) पर उनकी तशरीह **अत-तौहफत अल मुहताज, मिनहाज** किताब की तफ़सीर, ने बहुत शौहरत हासिल की।अपनी दो जिल्द की, जिसका नाम **अल-फतवा** है, उन्होने कहा, "ए मुहम्मद इबन अबद अल वहाबी! मुसलमानो को बदनाम मत करो! मैं अल्लाह तआला के लिए तुम्हें सलाह देता हूँ।हाँ, अगर कोई कहता है कि अल्लाह तआला के अलावा कोई अमल तखलीक करता है, इसे सच बता दो।लेकिन जो असबाब (वसीला) को चिपके हैं और मानते हैं कि असबाब और मोस्सिर ताकत दोनो उनमें अल्लाह तआला की तरफ़ से तखलीक हुई हैं उन्हें काफ़िर मत कहो।तुम भी मुसलमान हो।एक मुसलमान को एक बिदअती कहना ज़्यादा सही हैं बनिस्बत सारे मुसलमानो को ऐसा कहने से।वो जो कुबे को छोड़ते हैं उनकी भटकने की ज़्यादा संभावना होती है।सूरत अन-निसा की **114**वीं आयत-करीमा मेरे इन लफ़्ज़ों को सही साबित करती हैः "**अगर** एक शख्स, रहनुमाई के रास्ते को सीखने के बाद, नबी (अलैहि स-सलाम) **की मुखालफत करे और मोमिनों के यकीन और इबादात से हट जाए, दूसरी दुनिया में हम उसे**

कुफ्र और शिर्क में उठाएंगें, जिसके साथ वो तकलीद करता आया था, और हम उसे दोज़ख में धकेलेंगे।"

बहरहाल वहाबियों के बहुत सारे गलत अकीदे थे, वो तीन उसूलों पर मुबनी हैंः **1-** वो कहते हैं कि अमाल या इबादात ईमान में शामिल हैं और वे जो फर्ज़ अदा नहीं करते अगरचे वो जानते हैं कि ये फर्ज़ है, मिसाल के तौर पर, सलात आलस की वजह से या ज़कात कंजूसी की वजह से वो काफ़िर बन जाता है और उसे कत्ल कर देना चाहिए और उसकी मिलकियत अश-सिहरिस्तानी ने कहाः "अहले सुन्नत के उलेमा ने इतिफ़ाक राए से ये कहा कि इबादात ईमान में शामिल नहीं है। हालांकि यकीन रखता है कि ये फर्ज़ हैं, लेकिन फर्ज़ अदा नहीं करता अपनी सुस्ती की वजह से तो वो काफ़िर नहीं बन जाता। जो सलात अदा नहीं करते उनके मामले में एक राए नहीं है; हनवली मसलक के मुताविक, एक सख्स जो सुस्ती की वजह से सलात अदा नहीं करता वो एक काफ़िर बन जाता है। (**अल-मिलाल व -निहाल** (तुर्की) सफ़ह **63,** काहिरा, **1070** ए.एच) [सना-उल्लाह पानीपती रहमतुल्लाहि अलैह ने अपनी किताव **मा ला budd**] के शुरू में कहा, "एक मुसलमान एक बड़ा गुनाह करके काफ़िर नहीं बन जाता। अगर वो दोज़ख में डाला जाएगा तो, उसे देर या सवेर जन्नत में डाल दिया जाएगा। वो अवदी जन्नत में रहेगा।" ये किताव फारसी में हैं और **1376** [**1956** ए .डी.] में दिल्ली में छापी गई थी और **1410** [**1990** ए .डी.] में हकीकत किताबेवी इस्तांबुल में दोवारा छापी गई। हनवली मसलक

में, ये कहा गया कि सिर्फ़ वही जो सलात अदा नहीं करते वही काफ़िर बन जाएंगे। ऐसा दूसरी किस्म की इबादत के लिए नहीं कहा गया। इसलिए, इस मामले में वहाबियों को हनबली मानना गलती जैसा कि ऊपर बताया गया है, वो जिनका अहले सुन्नत से तअल्लुक नहीं वो तो हनबली भी नहीं हैं। इसी मज़मून की तफ़सील के लिए हमारी **मुसलमानो के लिए सलाह किताब** भी देखिए।) वो जो चारो मसालिक में से किसी एक से भी तअल्लुक नहीं रखते जो अहले सुन्नत से तअल्लुक नहीं रखते।

2- वाहाबी कहते हैं कि जो नबियों (अलैहिमु स-सलात) या औलिया (रहिमाहुम-अल्लाहु तआला) की रूहों से शफाअत माँगते हैं या जो उनके मज़ारो पर जाते हैं और दुआ करते हैं वो काफिर बन जाएगा कयोंकी मुरदे की कोई भावना नहीं होती।

अगर एक शख्स जो एक मुरदा शख्स से कब्र में बात कर रहा है वो एक काफ़िर बन जाता तो हमारे नबी (सल्लल्ल्लाहु अलैहि वसल्लम), अज़ीम उलेमा और औलिया इस तरीके से इबादत नहीं करते। ये हमारे नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की आदत थी **बकी** कब्रिस्तान मदीना में और उहूद के शहीदों पर जाने की। दरहकीकत, वहाबियों की किताब **फत्ह अल-मजीद** के **485** वें सफ़हें पर लिखा है कि आप उनको सलाम करते थे और बातें करते थे।

हमारे नबी (सल्लाल्लाहु अलैहि वसल्लम) हमेशा अपनी इबादत में कहते थे, **"अल्लाहुम्मा इन्नी अस-सलुका बि-हक्की स-साएलीना अलैका,"** (ए मेरे अल्लाह तआला! मैं तुझ से उन लोगो के लिए पूछता हूँ जिन्हें तूने जो उन्होने पूछा वो दिया) और उनकी सिफ़ारिश की दुआ करता हूँ। जब आपने हज़रत फातिमा को दफ़नाया, हज़रत अली की माँ को (रज़ी अल्लाहु अनहुमा) अपने मुबारक हाथों से, आपने फरमाया, **"इग़ाफिर लि-उम्मी फातिमा निति असद व वस्सि" अलैहा मदखलहा बि-हक्की नबीय्यका व ल-अनबिया इल्लज़ीना मिन कबली इन्नका अरहमु र-राहिमीन।"** (ए अल्लाह तआला! माँ फातिमा बिनति असद को, उसके गुनाहों के लिए माफ़ करदे! जिस जगह वो है उसे चौड़ा कर दे! मेरी ये दुआ अपने प्यारे नबी और मेरे पहले आने वाले नबियों के लिए कुबूल फरमा! तू रहम करने वाला महरबान है!) एक हदीस शरीफ़ में उसमान इबन हुनैफ़ (रज़ी-अल्लाहु अनह) अंसार के अज़ीमों में से एक ने बयान किया, ये कहा जाए कि किस तरह नबी (अलैहि स-सलाम) ने एक अंधे आदमी को हुकूम दिया, जिसने आपसे अपनी शिफ़ा के लिए दुआ करने को कहा, उसे वुज़ू करके दो रकात सलात पढ़ने को कहा और फिर ये कहने के लिए कहा, **"अल्लाहुम्मा इन्नी असलुका व अतवज्जाहु इलैका बि-नबिय्येका मुहम्मदीन-नबिई र-रहमा, या मुहम्मद इन्नी अतवज्जाहु बिका इला रब्बी फी हजाती हादिही लि-तकदिया ली, अल्लाहुम्मा शाफ़ीहु फिया।"** इस दुआ में अंधे आदमी को मुहम्मद (अलैहि स-सलाम) के ज़रिए खालिस के तौर पर होने के लिए हुकूम दिया ताकि उसकी दुआ कुबूल की

जाए। सहाबातुल-इकराम अकसर इस दुआ को पढ़ते थे, जो **अशिआत अल-इमामत** की दूसरी जिल्द में और **अल-हिसन अल-हसीन** में भी उसके हवाले देते हुए बयान हैं, उसकी तफ़सीर, तशरीह के तौर में भी, "मैं तेरे नबी के ज़रिए तुझ तक आया।"

ये दुआएँ दिखाती हैं कि अल्लाह तआला जिन्हें चाहता है उन्के वसीले से दुआ मांगने की इजाज़त है।"

शैख अली महफ़ूज़, जो **1361** (**1942** ए .डी) में फौत हो गए थे, **जामि अल-अज़हर** के अज़ीम उलेमा, ने अपनी किताब **अल-इबदाअ में** इबने तेमिया और अबदुह की बहुत तारीफ़ की। इसके बावजूद, उन्होने उसी किताब के **213**वें सफ़हें पर कहाः "ये कहना सही नहीं है कि अज़ीम औलिया (रहिमाहुम अध्ल्लाह तआला) मरने के बाद दुनियावी मामलात निपटाते हैं, जैसे के बीमारो को ठीक करना, जो डूबने वाले हैं और खोई हुई चीज़ें दिला देते हैं। ये कहना गलत है, क्योंकि औलिया बहुत अज़ीम हैं। अल्लाह तआला ने ये काम उनके लिए छोड़ दिए या वो जो उनसे जुड़ते हैं वो गलत नहीं होते। लेकिन चाहे वो ज़िंदा हो या फौत हो गए हों, अल्लाह तआला, अपने औलिया में से उन्हीं को बरकतें देता है, जिन्हें वो चाहता है, और उनकी करामात के ज़रिए। वो बीमारों का इलाज करता है, जो डूबने वाले होते है उन्हें बचाता है, जो दुश्मनों से लड़ रहें हों उनकी मदद करता है और खोई चीज़ें मिलवाता है। ये मतकी है। कुरआन अल करीम ने भी इनह काईक को ज़ाहिर

किया।" (शैख अली महफूज़, **अल-इबदाक,** सफ़ह **213**, काहिरा, **1375** (**1956** ए .डी) अबदुल्लाह अद-दसूकी और यूसुफ अद-दजवी, जामी-अल-अज़हर के प्रोफेसर ने **अल-इबादा** के आखिर में किताब की तारीफ़ करते हुए अकीदे लिखे।)

अबदुल ग़नी अन-नबलसी (रहिमह-अल्लाहु तआला) लिखते हैंः "एक हदीस कुदसी, जिसे अल-बुखारी ने अबू हुरेरा (रज़ी-अल्लाहु तआला अनह) से बयान कियाः अल्लाह तआला ने ऐलान कियाः **'मेरे बंदे मुझे इतने करीब से मतवज्जेह नहीं कर सकते जितने के वो फर्ज़ के ज़रिए मुझे मतवज्जेह कर सकते हैं।अगर मेरे बंदे फाज़िल इबादत करते हैं, मैं उन्हें बहुत पसंद करता हूँ कि वो मेरे साथ सुनते हैं, मेरे साथ देखते हैं, मेरे साथ हर चीज़ पकड़ते हैं, मेरे साथ चलते हैं, और मैं उन्हें सब देता हूँ जो वो मुझ से पूछते हैं।अगर वो मुझ पर यकीन करते हैं, मैं उनकी हिफ़ाज़त करता हूँ।"** फाज़िल इबादत जो यहाँ ज़िकर हैं, [**वो मराक अल-फलाह** और अत-तहतावी की तश्रीह में साफ़ लिखा हैं।बराए महतरबानी सफ़ह **428** देंखे] सुन्नत और फाज़िल इबादात वो हैं जो उनके ज़रिए की जाती हैं जो इबादात करते हैं जो फर्ज़ होती हैं।ये हदीस शरीफ़ दिखाती हैं के जो फर्ज़ इबादात अदा करने के बाद, फाज़िल करते हैं उन्हें अल्लाह तआला का प्यार हासिल होता है और उसकी इबादत कुबूल होती हैं।(अबदुल-ग़नी अन-नबुलसी, **अल-हकीकत अन-नदिय्या,** सफ़ह **182** इस्तांबुल, **1290**) ज़िंदा या मुरदा, जब ऐसे लोग दूसरो के लिए दुआ करते हैं,

लोग जिनके लिए वो इबादत करते हैं उन्हें जो इच्छा होती है वो उन्हे मिल जाती हे। ऐसे लोग जब मर जाते हैं तब भी सुनते हैं। जैसे के वो ज़िंदा थे वो ऐसा नहीं करते, जो खाली हाथ पूछते थे वो उन्हें मना नहीं करते थे, और वो उनके लिए दुआ करते थे। इस वजह से, एक हदीस शरीफ़ का हवाला हैः **"जब तुम अपने मामलात में मुश्किल में हो तो, उन से पूछो जो कब्रों में हैं।"** इस हदीस शरीफ़ के मआनी साफ़ हैं; और उसकी तावील (दूसरे तरीके से तश्रीह) की इजाज़त नहीं हैं। अलूसी की तावील गलत हैं।

असल हकीकत में, "मुसलमान जब मर जाते हैं तब भी मुसलमान रहते हैं जैसे के उसी हालत में जब वो सो रहे होते हैं। नबी (अलेहि स-सलाम) ही रहेंगे मरने के बाद भी जैसे वो सो रहे होः क्योंकि ये रूह होती हैं जो एक मुसलमान या एक नबी होती हैं। जब एक आदमी मर जाता है, तो उसकी रूह नहीं बदलती। ये हकीकत अबदुल्लाह अन-नसफ़ी के ज़रिए किताब **उमदत अल-अकाईद** [**1259** (**1843** ए . डी.) में लंदन में छपी] में लिखी हुई हैं। इसी तरह, औलिया अब भी औलिया हैं (रहिमाहम अल्लाहु तआला) जब वो मर जाते हैं वैसे ही जैसे जब वो सो रहे हों। वो जो इसको नहीं मानता वो लाइल्म और ज़िददी हैं। मैं दूसरी किताब में साबित कर दूँगा कि औलिया मरने के बाद भी करामात रखते हैं।" (**अल-हदीका अन-नदिय्या** सफ़ह, **2901**) हनफ़ी आलिम अहमद इबन सय्यैद मुहम्मद अल-मक्की अल-हमवी और शाफ़ी-ई आलिम अहमद इबन अहमद अस-सुजाई और मुहम्मद अश शाबरी अल-मिसरी

ने किताबचे लिखे जिसमें उन्होने सुबूत के साथ साबित किया कि औलिया करामात रखते थे, उनकी करामात उनके मरने के बाद तक जारी रही, और तवस्सुल या इस्तिखारा की उनकी कब्रों पर इजाज़त (जाईज़) थी। (ये तीनो किताबचे अहमद जेनी दहलान रहिमाह-अल्लाहु तआला अलैह की अद-दुरार अस-सानिया फिर रददी अल ल-वहाबिया के साथ एक साथ छपीं। (काहिरा **1319** (**1901** ए . डी.); फोटोग्राफ़ीक रिप्रोडक्शन इस्तांबुल, **1396** (**1976** ए डी में।)

मुहम्मद हादिमी एफंदी रहिमह-अल्लाहु तआला कोनया के (डी . **1176/1762** कोनया में) लिखते हैंः "औलिया के करामत सच्चे हैं। एक **वली** एक मुसलमान हैं जो **अल-आरिफ़ु बिल्लाह** (कोई जो अल्लाह तआाल और उसकी सिफ़ात जितना मुमकिन हो सके जानता हो)। वो कई इबादात और ताअत अदा करता है। वो बहुत ध्यान से गुनाहों और अपने नफ़स की जनसी इच्छाओं को नज़रअंदाज़ करता है। अल्लाह तआला की तरफ़ से पैदा होने वाली उसके असबाब के कानून और इल्म के कानून के बाहर चीज़ें **खारिक-उल-अदा** (ग़ैर मामूली चीज़ें) कहते हैं, जो आठ किस्म की हैंः मोअजिज़ा करामात, इआना, इहान, सिहर, इबतीला, इसाबत अल-ऐन (बुरी नज़रक की वजह से असर) और इरहास। करामात एक ग़ैर मामूली घटना होती हैं जो एक पक्के मोमिन जो अल-आरिफ़ बिल्लाह होते हैं उनके ज़रिए होते हैं। वो एक नबी नहीं, एक वली हैं। अबू इस्हाक इब्राहिम अल-इसफराएनी,

एक शाफ़ी-ई आलिम, कुछ करामात से इंकार करते हैं, और सारे मुंतज़ला करामात से इंकार करते हैं।वो कहते हैं कि ये मौअजिज़ा से मुग़ालता हो सकता है और, इसलिए, नबियों में यकीन होने में मुश्किल हो सकती है।बहरहाल, एक वली जिसके ज़रिए एक करामत हुई वो नब्बुवत का दावा नहीं कर सकता, नही वो चाहता हे कि करामत हो।इस बात की इजाज़त है कि नबियों और औलियाओं के ज़रिए अल्लाह तआला से दुआ की जाए उनके मरने के बाद भी क्योंकि उनके मोअजिज़ा और करामत मरने के बाद भी बंद नहीं होते।इस तरह की इबादात को **तवस्सुल** या **इस्तिखारा** कहते हैं।अर-रमली ने, भी बिल्कुल ऐसे ही कहा है।अल-इमाम अल-हरमैन ने कहा, 'सिर्फ़ शिया मरने के बाद करामत के तसलसुल से इंकार करते हैं।' अली अजहुरी, मिस्र के मशहूर मालिकी आलिम ने कहा, 'एक वली, जब ज़िंदा होता है, वो एक म्यान में तलवार की तरह होता है।मरने के बाद म्यान से बाहर तलवार की तरह।ये बयान अबू अली सनजी ने भी अपनी किताब **नूर अल-हिदाया** में कौल किया है।ये (कुरआन अल-करीम) किताब, सुन्नत और इजमा अल-उम्मत की रोशनी में साबित किया गया है कि ये करामत सच्ची है।औलिया की लाखों करामात कई कीमती किताबो में दर्ज हैं। (**बरीका,** सफ़ह **269**) बरीका किताब से तर्जुमा यहाँ खत्म हुआ।और, एक सही हदीस इबन हुज़ेमा, अद-दार कुतनी और अत-तबरानी हदीस के आलिमों के ज़रिए बताई गई अबदुल्लाह इबन उमर (रज़ी-अल्लाहु तआला अनहुमा) के हुकूम पर कहाः **"जो मेरी कब्र पर आते हैं; उनके लिए दुआ करना मेरे लिए वाजिब हो जाता**

हैं।" इमाम अल-मनावी ने भी, इस हदीस का हवाला **कुनूज़ अद-दकाईक** में दिया है। इसके अलावा, उन्होने एक हदीस शरीफ़ लिखी, **"मेरे मरने के बाद, मेरे मज़ार पर आना बिल्कुल उसी तरह है जैसे जब मैं जिंदा हूँ उसी तरह दौरा करना"** इबन हिब्बान से; और अत-तबरानी से एक और हदीस शरीफ़, **"जो मेरी कब्र पर आएंगे मैं उनके लिए शफ़ाअत करूँगा।"** मंदरजाज़ेल दो हदीसें, जो मारफू हैं, पहली वाली इमाम अल-बज़्ज़ार के ज़रिए हवाला दी गई और दूसरी वाली **सही मुस्लिम** में लिखी है और दोनो ही अबदुल्लाह इबने उमर (रज़ी-अल्लाहु तआला अनहुमा) के हुकूम पर, जो लगभग हर मुसलमान जानता हैः **"जो मेरी कब्र पर आएंगे उनके लिए सिफ़ारिश करना मेरे लिए हलाल हो जाता है 'जो मदीनतुल-मुनव्वरा में मेरी कब्र पर आएंगे मैं इंसाफ़ वाले दिन उनके लिए सिफ़ारिश करूँगा।"(मिरात अल-मदीना (मिरात अल-हरमैन) सफ़ह 1061)**

ये बड़ी खबर है जो इस हदीस शरीफ़ में हवाला दी गई है, **"एक शख्स जो हज अदा करे और फिर मेरी कब्र पर आए वो ऐसे ही होगा जैस मुझे हयात दौरा किया"** जिसे अत-तबरानी अद-दार कुतनी और [अबद अर-रहमान] इबन अल-जौज़ी ने हवाला दिया। हदीस शरीफ़, **"एक शख्स हज अदा करने के बाद मेरे पास न आए तो मुझे बुरा लगेगा,"** जिसे अद-दार कुतनी ने रकम किया, उसको इशारा दिया है जो हज अदा करने के बाद नबी

(अलैहि स-सलाम) के रोज़े पर जाना नज़रअंदाज़ करते हैं अगरचे उनके पास कोई उज़र (नहीं होता।)

'अबद अल-अज़ीज़,अल-मदीनत अल-मुनव्वरा की इस्लामिक युनिवर्सिटी का रेक्टर, अपनी **तहकीक व इज़ाह** में लिखता हे, "इनमें से कोई भी [ऊपर वाली] हदीसें कोई दस्तावेज़ या साथ नहीं देंती।शैख अल-इस्लाम इबन तेमिय्या का कहना है कि वो सारी mawdu है।" बहरहाल, उनकी सनदें (दस्तावेज़) अज़-ज़रकानी की **अल-मवाहिब** की तफ़सीर की आठवीं जिल्द में तफ़सील से और अस-समूदी की **वफ़ात अल वफ़ाअ** के चौथी जिल्द के आखिर में लिखा है।इन किताबों में, ये भी लिखा है कि ये हदीसें हसन थीं और ये कि इबन हदीस तैमिय्या का तबसरा बेकार था।मदीना यूनिवर्सिटी के रेक्टर और हिदायत देने वाले ने अहले-सुन्नत के उलेमा की तहरीरों को झूठा बताया और उनकी जगह वहाबी के उसूलों को सारी दुनिया में उनकी किताबों के साथ फैलायाा।मुसलमानों और गैर-मुस्लिम कौमो को कायल करने के लिए कि वो सच्चे मुसलमान हैं, उन्होने एक नई पॉलिसी अपनाई; उन्होने मक्का में एक इस्लामी मर्कज़ **राबितात अल-आलम अल-इस्लामी** नाम से खोला और हर मुल्क से मज़हबी तालीम के साथ जाहिल और रिश्वतखोर आदमी चुनकर इकट्ठा किए और जिन्हें वो तंखवाहें देते थे, जो सोने के सिक्को की सैकड़ों की रकम थी।ये जाहिल लोग तालीमी औहदों पर, इनको अहले सुन्नत के आलिमों की किताबों की कोई जानकारी नहीं थी, इन्हें कटपुतलियों की तरह इस्तेमाल किया

गया।इस मर्कज़ से उन्होने अपने उसूलों को पूरी दुनिया मे तकसीम किया, जिन्हें वो **"दुनीया के मुस्लिम इत्तिहाद के फतवे"** बुलाते थे,।रमज़ान के दौरान जारी गलत फतवे में **1395** (**1975** ए . डी) में, उन्होने कहा, "औरतों के लिए जुमे की सलात अदा करना फर्ज़ है।जुमे और ईद का खुत्वा हर मुल्क की मकामी ज़बान में दिया जाए।" एक जामिद सावरी नामी मडूडी के मानने वालो में से, मक्का में इस फितने फसाद के मर्कज़ का रूकन, फौरन इस फतवे को भारत ले गया, जहाँ पर तंखवाह पाने वाले मालदार और जाहिल आदमियों के होने से औरतों को ज़बरदस्ती मस्जिदों में भेजा, और खुत्वे को कई ज़बाने पढ़ने का कदम उठाया।इस तहरीक को रोकने के लिए अहले-सुन्नत के आलिमों ने और भारत में मज़हब के सच्चे आदमियों रहिमाहु-अल्लाह तआला ने कीमती ज़राओं से फत्वे तैयार किए और फैलाया।वहावी इन फतवों की सच्चाई को झूठा नहीं ठहरा पाए।आदमियों को ये समझ आया के वो धोखा दिए गए थे, पछताए और वापिस अपनी अहले-सुन्नत की राह पर चले गए।उन फतवों में से चार जो भरोसेमंद ज़रियों पर मुबनी थे, उन्हें ऑफसेट तरीके से छापा गया और सारे मुस्लिम मुल्कों में डाक से भेज दिया गया।हर मुल्क में मज़हबी अधिकाार वाले असली आदमियों ने सारे मुसलमानों को ध्यान दिलाया, और, जो फितना इस्लाम को अंदर से तकसीम कर रहा था उसे बुझाने की कोशिश की।अल्लाह तआला का शुक्र है, कि दुनिया के हर कोने में मासूम और चौकस जवानो ने झूठ से सच्चाई का फर्क जाना।

जुमे का खुत्बा, तकबीर इफतिताह और सलात में दुआएँ इन मज़मून के बारे में समझाते हुए इबन आबिदीन रहिमाह अल्लाहु तआला ने अपने काम **राद्द अल-मुहतार** में लिखाः "अरबी ज़बान के अलावा दूसरी ज़बान में खुत्बा देना ऐसा है जैसे सलात शुरू करते वक्त दूसरी ज़बान में तकबीर इफ़तिताह ("अल्लाहु अकबर) कह दिया हो एक।तकबीर इफ़तिताह सलात के ज़िकर की तरह है, और ये मकरूह तहरीमा है कि सलात का ज़िकर और दुआएँ अरबी ज़बान के अलावा किसी दूसरी ज़बान में करना, इसे हज़रत उमर रज़ी-अल्लाहु अनह ने हराम करार दिया था।सलात के वाजिबात के सबक में उन्होने लिखाः मकरूह तहरीमा करना एक सग़ीर गुनाह का ईतकाब करना है।अगर कोई इसे लगातार करे, तो वो अपनी अदालात खो देता है। (इंसाफ़; वो मज़हबी मामलात में नाकाबिले यकीन बन जाएगा; वो एक गवाह के तौर पर कुबूल नहीं किया जाएगा।) **अत-तहतावी** में ये लिखा है कि एक शख्स जो लगातार एक छोटा गुनाह करता रहे वो फासिक बन जाता है।एक इमाम जो फासिक या बिदअती है उसके पीछे जमाअत मे सलात अदा न की जाए किसी दूसरी मस्जिद में जाया जाए।क्योंकि ये मकरूह और बिदअत था जोकि एक बड़ा गुनाह है, कि खुत्बे के एक हिस्से को या पूरे को दूसरी ज़बान में पढ़ना, सहाबतुल-इकराम और ताबिइन रहिमाहुम-अल्लाह तआला ऐशिया और अफ्रीका में हमेशा अरबी में पूरा खुत्बा देते थे, चाहे सुनने वालों को अरबी की जानकारी हो न हो ओर खुत्बा समझ आए न आए।जबकी मज़हबी इल्म फैला नहीं था उन्हें सीखाया जाना था, वो पूरा खुत्बा अरबी में पढ़ते थे।और इसी

वजह से छः सौ सालों से उसमानिया शैख अल-इस्लाम और दुनिया भर के जाने माने अज़ीम मुस्लिम आलिमो ने ऐसे ही पड़ा। वह लोग चाहते थे कि खुत्वा तुर्की में पढ़ा जाए ताकि जमाअती इसके मज़मून को अच्छी तरह से समझ सकें, लेकिन इसकी इजाज़त नहीं दी क्योंकि वो जानते थे कि तुर्की में खुत्वा देने की इजाज़त नहीं थी।

एक हदीस शरीफ़, इमाम अल-बएहकी के हवाले से अबू हुरेरा (रज़ी-अल्लाहु अनह) के हुकूम पर बयान किया **"जब एक शख्स मुझे सलाम करता हे, अल्लाह तआला मेरे जिस्म को मेरी रूह दे देता है ओर मैं उसका सलाम सुन लेता हूँ।"**इस हदीस शरीफ़ पर भरोसा करते हुए इमाम अल बएहाकी (रहिमाह-अल्लाहु तआला) ने कहा के नवी (अलैहि स-सलाम) अपनी कब्रों में ज़िंदा हैं ऐसी ज़िंदगी में जो हमारे लिए अनजान हे। और मदीना के अवदुल-अज़ीज़ इबन अवदुल्लाह ने अपनी **अल-हज व अल-उमरा** के सफ़ह **66** पर ये हदीस बयान की है और तसकरा किया कि जो नबी (अलैहि स-सलाम) की मौत का इज़हार करती है। फिर भी, उसी सफ़ह पर, वो कहता हे कि वो अपनी कब्र में ज़िंदा हैं ऐसी ज़िंदगी में जो हमारे लिए अनजान है। उनके बयानात एक दूसरे से मुखतलिफ़ हैं। दरहकीकत, ये हदीस शरीफ़ इस बात की तरफ़ इशारा करती है कि उनकी मुवारक रूह उनके जिस्म को दे दी जाती है और वो सलाम के जवाब देते हैं मज़ीद ये, दो हदीसें उसी किताब के **73**वें सफ़हें पर इस ऐलान की खबर देती हैं कि जब भी कब्रों पर जाएँ उनको

सलाम करना चाहिए,**"अस-सलामु अलैकुम अहलअद-दियारी मिन अल-मोनिनीन," कहकर**।हदीस हमें सब मुसलमानों की कब्रों पर सलाम करने का हुकूम देती हैं।कोई जो सुन सकता है उसे सलाम किया जाए या बात की जाए; अगरचे ला-मज़हबी इन हदीसों का हवाला देते हैं, वो दावा करते हैं कि मुरदे सुनते नहीं हैं, और वो उनके बारे में 'मुश्रिक' कहते हैं जो यकीन रखते हैं कि मुरदे सुन सकते हैं।वो आयात और हदीसों के गलत मआनी बताते हैं!

बहुत सारी हदीसें हैं जो ज़ाहिर करती हैं कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) अपनी कब्र में ज़िंदा हैं एक अनजान ज़िंदगी में।उनमें से कई हैं जो इशारा करती हैं कि वो सही हैं।इन हदीसों में से मंदरजाज़ेल दो हदीसों की छः मघहूर किताबों में लिखा हैः **"मैं अपनी कब्र पर सलवात सुनुँगा, कुछ दूरी से ही मुझे सलावत की किरअत की इतलाअ मिल जाएगी;" "अगर एक शख्स मेरी कब्र पर सलवात की किरअत करेगा, अल्लाह तआला एक फरिश्ता भेजेगा और मुझे इस सलवात की इतलाअ देगा।मैं इंसाफ़ वाले दिन उसकी सिफ़ारिश करूँगा।"**

अगर एक मुसलमान एक मुरदा मुसलमान की कब्र पर जाएगा जिसे वो जानता था जब वो ज़िंदा था और उसे सलाम करेगा तो मुरदा मुसलमान उसे पहचान लेगा और उसका जवाब देगा।एक हदीस शरीफ़ से बयान है इबन अबीद-दुन्या ने ऐलान किया कि एक मुरदा मुसलमान पहचानता भी है और जो उसे सलाम करता है उसका जवाब भी देता है और खुश होता है।अगर एक

शख्स मुरदा लोगो को सलाम करे जिन्हें वो नहीं जानता, वो खुश होते हैं और सलाम का जवाब देते हैं।जबकि अच्छे मुसलमान और शहीद (रहिमहुम -अल्लाह तआला) पहचानते हैं और जो उन्हें सलाम करे उसका जवाब देते हैं, तो क्या ये मुमकिन हैं कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ऐसा न करें? जैसे सूरज आसमान में पूरी दुनिया को रोशन करता है, इसलिए वो तमाम सलाम के जवाबात एक साथ देते हैं।

एक हदीस शरीफ़ कहती है, **"मेरी मरने के बाद, मैं सुनूँगा वैसे ही जब मैं हयात था।"** एक और हदीस शरीफ़ अबु यला से रिवायत है, **"नबी (अलैहिमु स-सलाम) अपनी कब्रों में ज़िंदा हैं।वो सलात अदा करते हैं।"** इब्राहिम इबन बिशर और सय्यैद अहमद अर-रिफ़ाई और दूसरे बहुत से औलिया रहिमहुम-अल्लाह तआला ने कहा कि वो रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलेहि वसल्लम) को सलाम करने के बाद जवाब सुना करते थे।

अज़ीम मुस्लिम आलिम हज़रत जलाल अद-दीन अस-सयूती ने **शरफ़ अल-महकम** किताब सवाल पूछने पर जवाब के तौर पर लिखीः "क्या ये सच्च है कि सय्यैद अहमद अर-रिफ़ा ई ने रसूलुल्लाह का मुबारक हाथ चूमा?" इस किताब में, उन्होने माकूल और रिवाएती सुबूत से साबित किया कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) अपनी कब्र में नाकाबिले यकीन ज़िंदगी में ज़िंदा थे और ये कि वो सलाम के जवाब सुनते हैं और देते हैं।उन्होने इस किताब में

ये भी वाजेह किया कि मिराज की रात रसूलुल्लाह ने मूसा अलैहि स-सलाम को अपनी कब्र मे नमाज़ पढ़ते हुए देखा।

एक हदीस शरीफ़, जो हमारी माँ हज़रत आएशा सिददीका (रज़ी-अल्लाहु अनह) से मुतअल्लिक है, कहा, **"मैं ज़हरीले गौशत के दर्द का शिकार हूँ जिसे मेने खेबर मे खाया। उस ज़हर की वजह से मेरे असाब ने तकरीबन काम करना छोड़ दिया है।"** ये हदीस शरीफ़ ज़ाहिर करती है, कि नब्बुवत के अलावा, अल्लाह तआला ने मुहम्मद, (अलैहि स-सलाम) को आलमियत में सबसे आला शहादत का दर्जा भी अता किया। अल्लाह तआला ने सूरत अल इमरान की 169वीं आयत में ऐलान कियाः **"जो अल्लाह तआला की राह में कत्ल हुए उन्हें कभी भी मरा हुआ मत समझें!** उसकी नज़र में वो ज़िंदा हैं। वो आराम कर रहे हैं।" कोई शक नहीं कि ये अज़ीम नबी (अलैीह स-सलाम), जिन्हें अल्लाह तआला की राह में ज़हर दिया गया, वो उन सब से आला हैं जो इस आयत करीमा में इस मरतबे से नवाज़े गए हैं।

इबन हिब्बान ने एक हदीस शरीफ़ की इतलाअ देते हुए कहा, **"नबियों** (अलैीहमु-स-सलाम) **के मुबारक जिस्म कभी नहीं सढ़ते। अगर एक मुसलमान मेरे लिए सलावात पढ़ता है, एक फरिश्ता उस सलवात को मुझ तक पहुँचाता है और कहता हे फलां के बेटे फलां ने और फलां ने एक सलावात पढ़ी और आपको सलाम किया।"**

इबन माजा ने एक हदीस शरीफ़ का इतलाअ देते हुए कहा, **जुमें में मेरे लिए बार बार सलावात पढ़ा करो! सलावात मुझ तक पहुँच जाती है जैसे ही वो पढ़ी जाती हैं।**"अबु द-दरदा (रज़ी-अल्लाहु तआला अनह), उस लम्हा उन लोगो में थे जो उस वक्त नबी (अलैहि स-सलाम) की सोहबत में थे, उन्होने पूछा, "क्या ये आपकी वफात के बाद भी आप तक पहुँचेगी?" नबी (अलैहि-स-सलाम) ने फरमाया, **"हाँ, मेरी वफ़ात के बाद भी मुझे इसकी इतलाअ हो जाएगी, इसलिए, ज़मीन के लिए नबियों के जिस्मो को गलाना हराम है।वो मरने के बाद भी ज़िंदा हैं, और वो आराम कर रहे हैं।"** [ये हदीस शरीफ़ **मौता-वल-कबूर** सना-उल्लादी पानी-पूतरी की किताब के आखिरी सेकशन में भी लिखी हुई है।ये किताब फारसी में हैं और देहली में **1310** [**1892** ए . डी] में इसे छापा गया था और हकीकत किताबवी के ज़रिए **1990** में इस्तांबुल में दोबारा तैयार की गई।]

हज़रत उमर (रज़ी-अल्लाहु अनह), कुदस (यरूशलेम) की फतह के बाद, नबी (अलैहि स-सलाम) के मुबारक रोज़े/कब्र (अल-कब्र अस-साआदा) में गए आपकी कब्र का दौरा किया और आपको सलाम किया।हज़रत उमर इबन अबद अल-अज़ीज़, जो एक बड़े वली थे, वो आमतौर पर दमिक्श से मदीना हुकाम को भेजते थे और उनसे आपकी मुबारक कब्र पर सलावात पढ़वाते थे और सलाम करवाते थे।हज़रत अबदुल्लाह इबन उमर, हर सफर से वापसी पर, सीधे हुजरत अस-साआदा में जाते; पहले वो रसूलुल्लाह (अलैहि स-सलाम)

को हाज़िरी देते, फिर अबू बक्र अस-सिददीक (रज़ी अल्लाहु अनह) और फिर अपने बाप को और सलाम करते। इमाम नाफ़ी ने कहा, "सौ दफ़ा से ज़्यादा मैने देखा हज़रत अबदुल्लाह इबन उमर मुबारक कब्र पर गए और कहा, अस-सलामु अलैकुम या रसूल-अल्लाह!" एक दिन हज़रत अली (रज़ी-अल्लाहु अनह) मस्जिद अश शरीफ़ गए और उन्होने जब हज़रत फोतिमा (रज़ी-अल्लाहु अनह) की कब्र देखी तो वो रोने लगे और वो और ज़्यादा रोने लगे जब वो हुजरत अस-सआदा में पहुँचे। फिर कहने लगे, अस-सलामु अलैकुम या रसूल-अल्लाह और अस-सलामु अलैकुमा, ए मेरे दो भाइयों! उन्होने नबी (अलैहि स-सलाम), हज़रत अबू बक्र और हज़रत उमर (रज़ी-अल्लाहु तआला अनहुमा) को सलाम किया।"

अल-इमाम अल-आज़म अबू हनीफ़ा (रहमतुल्लाहि अलैह) के मुताबिक, पहले एक को हज अदा करना चाहिए और फिर अल मदीनात अल-मुनव्वरा जाना चाहिए और रसूलुल्लाह (अलैहि स-सलाम) की ज़ियारत करनी चाहिए। बिल्कुल ऐसे ही अबुल -लेत अस- समरकंदी के फतवा में लिखा है।

शिफ़ा किताब के लेखक, कादी इयाद; इमाम अन-नवावी,एक शाफ़ी-ई आलिम; और इबन हुमाम, एक हनफ़ी आलिम (रहमतुल्लाहि तआला), ने कहा कि वहाँ इजमा अल-उम्मा के होने की वजह मुबारक रोज़े पर जान ज़रूरी है। कुछ आलिमों का कहना है कि ये वाजिब है। दरहकीकत, कब्रों पर जाना

सुन्नत है, एक हकीकत जो वहाबियो की किताब **फतह अल मजीद** में भी लिखी है।

सूरत अन-निसा की 63वीं आयत अल-करीमा का मतलब हैः **"अगर वो, अपने नफ़स के तबाह होने के बाद, तुम्हारे पास (मेरे नबी) आएँ और अल्लाह तआला की (मेरी) माफ़ी माँगे, और अगर मेरा नबी उनकी तरफ़ से माफ़ी माँगे, तो बेशक अल्लाह तआला को रहम और तौबा पाने वाले के तौर पर पाएगा।"** ये आयत करीमा इशारा करती हैं कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसाल्लम) मदाखलत करेंगे और आपकी सिफारिश (शफाअत) कुबूल की जाएगी।साथ ही, दूर जगहों से आने पर ये हमें मुबारक कब्र पर जाकर सिफ़ारिश पूछने का हुकूम देती हैं।

एक हदीस शरीफ़ से बयान हैंः **"ये मौंजू हैं कि एक तवील सफर कायम किया जाए सिर्फ तीन मस्जिदों के दौरे के लिए।"** ये हदीस इशारा करती हैं कि मस्जिद अल हरम मक्का में, मस्जिद अन-नमी मदीना में और मस्जिद अल-अकसा यरूशलेम में इनके दौरे के मकसद के लिए तवील सफ़र पर जाना सवाब है।इस वजह से, वो जो हज पर जाते हैं लेकिन मस्जिद अन-नवी में मुबारक कब्र पर नहीं जाते वो सवाब से महरूम रह जाते हैं।

इमाम मालिक (रहमतुल्लाहि अलैहि) ने कहा के वो जो मुबारक रोज़े पर जाकर हुजरत अस-सआदा के नज़दीक ज़्यादा लंबा रूकते हैं ये

मकरूह हैं। इमाम जैन अल-आबिदीन (रहमतुल्लाहि अलैह) जब जाते, तो रोज़ात अल-मुतहहरा की सिमत खंबे के नज़दीक खड़े हो जाते और उससे आगे नहीं बढ़ते। हज़रत आएशा (रज़ी अल्लाहु अन्हा) जब तक फौत नहीं हुई दौरा खड़े होकर किया जाता था, किबले की तरफ़ मुंह करके, हुजरत अस-सआदा के दरवाज़े के बाहरी साईड पर।

एक हदीस शरीफ़ कहती है, **"मेरी कब्र वो त्यौहार की जगाह मत बनाना।"** हज़रत अबदु-अज़ीम अल-मुनज़िरी, एक हदीस आलिम, ने इस हदीस शरीफ़ को ऐसे वाज़ेह कियाः "मेरी कब्र पर सिर्फ़ साल में एक बार जाने को काफ़ी मत समझो, जैसे ईद के दिनो मे। अकसर मेरे पास आने की कोशिश करें!" और ये हदीस अश-शरीफ़, **"अपने घरो को कब्रिस्तान मत बनाओ,"** मतलब अपने घरों को हमने एक कब्रिस्तान की तरह नहीं बनाना नमाज़ें अदा न करके। इस तरह ये देखा गया कि हज़रत अल-मुनज़िरी की वज़ाहत सही है। असल में, कब्रिस्तान में सलात अदा करने की इजाज़त नहीं। ये कहा गया कि ये हो सकता है हदीस शरीफ़ का मतलब हो, "कोई एक खास दिन जैसे के त्यौहार मेरी कब्र पर आने के लिए नसब मत करो" यहूदी और ईसाई, अपने नबियों की ज़ियारत पर, आदतन जमा होते हैं, साज़ बजाते हैं, गाने गाते हैं और तकरीबात रखते हैं। ये हदीसें इशारा करती हैं कि हमें उनकी तरह बरताव नहीं करना; यानी, त्यौहारों के दिन हमें हराम चीज़ों के साथ खुशी नहीं मनानी चाहिए, नाहीं रीड या ड्रम बजाने चाहिए या अपने दौरे के दौरान तकरीबात भी

नहीं रखनी चाहिएं। हमें जाना चाहिए और सलाम करना चाहिए दुआ करें और फिर खामोशी बग़ैर ज़्यादा देर रूके चले जाना चाहिए।

अल-इमाम अल-आज़म अबू हनीफ़ा (रहिमाह-अल्लाह तआला) ने कहा के मुबारक रोज़े पर जाना एक कीमती सुन्नत है, और कुछ आलिम जिन्होने कहा के ये वाजिब है। इसी वजह से, शाफ़ी-ई मसलक में मुबारक कब्र पर हलफ़ के तौर पर जाने की इजाज़त है।

असल में, "अल्लाह तआला ने, अपने लफ़ज़ों में, **'अगर मैं तुम्हारी तखलीक नहीं करता, तो मैं कोई चीज़ भी तखलीक नहीं करता!** (ये हदीस कुदसी अल-इमाम अर-रब्बानी (रहिमाह-अल्लाहु तआला) की **मकतूबात,** जिल्द **122** वे खत में भी बयान हैं।) इशारा किया कि मुहम्मद (अलैीह स-सलाम) हबीब-अल्लाह (अल्लाह तआला के सबसे प्यारे) हैं। यहाँ तक के एक आम आदमी उसके महबूब की रज़ा के लिए किसी चीज़ से इंकार नहीं करेगा। आशिक होना आसान है उसके महबूब की रज़ा के लिए कुछ करो। अगर एक शख्स कहे, 'ए मेरे अल्लाह तआला! तेरे मुहम्मद (अलैहि स-सलाम) की रज़ा के लिए, मैं तुझ से पूछता हूँ, उसकी ये इच्छा मना नहीं की जाएगी। मामूली दुनियावीं मामलात, अगरचे, रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की रज़ा को सालसी के तौर पर रखना काबिले कदर नहीं हैं।" (**मिरात-अल-मदीना,** सफ़ह **1282**)। अल-इमाम अल-आज़म अबू हनीफ़ा (रहिमह अल्लाहु तआला) ने कहा, "मैं मदीना में था। शैख अय्यूब

अस-सहतिआनी, सुलहा में से एक, मस्जिद अश-शरीफ़ में गए। मैने उनका पीछा किया। हज़रत शैख किबले की तरफ पीठ करके मुबारक कब्र की तरफ़ मुंह करके खड़े हो गए। फिर वो बाहर चले गए।" हज़रत इबन जमआ ने अपनी किताब **अल-मंसक अल-कबीर** में लिखा "ज़ियारत करते वक्त, दो रकाअत सलात अदा करने के बाद और मिंबर के नज़दीक दुआ माँगने के बाद, तुम हुजरत अस-सआदा के किबला की करीब आओ और, नबी (अलैहि स-सलाम) का मुबारक सिर तुम्हारे उलटी तरफ़, तुम अल-मर्कज़ अश शरीफ़ (नबी का मज़ार) की दीवार से दो मिटर दूर खड़े हो फिर, किबले की दीवार पीछे छोड़ते हुए और धीरे से मूड़ो जब तक के तुम्हारा चेहरा **मुवाजहत अस-सआदा** के तरफ़ न हो जाए, तुम उन्हें सलाम करो। ये सारे मसालिक में है।"

अबदुल-ग़नी अन-नबसली (रहिमह-अल्लाहु तआाला), जब "ज़बान की तरफ़ से होने वाली आफ़तों" में से **23**वीं की तशरीह करते हैं तो लिखते हैंः "इबादत करते वक्त ये कहना मकरूह है कि, नबियों के हक के लिए या [फलां और जिंदा या मुरदा] वली के हक के लिए या अल्लाह तआला से किसी चीज़ के लिए पूछना ऐसा कहते हुए, क्योंकि, ये कहा गया हे कि किसी मखलूक को अल्लाह तआला पर कोई हुकूक नहीं है; यानी, वो किसी की इच्छा को नहीं दे सकता। ये सच्च है, ताहम वो अपने प्यारे बंदो से वादा करता हे और उनके लिए एक हक को खुद पर तसलीम किया; यानी, उसने उनकी

इच्छा कुबूल की। उसने कुरआन अल-करीम में ऐलान किया कि उसने अपने बंदो का एक हक खुद पर रखा मिसाल के तौर पर, **"ये हम पर हक हो जाता हैं मोमिनो की मदद करना।** (**अल-हदीका**)**अल-फतवा अल-बज़्ज़ाज़िया** में ऐलान किया गया है," एक नबी या ज़िंदा या मुरदा वली के नाम का ज़िकर करते हुए उसकी रज़ा के लिए कुछ माँगने की इजाज़त है। **"शरा** की तफसीर में बयान हैः "एक शख्स अल्लाह तआला के उसके नवियों अलैहि स-सलाम और सालेह मोमिनो के वसीले से दुआ माँग सकता है। ये **अल-हिसन अल-हसीन** में भी लिखा हुआ हे।"जैसे के देखा गया मुस्लिम आलिमों का कहना है कि अल्लाह तआला से हक और प्यार के ज़रिए दुआ करने की इजाज़त है जो वो अपने प्यारे बंदो को देता है। और कोई आलिम ये नहीं कहता कि इस खयाल से दुआ करना शिर्क है। ये सिर्फ़ वहाबी ऐसा कहते है।

अगरचे उन्होने **फतह अल-माजीद** किताबमें **अल-फतावा अल-बज़्ज़ाजिया** की तारीफ की है और उसके फतवों को सलद के तौर पर आगे रखा है, वो इस सिलसिले में उसके मुखतलिफ़ हैं। हादिमी ने भी जब "ज़बान से होने वाली आफतों" की तशरीह कर रहे थे, लिखाः "तेरे नबी या वली के हक के लिए का मतलब है उनकी नब्बुवत या विलाया सही है हमारे नबी अलैहि स-सलाम, ने भी, इस इरादे से फरमाया, **तेरे नबी मुहम्मद के हक के लिए,** जंग के दौरान वो अल्लाह तआला की मदद माँगते थे मुहाजिरून के बीच गरीबो के हक के लिए। बहुत से मुसलमान उलेमा भी थे जो दुआ करते थे। 'उन लोगो की रज़ा

के लिए जिन्हें तूने वो सब दिया जो उन्होने तुझ से मांगा, और, 'मुहम्मद अल-ग़ज़ाली के हक के लिए और जिन्होने ये दुआएँ अपनी किताबो में लिखीं। (हादिमी, **बरीका,** इस्तांबुल,**1284**)**अल-हिसन अल-हसीन** किताब ऐसी दुआओं से भरी हुई हैं। सूरत अल-माएदा की **18**वीं आयत की वज़ाहत **रूह अल-बयान** की तफसीर ये कहती हैः उमर अल-फारूक (रज़ी-अल्लाहु अनह) से एक हदीस का हवाला बयान हैः **"जब आदम** (अलैहि स-सलाम) **एक गलती करते थे, वो कहते थे, 'मेरे रब! मुहम्मद** (अलैहि स-सलाम) **की रज़ा के लिए मुझे माफ़ करदे। और अल्लाह तआला फरमाता था, 'मैने अभी तक मुहम्मद की तखलीक नहीं की। तुम उन्हें कैसे जानते हो? उन्होने कहा ए मेरे रब! जब तुमने मेरी तखलीक की और मुझे जान दी, मैने ऊपर देखा और ये जुमला "ला इल्लाह इल्लल्लाह मुहम्मदुन रसूलुल्लाह" अर्श के आसमान पर लिखे देखा। तुम सिर्फ अपने नाम के साथ अपने महबूब का नाम लिखोगे। इस पर ग़ैर करते ुए, मैं जान गया कि तुम उन्हें बहुत ज़्यादा चाहते हो।' इस पर अल्लाह तआला ने कहा, ए आदम, तुम सच्च कह रहे हो। मेरी तखलीक में से, वो एक हैं जिन्हें मैं सबसे ज़्यादा प्यार करता हूँ; इसलिए मैं उसकी रज़ा के लिए तुम्हें माफ़ करता हूँ। अगर मुहम्मद वुजूद में न होता, तो मैं तुम्हारी तखलीक नहीं करता।"** ये हदीस शरीफ़ इमाम अल-बएहकी की **दलाईल** और अलूसी की **ग़ालिया** में हवाला दी गई हैं। वहाबी लिखते हैंः "इमाम ज़ैन अल-आबिदीन अली रहिमाह अल्लाहु तआला ने एक आदमी को नबी अलैहि स-सलाम की कब्र के पास दुआ मांगते देखा ओर उसे ये हदीस बताते हुए रोक

दिया, '**मेरे लिए सलवात पढ़ो।तुम जहाँ कही भी होंगे तुम्हारा सलाम मुझ तक पहुँच जाएगा।**' ये वाक्या गलत तरीके से बयान हुआ और चलता रहा।"लिहाज़ा, कब्र के नज़दीक जाकर दुआ करना और सलवात पढ़ना ममनुअ है, ये बिल्कुल इसी तरह है कि कब्रो को त्यौहार की जगह बनाना।जो मस्जिद अन नबी में सलात पढ़ने जाते हैं और सलाम के लिए मकबरे तक रसाई करते हैं उनके लिए ये ममनुअ है।कोई एक भी सहाबा ऐसे नहीं करते थे, और जो ऐसा करना चाहते थे उन्हें रोकते थे।कोई और अमल नहीं बल्कि दुआएँ और सलाम आपकी उम्मत के ज़रिए नबी तक पहुँचेगा। (**फतह अल-मजीद** सफ़ह **259**; इस किताब के लिए ऊपर का सफ़ह **53** देखिए।) उन्होबे ये भी लिखा कि सऊदी हुकूमत ने नबी (अलैहि स-सलाम) के मज़ार पर सिपाही लगाए हुए है मुसलमानों को ऐसा करने से रोकने के लिए। (**इबीद** सफ़ह **234**) हज़रत यूसुफ़ अन-नबहानी ने इन झूठो की अपनी किताब में कई जगह तरदीद कीः "इमाम ज़ैनुल-आबिदीन (रहिमह-अल्लाहु तआला) ने नबी (अलैहि स-सलाम) की मुबारक कब्र पर ज़ियारत से मानाही नही की बल्कि उन्होने दौरे के दौरान ग़ैर-इस्लामी; नापंसदीदा बरातव से मना किया।उनके पोते, इमाम जाफ़र-सादिक, हुजरत अस-साअदा अकसर ज़ियारत करते थे, और, खंबे के नज़दीक खड़े होते जो रोज़ा अल मुतहहरा के करीब है,आपका मुबारक सिर इस्दा तरफ होता सलाम करते और कहते।'मेरी कब्र को त्यौहार की जगह न बनाओ, मतलब मेरी कब्र पर खास दिनो जैसे त्यौहार में ज़ियारत करने न आओ।मेरे पास अकसर आया करो।"(**शवाहि अल-हक़,** सह **80**,तीसरा

एडीशन, काहिरा, **1385**/(**1965** ए .डी)।सफह नम्बरों के साथ अगले छः हवालों के साथ इस किताब का भी हवाला देते है) “अबू अबदुल्लाह अल-कुर्त बी अपनी **अत-तज़किरा** में लिखते हैं कि नबी (अलैहि स-सलाम) की उम्मत के अमाल सुबह शाम आप तक पहुँचाए जाते हैं।” (**11**.**88,106**)“खलीफ़ा मनसूर, ने नबी (अलैहि स-सलाम) की मज़ार की ज़ियारत के दौरान, इमाम मालिक से पूछा, मैं किबले की तरफ़ मुंह करूँ या कब्र की तरफ़? इमाम मालिक रहिमह-अल्लाहु तआला ने कहा, तुम किस तरह अपने मुंह रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तरफ़ से मोड़ सकते हो? वो तुम्हारे और तुम्हारे बाप आदम (अलैहि स-सलाम) की बखशीश/माफ़ी की वजह हैं। (**pp.89,116**)“ये शरीफ़, **कब्रों पर जाओ!** एक हुकूम हैं।अगर ज़ियारत के दौरान एक हराम का मुरतकिब हो जाए, ज़ियारत ही नहीं, बल्कि हराम ममनुअ होना चाहिए। (सफ़ह.**92**)इमाम अन-नोवावी ने अपनी **अज़कार** में लिखा, ‘ये सुन्नत हैं कि नबी (अलैहि स-सलाम) की और सालिह मुसलमानों की मज़ारो की अकसर दौरा किया करो और ऐसी ज़ियारत की जगहों पर थोड़ा वक्त रूका करो। (सफ़ह.**98**) इबन हुमाम ने अपनी **फतह अल-कदीर** में अद-दार कुतनी और अल-बज़्ज़ार के ज़रिए मंतकिल की गई हदीस शरीफ़ का हवाला दिया जो कहती हैं; **अगर कोई मेरी ज़ियारत को मेरे मज़ार पर आता है ना की कुछ और काम से तो इंसाफ वाले दिन मेरे ज़रिए सिफारिश का हक रखता है**। (सफ़ह **100**) अल्लाह तआला ने औलिया को करामात से नवाज़ा।उनकी करामात उनके मरने के बाद भी अकसर नज़र आती हैं।वो

मरने के बाद, भी मदद करने के लायक हैं। उनके ज़रिए अल्लाह तआला से सिफ़ारिश करने की इजाज़त हैं। लेकिन किसी को इस्लाम की मुताबकत के तरीके से उनसे मदद माँगनी चाहिए। ये कहने की इजाज़त नहीं हैं कि, मैं तुम्हारे लिए बहुत दूँगा अगर जो मैने माँगा हैं तुम मुझे वो दोगे, या अगर तुम मेरे रिश्तेदार को ठीक करदो जो अकसर लोगो के ज़रिए कहा जाता है। बहरहाल, इसे कुफ्र या शिर्क का अमल नहीं माना जाएगा, क्योंकि एक बिल्कुल जाहिल शख्स भी एक वली में तखलीक कर पाने की उम्मीद नहीं करता। वो चाहता है कि वली अल्लाह तआला की तखलीक में सबब बन जाए। वो सोचता है प्यारे वली एक इंसानी मखलूक हैं जिसे अल्लाह तआला प्यार करता है, और कहता है, 'बराएमहरबानी अल्लाह तआला से मेरे लिए दुआ करो जो मैं चाहता हूँ उसके साथ; वो तुम्हारी दुआ नामंज़ूर नहीं करेगा। दरहकीकत, रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमया ऐसे **'बहुत सारे लोग हैं जो कमतर और बेकार समझे जाते हैं लेकिन वो अल्लाह तआला के प्यारे बंदे हैं जब वो कुछ करना चाहते हैं, अल्लाह तआला बेशक उसे तखलीक करता है।** (ये हदीस भी **फतह अल मजीद** के सफ़ह **381** पर हवाला दी गई है।)ऐसी हदीसों को मानते हुए, मुसलमान औलिया से सिफारिश करने को कहते हैं। इमाम अहमद, अल इमाम अश-शाफ़ी- इमाम मालिक ओर अल-इमाम अल-आज़म अबू हनीफ़ा रहिमाहुम-अल्लाहु तआला ने कहा के ये जाईज़ करना। वो जो कहते हैं के अहले-सुन्नत के किसी एक मसलक से तअल्लुक रखते हैं उन्हें इसी

तरह कहना चाहिए जैसे इन इमामों ने कहा। वरना, हम उन्हें सुन्नी के बजाए झूठे समझेंगे। (सफ़ह. **118**)

अल-फतवा अल-हिंदया किताब में किसी और की तरफ़ से हज की अदाएगी के मुतअल्लिक मज़मून में लिखा है, इबादत का सवाब किसी और को बखशने की इजाज़त है। इसलिए, सलात का सवाब; रोज़े; खैरात; हज; कुरआन अल-करीम की किरअत; ज़िकर; नबियों, शहीदों, औलियाओं और सालिह मुसलमानो की कब्रों पर ज़ियारत; मैय्यत के लिए कफन देना; और तमाम तौहफ़ो और अच्छे अमाल का सवाब किसी को बखशा जा सकता है। इस फिकरे से भी ये समझ आता है कि, औलिया की कब्रों पर जाने से सवाब मिलता है।

जो अब तक लिखा गया है उसकी सनद/दस्तावेज़ात हमारी अरबी और अंग्रेज़ी की किताबों में तफसील से लिखे हैं। अल्लाह तआला ने मुसलमानों को एक होने को कहा। इसलिए, सारे मुसलमानों को **अहले-सुन्नत वल जमात** के एतिकाद को सीखना चाहिए और अहले सुन्नत के अज़ीम आलिमों के ज़रिए किताबों में हवाला दिए गए सच्च के सही रास्ते पर यकीन करते हुए एक साथ आना चाहिए। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फरमाया सिर्फ अहले-सुन्नत का रास्ता ही सही रास्ता है। हमें बहुत चौकन्ना रहना होगा कि अहले सुन्नत की एकता से भटके नहीं और ना ही मज़हबी मरतबों वाले जाहिल आदमियों की धोके वाली तहरीरों में फँसे जो बिदअतियों की किताबों ओर तहरीरों की

तिजारत कर रहें हैं जो मुसलमानों को धोका देना चाहती हैं। अल्लाह तआला ने सूरत अन-निसा की**114**वीं आयत में साफ़ ऐलान किया वो जो मुसलमानों की एकता के मुख़तलिफ़ हैं वो दोज़ख में जाएँगे। ये दस्तावेज़ात और हवालों से साफ़ हो चुका है कि एक सख्स जो चारो मसालिक में से किसी एक में भी शामिल नहीं होता वो अपने आपको अहले सुन्नत की एकता से अलग कर लेता है और ये के ऐसा ला-मज़हबी शख्स एक बिदअती था एक ग़ैर-मुस्लिम बन जाता है। (**हाशियातु दुर्र अल-मुख्तार** अज़ीम आलिम अहमद अत-तहतावी के ज़रिए और **अल-बसाईर अला-ल-मुनकरी त-तबस्सलि बि'ल-मकाबिर,** जिसे **फतह अल-मजीद** की तरदीद के तौर पर पाकिस्तान में लिखा गया और दूबारा इस्तांबुल में छपवाया गया।)

अत-तवस्सुलु बि'न-नबी व जहालत अल-वहाबियान किताब मिसालों और दस्तावेज़ के साथ ये बात साबित करती है कि इबन तेमिया **अहले सुन्नत व'ल-जमाअत** के रास्ते से अलग हो गया था। **वहाबियत** इबनि तेमिया की बिदअत और अंग्रेज़ जासूस हेम्पर के झूठ और बौहतानी का मुर्कब हैं।

3- वहाबियों का कहना है, "एक कब्र पर गुंबद बनाना, तेल के दिए जलाना उन लोगो के लिए जो मज़ारो में इबादत करते हैं और खिदमत करते हैं, और मुरदों की रूहों के लिए खैरात का हलफ़ लेते हैं कुफ़ (बेयकीनी) और शिर्क (मुश्रिक) का सबब है! अल-हरमैन (मक्का और मदीना) के रहने वाले अब तक गंबदो और दीवारों की इबादत करते हैं।"

एक कब्र पर गुंबद बनाना बड़ा हराम है अगर वो डींग या सजावट के लिए बनाया हो। अगर वो तबाही से कब्र की हिफ़ाज़त के लिए बनाया गया है तो ये मकरूह है। अगर ऐसा करने का इरादा है कि ऐसा न हो कोई चोर या जानवर तोड़कर अंदर आ जाएगा, तो इसकी इजाज़त है। लेकिन इसे दौरा करने की जगह नहीं बना लेनी चाहिए; यानी, किसी को ये नहीं कहना चाहिए के इसे एक खास वक्त में दौरा करो।

एक इमरत जो पहले से बनाई गई है उसमें मुरदे दफ़नाना मकरूह नहीं है। अस-सहाबत अल-किराम ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ओर आपके दो खलीफ़ाओं को एक इमरत में दफनाया। उनमें से कोई भी इसके खिलाफ़ नहीं था। हदीस शरीफ़ का बयान है कि उनकी इत्तिफ़ाक राए बिदअत पर मुबनी नहीं हो सकती। अज़ीम इस्लामी आलिम इबन अबिदीन ने लिखाः "कुछ आलिम कहते हैं के सालिह मुसलमानो या औलिया की कब्रो पर चादर या पगड़ी ढकना मकरूह था। **अल-फतवा अल-हज्जा** किताब मे लिखते हैं के एक कब्र को चादर से ढकना मकरूह है। लेकिन, ऐसा नही है हमारे लिए, ये मकरूह नहीं है अगर ये कब्र में उन ज़ात की बड़ाई दिखाए या उनकी बेहुरमती से बचाने के लिए या जो उनकी ज़ियारत करने आएँ उनको ये याद कराना के इज़्ज़त करें और अच्छा बरातव करें। अमाल जो अल-अदिलत अश-शरिय्या में ममनुअ नहीं हैं वो शामिल इरादे को देखते हुए फ़ैसला किए जाएँ। हाँ, ये सही है के सहाबतुल-इकराम के ज़माने में नाहीं कब्रो पर गुंबद बनाए जाते थे नाही

पत्थर या कपड़ा कब्रो पर लगाया जाता था। लेकिन उनमें से कोई भी रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम और आपके शैखीन (आपके दो करीबी खलीफ़ा) कमरे में दफनाने के खिलाफ़ नहीं थे। इस वजह हुकूमों को चलाने के लिए, **'कब्रो पर कदम न रखें!'** और **'अपने मुरदे की बेइज़्ज़ती न करो!'** और क्योंकि वो ममनुअ नहीं थी, वो सिर्फ़ बिदअत नहीं हो सकती क्योंकि ये अमाल थे बाद की नसलों के ज़रिए देखे गए। सारी फ़िकह की किताब बयान करती हैं कि अलविदाई तवाफ़ के बाद मस्जिद अल-हराम को काबा अल-मौअज़्ज़म की तरफ़ एक ताज़ीम के अमल के तौर पर छोड़ना ज़रूरी है। बहरहाल, सहाबतुल इकराम को ऐसा नहीं करना पड़ता था क्योंकि वो हमेशा काबा की तरफ़ ताज़ीम रखते थे। लेकिन बाद की नसलें क्योंकि इतनी ताज़ीम देने में नाकाबिल थीं इसलिए उलेमा ने ऐलान किया के ये ज़रूरी है कि मस्जिद को पीछे चलते हुए छोड़ो ताज़ीम दिखाने के लिए। इस तरह, उन्होने इसे हमारे लिए मुमकिन कर दिया। इसी तरह, इस बात की इजाज़त हो गई कि सहाबतुल-इकराम की तरह एहतराम देने के लिए सालिह और औलिया की कब्रों को चादर ढक दि जाए या उनक गुंबद बना दिये जाए। अज़ीम आलिम हज़रत अबदुल-ग़नी अन-नबलसी ने इसे अपनी किताब **कशफ़ अन-नूर** में तफ़सील से लिखा है।"([इबन अबिदीन, **हाशियत दुर्र अल-मुखतार (राद्द अल-मोहतर)** सफ़ह **232,** जिल्द , बुलाक, **1272**; **कशफ़ अन-नूर** और जलालुदीन अस सयूती रहिमाह अल्लाहु तआला की **तंवीर अल-खलक फ़ी इमकानी रूयति'न-नबी जिहारन व'ल-मलक** एक साथ **अल-मिनहत अल-वहाबिया** नाम से इस्तांबुल में

1393 (**1973** ए . डी.) में छापी गई थी।) अरब में मज़ारों को **"मशहद"** कहते हैं। अल-मदीनत अल-मुनव्वरा में, बाकी कब्रिस्तान में बहुत सारे मशहद हैं। ला-मज़हबियों ने उन सबको तबाह कर दिया। किसी इस्लामी आलिम ने कभी ये नहीं कहा कि गुम्बदी कब्रें बनवाना या कब्रों पर जाना शिर्क या कुफ्र है। कभी भी कोई कब्रों को मुंहदिम करते हुए नहीं देखा गया।

इब्राहिम अल-हलबी रहिमाह-अल्लाहु तआला ने **अल-हलबी अल कबीर** किताब के आखिर में लिखा "अगर एक शख्स ये फैसला करले के उसकी ज़मीन एक कब्रिस्तान को दि जाए और अगर उसमें इतनी खाली जगह हो तो, उसको इजाज़त है के वो उसमें एक गुम्बददार कब्र बनाए इस नियत के साथ के उसमें जनाज़ा रखेगा। जब कोई खाली जगह न रह जाए तो, इस गुंबद को मनहदिम किया जा सकता है और [उसकी जगह पर] कब्रें खोदी जा सकती हैं। क्योंकि ये जगह एक वक्फ़ की है, कब्रिस्तान को सौंपी गई।" अगर गुम्बदी कब्र को शिर्क माना जाता या आगर गुम्बददार कब्रों को बुत समझा जाता तो ये हमेशा ज़रूरी हो जाता कि उन्हें मुनहदिम कर दिया जाए।

इस्लामी मज़ारों में ज़मीन पर सबसे पहली गुम्बद हज़रत अल-मोअत्तर थी,जहाँ आप रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम दफ़न हैं। हमारे आका सरकारे दो आलम रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने पीर के दिन, **12** रबी उल-अव्वल, **11** ए . एच दोपहर से पहले, अपनी प्यारी बीवी, हमारी माँ हज़रत आएशा रज़ी अल्लाहु अनह के कमरे में वफ़ात पाई। बुध की रात को

आपकी उस कमरे में तदफ़ीन करदी गई।हज़र अबू बक्र और हज़रत उमर रज़ी-अल्लाहु तआला अनहमा भी उसे कमरे में दफन हैं।किसी सहाबी ने इसकी मुखालफ़त नहीं की।अब,सहाबतुल-इकारम की इस इत्तिफ़ाक राए से मुखालफ़त की जाती है।जबकी **इजमा अ अल-उम्मा** को गलत वज़हात तावील कर गलत दस्तावेज़ो की दलील देकर नकारा जाता है। ये इंकार कुफ्र का नतीजा नहीं बिदअत का सबब है।

हज़रत आएशा रज़ी अल्लाहु अनह का कमरा तीन मिटर ऊँचा था; कुछ हद तक तीन मिटर से ज़्यादा लंबा और चौड़ा, और सूरज से सूखी ईटों से बना हुआ था।इसके दो दरवाज़े थे, एक मग़िरब के रूख था और दूसरा शुमाल की तरफ़ था।हज़रत उमर (रज़ी-अल्लाहु तआला अनह), जब खलीफ़ा थे, तो उन्होने हुजरत अस सआदा एक नीची पत्थर की दीवार लगा दी।अबदुल्लाह इबन ज़ुबेर (रज़ी-अल्लाहु तआला अनहुमा), जब वो खलीफ़ा थे, इस दीवार को हटा इसे दूबारा काले पत्थरों के साथ बनवाया और इस पर खुबसूरत प्लास्टर कराया।इस दीवार के ऊपर छत नहीं बनाई गई और शुमाल की तरफ़ इसमे दरवाज़ा था।जब हज़रत हसन रज़ी-अल्लाहु तआला अनह की **49** ए एच. में वफ़ात हो गई तो, उनके भाई हज़रत हुसैन रज़ी-अल्लाहु तआला अनह, जैसे के उनकी आखिरी वसीयत थी, उनके जनाज़े को हुजरत अस-सआदा के दरवाज़े पर लाया गया और उनका जनाज़ा मकबरे के अंदर ले जाकर शफ़ाअत के लिए अरज़ करना चाहते थे; लेकिन वहाँ कुछ लोग थे

जिन्होने ये सोचते हुए के कहीं जनाज़े को मकबरे के अंदर ही तदफ़ीन न करदी जाए, इस बात की मुखालफ़त की। इसलिए, इस शोरगुल से बचने के लिए, जनाज़े को मकबरे के अंदर नहीं ले जाया गया और बकी कब्रिस्तान में तदफ़ीन करदी गई। ऐसा न हो के ऐसे नामुनासिब वाक्यात दोबारा हों, कमरे के दरवाज़े और बाहर का दरवाज़े पर दीवार करदी गई। (ज़्यादा जानकारी के लिये एडवाइस फार द मुस्लीम किताब के **15** वें अरटिकल को देखें.)

छठे उमय्यद खलीफ़ा, वलीद ने, जब वो मदीना के गर्वनर थे कमरे के इतराफ़ दीवार खड़ी करा दी और इसे एक छोटै गुंबद से ढ़क दिया। जब वो खलीफ़ा बन गए, तो उमर इबन अबदुल-अज़ीज़, जो मदीना के गर्वनर के तौर पर उनके जानशीन थे, उसे **88** (**707** ए . डी.) में मस्जिद अश-शरीफ़ को बढ़ाने के लिए कहा; इस तरह; कमरे के चारो तरफ़ दूसरी दीवार खड़ी हो गई ये शक्ल में पंचकोना और छतदार थी; और कोई दरवाज़ें नहीं थे।

फ्तह अल-मजीद किताब कहती हैः "एक शख्स जो एक पेड़, पत्थर, कब्र या उसी तरह की किसी चीज़ के साथ बरकत तर्बरूक हासिल करने की नीयत रखता है वो एक मुशरिक बन जाता है। कब्रों पर गुंबदों को बनाकर उनकी पूजा की जाती है। जाहिलया ज़माने में भी, लोग सालिह लोगों और मूरतियों की पूजा करते थे। आज, ऐसे सारे और बल्कि हद से ज़्यादा अमाल मज़ारों और कब्रों पर अंजाम दिए जा रहे हैं। सालिह लोगो की कब्रों से बरकत हासिल करने की कोशिश करना बिल्कुल उसकी तरह हैं जैसे बूत अल-लात की इबादत

करना) (कवल अस इस्लाम का दौर जिसे जाहिलिया ज़माना कहा जाता था उस वक्त अरबों के ज़रिए अहम बुतों में से एक की इबादत की जाती थी।) ये मुशरिक ये मानते थे के औलिया उनकी दुआओं को सुनते हैं और जवाब देते हैं। वो कहते हैं के वो कस्म खाते हैं और कब्रों को खैरात देकर मुरदे से रसाई करते हैं। ये सारे अमाल शिर्क के अहम शकलें हैं। एक मुशरिक एक मुशरिक ही रहता है चाहे आगर वो अपने आपको कूछ और बुलाए। मुरदे से इज़्ज़त और लगाव के साथ दुआ मांगना, जानवरों की कुरबानी, कसम खाना और दूसरे इसी तरह के अमाल सब मुशरिकी हैं जो कुछ भी वो कहते हैं। आज के मुशरिकीन, ताज़ीम (इज़्ज़,एज़ज़) और 'तबररूक' लफ़्ज़ों का इस्तेमाल करते हैं, कहते हैं जो वो कर रहे हैं उसकी इजाज़त हैं। उनका ये तर्क गलत हैं।" (**फतह अल-मजीद,** सफ़ह **1331**)

अहले सुन्नत मुसलमानो के खिलाफ़ ऐसी घिनौनी बेहूदगी के मुस्लिम आलिमों के ज़रिए दिए गए जवाबात का तर्जुमा हम पहले से ही कर चुके हैं। और हम उन्हें अपनी कई किताबों में लिख चुके हैं। मंदरजाज़ेल में, **अल-उसूल अल-अरबा फ़ी तरदीद अल-वहाबिया** किताब के पहले सबक से एक फिरका तर्जुमा किया गया है सर्तक वालो को दिखाने के लिए के वहाबियों ने खुद को धोका दिया और मुसलमानो को तबाही की तरफ़ ले गएः

"कुरआन अल करीम, हदीस शरीफ़, बयानात और सलफ़ अस-सालिहीन के अमाल, और ज़्यादातर उलेमा के दस्तावेज़ यानी अल्लाह तआला के अलावा

किसी और को ताज़ीम देने की इजाज़त है। सूरत-अल-हज की **32**वीं आयत से बयान हैंः **'जब कोई अल्लाह तआला की शआइर को ताज़ीम (योअज़्ज़िम) दिखाता ये बरताव दिल के तक्वे से बाहर है। इसलिए अल्लाह तआला की शआइर को ताज़ीम देना वाजिब बन जाता है।** 'शआइर' का मतलब है 'इशारे' और 'इसरें '। ***अबदुलहक अद-दहलवी रहिमाह अल्लाहु तआला*** ने कहा; **'शआइर'** सईरा की जमा है, जिसका मतलब इशारा (अलामा) है। कोई भी चीज़ जो अल्लाह तआला की याद दिलाए वो अल्लाह तआला की शईरा है। सूरत अल-बक़रा की **158**वीं आयत मे कहाः ' **अस-सफ़ा और अल-मरवा अल्लाह तआला के शआइर के दरमियान हैं।**' जैसे के इस आयत करीमा से समझ आता है कि, न सिर्फ़ अस-सफ़ा और अल-मरवा की पहाड़ियाँ अल्लाह तआला की शआइर हैं, वल्कि वहाँ पर ऐसी दूसरी शधइर और हैं। और सिर्फ़ अरफात, मुज़ल्फ़ा और मिना कहलाई जानी वाली जगहें ही शआइर की मिसालें नहीं हैं। ***शाह वली-अल्लाह अद-देहलवी रहिमह-अल्लाहु तआला*** ने अपने काम **हुजरत अल्लाहि ल-बालिग़** के **69**वें सफ़हे पर कहा है, अल्लाह तआाला के सवसे अज़ीम शआइर कुरआन अल-करीम कावत अल-मौअज़्ज़म, नवी अलैहि स-सलात व स-सलाम और रसमी सलात हैं। और अपनी किताब **अलताफ़ अल-कुदस** के **30**वें सफ़ह पर, शाह वली-अल्लाह अद-दहलवी रहिमा-अल्लाह तआला ने कहा, 'अल्लाह तआला की शआइर को प्यार करने का मतलब है कुरआन अल-करीम, नवी अलैहि स-सलात व सलाम और कावा से प्यार करना, या, किसी भी चीज़ से प्यार करना जो किसी को अल्लाह तआला की

याद दिलाए। अल्लाह तआला के औलिया को चाहना भी इसी तरह हैं। (क्योंकि नबी ने कहा, **'जब औलिया नज़र आएँ तो अल्लाह तआला को याद किया जाता है,**जिसका हवाल इबन अबी शएबा की **इरशाद अत-तालीबिन** की **मसनद** और **कुनूज़ अद-दकाईक** में ये हदीस शरीफ़ दिखाती हैं कि औलिया, भी, शआइर के दरमियान हैं। ये **जामी उल-फतावा** में लिखा है के औलिया और उलेमा को ताज़ीम देने के लिए कब्रों पर गुंबद बनाने की इजाज़त हैं) जबकि मक्का में मस्जिद अल-हराम के नज़दीक अस-सफ़ा और अल-मरवा नामी पहाड़ियाँ, जिनके दरमीयान हज़रत इसमाइल की वालदा हज़रत हजर चलीं थीं, अल्लाह तआला की शआइर के दरमियान है और यही उस मुबारक माँ को याद करने का सबब बनी, क्यों नहीं उन जगहों पर जहाँ नबी मुहम्मद अलैहि स-सलाम, जो सारी मखलूक से बरतर और अल्लाह तआला के हबीब हैं, वो वहाँ पैदा हुए और पले और जहाँ आपने इबादत की, हिजरत की, सलात अदाकी और वफ़ात पाई और आपका मकबरा और आपकी आल आपकी मुबारक बीवियाँ और अहल अल-बैएत और सहाबा की जगह शआईर के दरमियान शुमार होती है? वो इन जगहों को क्यों तबाह कर रहे हैं? जब कुरआन अल करीम ध्यान से और मकसद के साथ पढ़ा जाए, तो ये आराम से देखा जा सकता है कि बहुत सारी आयात रसूलुल्लाह अलैहि स-सलाम के लिए ताज़ीम ज़ाहिर करती हैं। सूरत अल **हजरात** ने ऐलान कियाः **'ए ईमान वालो! अल्लाह तआला और उसके नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से आगे मत जाओ! अल्लाह तआला से डरो! ए ईमान वालो! नबी की आवाज़ से ऊँचा मत**

बोलो! जैसे तुम एक दूसरे को बुलाते हो इस तरह आपको मत बुलाओ! उन लोगो के अमाल का सवाब जो ऐसा करते हैं वो खत्म हो जाता है! जो अल्लाह तआला के नबी की मौजूदगी में अपनी आवाज़ें नीची रखते हैं अल्लाह तआला उन लागो के दिलो को तकवा भर देता है; वो उनके गुनाहों को माफ़ करता है और बहुत सारे ईनाम देता है।जो उनके ऊपर बाहर से चिल्लाते हैं वो अल्हड़ होते हैं; उनके लिए अच्छा ये है के आपके बाहर आने तक इंतेज़ार करें।' ये शख्स के लिए साफ़ है जो इन पाँच आयात के ऊपर सोचता और पढ़ता है ग़ैर जानिबदार होकर के कितना ज़्यादा अल्लाह तआला अपने प्यारे नबी अलैहि स-सलाम की ताज़ीम करने वाले की तारीफ़ करता है और कितनी बुरदवारी से वो उम्मत को उनकी तरफ़ इज़्ज़त से पुर और मामूली होने का ऐलान किया।इस की अहमियत का दर्जा इस हकीकत से फैसला करके लागाया जा सकता है कि जो आपसे ऊँचा बोंलेंगे उनके सारे अमाल सिफ़िर हो जाएंगे।ये आयात बनी तमीम के उन **70** लोगो के लिए सज़ा के तौर पर अशई थीं जो नबी को बेइज़्ज़ती से चिल्लाते हुए पुकारते थे।आज कुछ लोग कहते हैं के वो वनी तमीम कवीले के जानशीनों में से हैं।हो सकता है आप रसूलुल्लाह ने इन्ही के लिये फरमाया हो के **'मशरिक में हिंसक और ज़दकौब वाले लोग हैं,'और 'शैतान वहाँ से फूट उदाएगा,** नजद के इलाके की तरफ़ [अरवी जज़ीरानुमा पर अपने मुबारक हाथ से इशारा करते हुए उन लोगो के लिए कहा।कुछ ला-मज़हवी **नजदी** हैं, जो नजद से बाहर फैलेंगे।जो फूट ऊपर हवाला दी गई हदीस में आगाही दी गई वो **1200** सालों बाद ज़ाहिर हुई; वो नजद से हिजाज़

आए, मुसलमानो की मिकियत को लूटते हुए, आदमियों को कत्ल करते हुए और औरतों और बच्चों को गुलाम बनाते हुए।उन्होने काफ़िरों से ज़्यादा नीचली बुराइयों का जुर्म किया।'

"**क्या ज़्यादा है;** ऊपर आयातो में, दोहराया गया जुमला **'ऐ लोग जो ईमान रखते हो; ये** दिखाता है के सारी सदियों के मुसलमानों के लिए आखिरी दिन तक रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तरफ़ एहतराम करने का हुकूम दिया गया है।अगर सिर्फ़ सहाबतुल-इकराम रज़ी-अल्लाहु तआला अनहुम अजमईन के लिए होता, तो इस तरह कहा जाता, ए अस-सहाबा।दरहकीकत, ये जुमल,**'ए नबी की बीवियों!** और **'ए मदीना के लोगो** कुरआन के ही जुमला है, **'ए ईमान वालो!'** इन आयत में इस्तेमाल ये बताता है कि सलात, रोज़ा, हज,ज़कात और दूसरी इबादत सारे वक्त के मुसलमानों के लिए आखिरी दिन तक फर्ज़ हैं।इसी तरह वहाबियों का ख़याल है के नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम जब ज़िंदा थे उस वक्त एहतराम किए जाते थे; आपकी वफ़ात के बाद न तो उनकी इज़्ज़त की जाए या उनसे मदद के लिए पूछा जाए, इन आयत के नुकत ए-नज़र से ये बेकार हैं।

ऊपर की आयत इशारा करती है के अल्लाह तआला के अलावा दूसरो की तरफ़ ताज़ीम करना भी ज़रूरी है।सूरत अल-बकरा की 104वीं आयत का बयान हैंः **'ए ईमान वालो! "राइना" मत कहो** नबी से, **बल्कि कहो, "हम पर देखो" आप, अल्लाह तआला के हुकूम सुनने वाले हैं।** ईमान वाले नबी

(सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से कहते है। राइना (देखो, हमारी हिफ़ाज़त करो)। 'राइना' का मतलब यहूदी ज़बान में, कसम खाना, इस्लज़ाम देना है। और यहूदी इस लफ़्ज़ को इस सिलसिले में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के लिए इस्तेमाल करते थे। क्योंकि ये खराब मआनी भी रखता था, अल्लाह तआला ने मोमिनो को ये लफ़्ज़ इस्तेमाल करने के लिए मना किया है।

सूरत अल-अंफाल की **33**वीं आयत का मतलब हैं, **'अल्लाह तआला उन्हें सज़ा नहीं देगा जब तुम उनके साथ हो,** और वादा किया के दुनिया के खात्में तक उन्हें सज़ा नहीं देगा। ये आयत वहाबियों के इस दावे की तरदीद करती है के नबी चले गए और मिट्टी बन गए।

"सूरत अल-बकरा की **34**वीं आयत का मतलब हैः **"जब** हमने फरिश्तों से कहा, **"आदम के सामने सजदा करो," वो सब सजदे में गिर गए, सिवाए शैतान (इबलिस) के।** 'ये आयत करीमा हुकूम देती है के आदम अलैहि स-सलाम को ताज़ीम देनी चाहिए। शैतान ने अल्लाह तआला के अलावा किसी और की इज़्ज़त करने से इंकार कर दिया और नबियों को बदनाम किया, और इस तरह इस हुकूम की नाफरमानी कर वहाबी शैतान के नक्शेकदम पर हैं। यूसुफ़ अलैहि स-सलाम के वालदेन और भाई, भी, अपने आपको उनके सामने झुकाकर ताज़ीम देते थे। अगर अल्लाह तआला के अलावा किसी और को इज़्ज़त देना या ताज़ीम करना शिर्क या कुफ्र का सबब होता तो, वो अपने प्यारे बंदो की 'सजदा' लफ़्ज़ की तारीफ़ करते हुए उसकी वज़ाहत नहीं करता। अहले सुन्नत

के मुताबिक, अल्लाह तआला के अलावा किसी और के सामने झुकना हराम है क्योंकि ये इबादत में झुकने जैसा दिखता है, इसलिए नहीं कि ये इज़्ज़त का निशान है!

शैतान हमेशा नजद के बूढ़े आदमी के रूप में रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के सामने ज़ाहिर होता था। जब काफ़िर मक्का में दार अन-नदवा कही जाने वाली जगह पर जमा हुए और नबी को कत्ल करने का फैसला किया, शैतान नजद के बूढ़े आदमी के रूप में वारिद हुआ और उन्हें सीखाया के किस तरह ये कत्ल किया जाए, और वो जिस तरह नजदी बूड़े आदमी ने कहा था उसी तरह करने को राज़ी हो गए। उस दिन से, शैतान को **शैख अन-नजदी** कहा जाने लगा हज़रत मुहिइददीन इबन अल-अरबी ने अपने काम **अल-मुसामरात** में लिखाः जब कुरैश के काफ़िर काबे की मरम्मत कर रहे थे, हर कबीले के सरबराह ने कहा के वो कीमती पत्थर जिसे अल-असवद कहते हैं उसे बदलते जाएगा। बाद में वो इस बात पर सहमत हो गए कि जो शख्स [काबा में] आने वाली सुबह में पहले पहुँचेगा वो रेफरी बनेगा और पत्थर रखने के लिए उनमें से किसी एक को चुनेगा। आप रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम सबसे पहले वहाँ आए। आप उस वक्त **25**साल के थे, और उन्होने कहा के वो जो कहेंगे उसे वो मानेंगे क्योंकि वो भरोसे वाले (अमीन) हैं। आपने कहा, "एक कालीन लाओ और पत्थर उस पर रख दो। तुम सारे कालीन को उसके कौनो से पकड़ो और जहाँ पर पत्थर लगेगा वहाँ तक ऊँचा

उठाओ।" उसके उठने के बाद, आपने अपने मुबारक हाथों से कालीन पर से पत्थर उठाया और दीवार में उसे उसकी जगह पर लगा दिया। उस पल, शैतान शैख अन-नजदी की शक्ल में वारिद हुआ और एक पत्थर की तरफ़ इशारा करते हुए, कहा, "इसे इस तरफ साहारे के साथ लिगा दो। उसका असली मकसद था कि जिस पत्थर की ओर इशारा किया वो बेईमानी से मुस्तकबिल में गिर जाए, इस तरह हजर अल-असवद अपनी मज़बूती खो दे और, नतीजतन, लोग रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को अशुभ माने। ये देखकर, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने कहा, **"आऊज़ो बिल्लाहि मिन अश-शैतानी र-रजीम,"** और शैतान फौरन भाग गया। क्योंकि मुहिइददीन इबन अल-अरबी रहमतुल्लाहि तआला अलैह ने इस तहरीर के साथ, दुनिया को ये बताया के शैख अन-नजीद शैतान था, ला-मज़हबी इस अज़ीम वली से नफ़रत करते थे। यहाँ तक के वो उन्हें काफ़िर बुलाते थे। ये इस पैसेज से भी समझ आता है के उनका लीडर एक शैतान था। इस वजह से, उन्होने रसूलुल्लाह सल्लल्लहु अलैहि वसल्लम की विरासत वाली मुबारक जगहों को तबाह कर दिया। वो कहते थे के ये जगह लोगों को मुश्रिक बनाती हैं। अगर पाक जगहों में अल्लाह तआला की इबादत करना शिर्क है, तो अल्लाह तआला हमें हज पर जाने का हुकूम नहीं देता; तवाफ़ करते वक्त हमारे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम हजर अल-असवद को चूमते नहीं; अरफ़ात और मज़लिफ़ा में कोई इबादत नहीं करता; मीना में पत्थर फ़ेंके जाते और अस-सफ़ा और

अल-मरवा के बीच मुसलमान नहीं चलते। ये पाक जगह इतनी ज़्यादा इज़्ज़त नहीं बख़शी जातीं।

"जब साद इबन मुआज़ रज़ीअल्लहु तआला अनह, अंसार के सरबराह, जहाँ वो जमा हुए थे वहाँ आए तो, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फरमाया, **'अपने लीडर के लिए खड़े हो जाओ!'** ये हुकूम उन सबके लिए इशारा था के साद की इज़्ज़त की जाए। ये कहना गलत है के, साद बीमार थे। ये इशारा था के उन्हें उनके सवारी जानवर से उतारा जाए; क्योंकि हुकूम उन सबके लिए था। अगर ये उनकी मदद करने के लिए इशारा होता तो, ये हुकूम सिर्फ़ एक या दो लोगों के लिए होता, और साद के लिए कहा जाता, और फिर वहाँ ये कहने की ज़रूरत नहीं होती के 'अपने लीडर के लिए'।

"हर बार जब भी अबदुल्लाह इबन उमर रज़ी-अल्लाहु अनहुमा मदीना से मक्का जाते हज करने के लिए तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व्सल्लम जहाँ बैठते थे उन पाक जगहों पर सलात अदा करते और दुआ माँगते। वो इन जगहों से मुबारक बनते थे। वो अपने हाथों को रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के मिंबर (मंच) पर रखते और फिर उन्हें अपने चेहरे पर रगड़ते। इमाम अहमद इबन हनबल रहमतुल्लाहि तआला अलैह हुजरत अस-सआदा और मिंबर को चूमते थे उनके ज़रिए रहमती होने के लिए। ला-मज़हबी, एक तरफ़ कहते के वो हनबली मसलक के हैं, और दूसरी तरफ़, इस मसलक के इमाम ने जो किया उसे शिर्क मानते हैं। फिर, ये समझ

आता है के उनका हनबली होने का दावा झूठा है। इमाम अहमद इबन हनबल इमाम अश-शाफ़ी-ई रहमतुल्लाहि तआला अलैह की कमीज़ पानी में डालते थे और रहमते हासिल करने के लिए पानी पी लेते थे। खालिद इबन ज़ैद अबू अय्यूब अल-अनसारी रज़ी-अल्लाहु अनह अपना चेहरा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की मुबारक कब्र से रगड़ते और, जब कोई उन्हें उठाना चाहता तो वो कहतेः 'मुझे छोड़ दो! मैं मिट्टी या पत्थर के लिए यहाँ नहीं आता वल्कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को सुनने के लिए आता हूँ।

अस-सहाबतु-ईकराम अलैहिमु र-रिज़वान रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से तअल्लुक रखने वाली चीज़ों को रहमतें हासिल करने के लिए इस्तेमाल करते थे। वो आपके वुज़ू में इस्तेमाल किए गए पानी और आपके पसीन-ए मुबारक से, कमीज़, सूलजान, तलवार, जूते,गिलास, अँगूठी, मुखतसिर ये के, किसी भी चीज़ से जो आप इस्तेमाल करते थे उनसे रहमतें हासिल करते थे। उमत-ए-सलमा रज़ी अल्लाहु अनह वफ़ादारी की माँ, ने आपकी दाढ़ी मुबारका का एक मुबारक बाल रख लिया था। जब बीमार लोग आते, तो वो मुबारक बाल को पानी में डूबोती और उन्हें पानी पिलाती। आपके मुबारक गिलास के साथ वो सेहत के लिए पानी पीते। इमाम अल बुखारी रहमतुल्लाहि तआला अलैह की कब्र से मस्क की खुशबू बनती थी और लोग रहमतें हासिल करने के लिए कब्र से मिट्टी उठाकर ले जाते थे। किसी आलिम या मुफ़ती ने इससे इंकार नहीं किया। हदीस और फिकह के उलेमा ने ऐसे अमाल की

इजाज़त दी है। **(अल-उसूल अल-अरबा, पहला हिस्सा।)** उसूल-उल-अरबा किताब से तर्जुमा यहाँ खत्म होता है।

[सहाबतुल-इकराम और ताबिईन के वक्त के दौरान और बल्कि पहली मिलयन साल के आखिर तक वहाँ बहुत सारे औलिया और सुनहा थे।लोग उनसे रहमतें हासिल करने उनके पास जाते थे इसके साथ साथ उनकी दुआएँ भी हासिल करते थे।वहाँ ऐसी कोई ज़रूरत नहीं थी के मरदे को सिफ़ारिश (तवस्सुल) वाला बनाए या बेजान चीज़ों से रहमतें (तबररूक) लिया जाए।ये सच्चाई के ये वाक्यात उन दिनों में कम थे लेकिन उसका मतलब ये नहीं के ऐसा मना किया गया।अगर उन्हें मना/हराम किया गया होता तो, वहाँ वो होंगे जिन्होने उन्हें बचाया हो।किसी आलिम ने उन्हें नहीं बचाया।जैसे के आखिरी ज़माना आ गया है, अलबत्ता, बिदअत और कुफ्र के अलामात बढ़ गए।जवानों को मज़हबी हुक्काम और सांईसदानो के रूप में इस्लाम के दुश्मनो के ज़रिए धोका दिया जाने लगा।और, क्योंकि लामज़हबियत या इलहादी उनके मकासिद की मुनासबत से थे, तानशाह और ज़ालिम, अपने नफ़सों के गुलामों ने इस तहरीक को बड़ी मदद की। (वो जो सांईसदानो के रूप में थे उनको **'शाम सांईसदान** कहा गया, जबकि मज़हबी आदमियों के रूप में जो थे उनको **ज़िंदीक** कहा गया।) आलिमों और वलियों की तादाद कम हो गई, बल्कि पिछली दहाइयों में कोई भी ज़ाहिर नहीं हुआ, और, इसलिए , ये ज़रूरी हो गया के औलिया की कब्रों और उनकी वाबस्ता चीज़ों से रहमतें लेना।लेकिन, कुछ चीज़ें जो

इसमें करनी हराम हैं, इनमें भी शामिल कर दीं गई, जैसे के वो हर मामले और इबादत में की जाती थी।

इस्लाम के उलेमा की इत्तिफ़ाक राए से, न सिर्फ़ ये कानूनी अमल खुद रोकना चाहिए, भले ही इसमें ममनुअ बरताव (हराम) मुतारिफ़ कराया गया हो, बल्कि इसमें मुतारिफ़ बिदअत को हटाना चाहिए। (इस मज़मून पर उलेमा की तहरीरें अहमद बिन ज़ैनी दहलान की **अद-दुरर अस-सनिय्या फि र-रददी अला ल- वहाबिया** मिस्र, **1319** और **1347**, फोटोग्राफ़ी के ज़रीये छपवाई, इस्तांबुल, **1395** (**1975** ए।डी) में हवाला दिया गया। जिन्होने इन्हें पढ़ा है उन्हें कोई शक नहीं है।)

5- हतमी तबसरा

अल्लाह तआला की सारी सिफ़ात हर मखलूक/तखलीक में अपने आपको ज़ाहिर करती हैं, छोटी सख्याओं में। मिसाल के तौर पर, जैसे के उसकी रहमत और रहमदिली की सिफ़ात अपने आपको ज़ाहिर करती है, उसी तरह उसके गुस्से, कुहर और अज़ाब की सिफ़ात ज़ाहिर होती हैं। उसने हर शए में हर चीज़ में फाएदे और नक्सान तखलीक किए हैं। आदमी एक ही वक्त में शीरीन, खुशगवार चीज़ें फर्ज़ करना चाहता हे कि वो मूफ़ीद साबित हों, और ये इमकानात उसे गुमराह करते हैं। अल्लाह तआला, जो बहुत रहम वाला है, नबियों को भेजा फाएदें और नुकसानात हर चीज़ का ऐलान करने के लिए, जो

फाएदें उन्हें करने का हुकूम दिया और जो नुकसानदह हैं उन्हें ममनुअ किया। उसने ये एहकामात फर्ज़ और ममनुआत **दुनिया** के तौर पर **हराम** करार दिया। ये एहकामात और ममनुअ मजमूई तौर पर शरीअत की इसतलाह के साथ वाज़ेह किया गया। "दुनिया को नज़रअंददाज़ करो।" इस पाबंदी का मतलब है, "हराम करना नज़र अंदाज़ करो!" "दुनिया" लफ़्ज़ का दूसरा मआनी है" मरने से पहले की ज़िंदगी"। कोई भी दुनियावी ऐश और ज़ाएके हराम (मना) नहीं हैं। उन्हें नुकसानदह तरीके से इस्तेमाल ना किया जाए। ये या तो फर्ज़ है या सुन्नत है के मुखतलिफ़ अज़ू मुखतलिफ़ चीज़ों से मज़ा लेते हैं और ऐश करते हैं। और यही मामला दिल ओर नफ़स के साथ है। आदमी के सारे अज़ा दिल के हुकूम में होते हैं। ये दिल, जिसे हम कलब कहते हैं, वो ऐसी चीज़ नहीं जो दिखाई दे। ये एक तरह की ताकत है गोशत के एक टुकड़े में तखरीब की हुई जिसे हम दिल बुलाते हैं।

नफ़स को हराम करने में मज़ा आता है। शैतान और नफस एक तरफ़ और बुरी संगत दूसरी तरफ़, जो न सिर्फ़ नुकसानदायक दोस्तो के ज़रिए गुमराही वाले लफ़्ज़ों और तहरीरों में इज़ाफ़ा करती हैं बल्कि रेडियो और टेलिविज़न ब्राइडकास्ट से भी मोहित होते हैं, आदमी को खराब करने का दावा करते हैं और दिल को हराम करने के लिए उकसाते हैं।

एक शख्स जिसके दिल में **ईमान** है, यानी, जो इस सच्चाई में यकीन रखे के मुहम्मद अलैहि सलाम नबी हैं, उसे एक **मुसलमान** कहा जाएगा। एक मुसलमान

को आप मुहम्मद अलैहिसलाम की शरीअत के अमाल को अपनाना होगा और इसे शरीअत के सच्चे आलिमों के लिखी किताबें पड़नी होगी जिन्हें अहले सुन्नत कहते हैं। उसे ऐसे किसी लोगो कि लिखी किताबें नही पड़नी चहिये जो बग़ैर किसी मसलक के लागो के ज़रिए लिखी गई हो! उसे बग़ैर एक मसलक के लागो के ज़रिए लिखी गई मज़हबी किताबों को नहीं पढ़ना चाहिए। जैसे ही वो अपने आपको शरीअत में ढाल लेगा, वो धीरे-धीरे दुनिया की तरफ़ नपसंदी रखता जाएगा यानी हराम की तरफ़। जब दिल हराम करने की इच्छा से खाली हो जाएगा तो अल्लाह का प्यार उसमे दाखिल हो जाएगा ये बिल्कुल उसी तरह हैं जैसे जब एक बोतल पानी से खाली हो जाती है इसके अंदर हवा फौरन पानी की जगह ले लेती है। नामालूम हसास/होश ऐसे दिल में पनपते हैं। ये पूरी दुनिया को समझना शुरू कर देता है, यहाँ तक के कब्र में ज़िंदगी भी। ये जहाँ कहीं भी होगा इसे एक आवाज़ सुनाई देगी। जहाँ कहीं आवाज़ होगी वो इसे सुनेगा। उसकी सारी इबादतें ओर दुआएँ क़ुबूल होंगी। वो एक अमन भरी ओर खुशी वाली ज़िंदगी गुज़ारेगा।

6-मस्जिद अन-नबी

मस्जिद अन-नबी को बड़ा करने की चार मुखतलिफ़ मराहिलः

1-बाव अस-सलाम

2-बाव अल-जिब्राईल

3-बाव अन-निसा

4-बाव अर-रहमा

5-बाव अट-तवस्सुल

6-शवकत अस-सआदा

7-हुजरत अस-सआदा

8-मुवाजहत अश-शरीफ़ा

9-मेहराव अन-नबी

10-मेहराव अल-उसमानी

11-रेत के साथ ढका हुआ हिस्सा
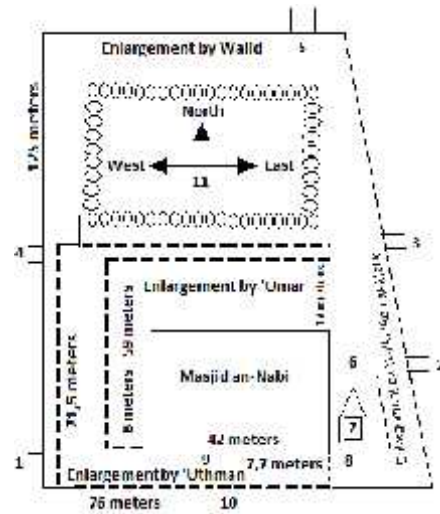
एक सच्चा मुस्लिम किस तरह बना जाए?

सबसे पहली जो अहले-सुन्नत आलिमों ने अपनी किताबों में बताया है उसके मुताबिक ईमान को सही करना।क्योंकि, सिर्फ़ ये मसलक ही दोज़ख से बचा रहेगा।अल्लाह तआला उन अज़ीम लोगो के काम के लिए बहुत सारा इनाम अता फरमाए।चारों मसालिक के आलिम, जो इजतिहाद के दर्जे तक पहुँच गए, और अज़ीम आलिम जो उनके ज़रिए पढ़ाए गए उन्हें **अहले सुन्नत** के आलिम कहते हैं।ईमान सही करने के बाद, ये ज़रूरी है के **फिकह** में बताई गई तालीम के मुताबिक इबादत अदा की जाए, यानि, शरीअत के एहकामात को करना और जो इसने ममनुअ किया है उससे दूर रहना।एक शख्स को रोज़ाना पाँच वक्त की नमाज़ बग़ैर बेमन और सुस्ती के अदा करनी चाहिए, और उसकी शर्तो और तादील-ए-अरकान के बारे में सावधान होना चाहिए।इमाम-ए-अज़म अबू हनीफ़ा ने फरमाया, "सोने और चाँदी जिसे औरतें जैवरात की तरह इस्तेमाल करती हैं उसकी भी ज़कात भी देना ज़रूरी है।"

किसी को अपनी कीमती ज़िंदगी चाहे गैरज़रूरी मुबाह हो उस पर बरबाद नहीं करनी चाहिए।ये बेशक ज़रूरी है के इसे हराम पर ज़ाया न किया जाए।हमें अपने आपको तग़ननी, गाने, गाने बजाने के साज़ों या गानो में सरूफ़ नहीं करना चाहिए।हमें उनके ज़रिए हमारी नफ़सों को दिए गए ऐश से धोका नहीं खाना चाहिए।ये शहद के साथ मिले हुए और चीनी से धके हुए ज़हर हैं।

एक शख्स को **ग़ीबत** नहीं करनी चाहिए।ग़ीबत हराम होती है।[ग़ीबत का मतलब है एक मुसलमान या एक ज़िम्मी पौशिदा गलती को उसके पीछे बताना।ये ज़रूरी हें मुसलमानो को हरबीस की बुराइयो को बताना, उनके गुनाहों के बारे में में जिन्होने ये गुनाह अवाम में किए, उनकी बुराइयाँ जिन्होने मुसलमानों को तकलीफ़ दी ओर जिन्होने मुसलमानें को खरीद व फरोखत में धोका दिया, इस तरह मुसलमानो को उनके नुकसानों के बारे में सावधान करने का सबब बनें, ओर उनके इल्ज़ामों के बारे में बताना जो इस्लाम के बारे में गलत बोलते और लिखते हैं; ये सब ग़ीबत नहीं है। [**रादद-उल-मुहतारः 5-263**]।

किसी को मुसलमनो के दरमियान अफ़वाह नहीं फैलानी चाहिए।ये ऐलान किया गया है के मुखतलिफ़ किस्म के अज़ाब दिए जाएंगे उनको जो ये दोनो किस्म के गुनाह करेंगे।झूठ और बदनाम करना भी हराम हैं, और इससे परे रहना चाहिए।ये दो बुराइयों हर मज़हब में हराम हैं।उनकी सज़ाएँ बहुत सख्त हैं।मुसलमानों की बुराइयों को छुपाना, उनके पौशिदा गुनाहों को न फ़ैलाना और उनको उनकी गलतियों के लिए माफ़ कर देना बहुत सवाव हासिल कराता है।किसी को अपने से कमतर पर रहम करना चाहिए, उनपर जो उसके हुकूम में हों जैसे के बीवियाँ, बच्चे, शार्गिदद, सिपाही और गरीबों पर भी।किसी को उन गरीब लोगो पर मामूली वजूहात के लिए तकलीफ़ या गुस्सा या कसम नहीं खाना चाहिए।एक शख्स को किसी की मिलकियत, ज़िंदगी, इज़्ज़त, या

पाकिज़गी पर हमला नहीं करना चाहिए। दूसरे लोगो और हुकूमत के कर्ज़ों को अदा करना चाहिए। रिश्वत, लेना या देना हराम हैं। अगरचे, एक जालिम शख्स के जुल्मों से घुटकारा हासिल करने के लिए या कुछ दूसरी नागावार हालत से छुटकारा हासिल करने के लिए इसे देना रिश्वत नहीं है। बहरहाल, ऐसे मामलों में भी, पेश की गई रिश्वत कुबूल करना हराम है। हर किसी को अपनी खराबियाँ खुद देखनी चहिएँ, और हर घंटे उसे उन गलतियों का सोचना चाहिए जे उसने अल्लाह तआला की तरफ़ कीं। उसे हमेशा अपने दिमाग़ में ये रखना चाहिए कि अल्लाह तआला उसे सज़ा देने में जल्दी नहीं करेगा, ना ही उसकी रोज़ी काटेगा। वालदेन के हुकूम के अलफ़ाज़, या सरकार के, शरीअत के मुताबिक, उन्हें मानना चाहिए, लेकिन जो शरीअत के मुकाबिल नहीं हैं, उनके खिलाफ़ विरोध नहीं होना चाहिए ताकि हम कोई फितना न उठा पाएँ [**मकतूबात-ए-मासूमिया** किताब की दूसरी जिल्द में **123**वें खत को देखिए।]

ईमान को सही करने के बाद और फिकह के एहकाम को करके, एक शख्स अपना सारा वक्त अल्लाह तआला को याद करने में गुज़ारता है। किसी को अल्लाह तआल की याद को लगातार, ज़िकर करते रहना चाहिए जैसे के मज़हब के अज़ीम आदमियों ने बताया। एक शख्स को उन सब चीज़ों की तरफ़ दुश्मनी महसूस करनी चाहिए जो दिल को अल्लाह तआला की याद से बचाए/रोके। जितना ज़्यादा शरीअत के रूप में, शरीअत को मानने में सुस्ती

बढ़ जाती है, वो मज़ा धीरे धीरे कम हो जाता है, और आखिरकार पूरे तौर पर चला जाता है।

मुसलमान औरतों और इसी तरह आदमियों के भी बाहर की मसरूफ़ियात में शामिल होना जैसे के गेंद के खेल और तैराकी बग़ैर अपने (उनके जिस्मों के वो हिस्से जिन्हें इस्लाम ने दूसरों के सामने ज़ाहिर करने से ममनुअ करार दिया है और जिन्हें ऐसे कहा जाता है) उनके अवरत हिस्सों को बग़ैर ढ़के हुए बाहर निकलना हराम है। इसी तरह, ऐसी जगहों पर मौजूद होना जहाँ लोग अपने अवरत हिस्सो को खोले हुए हों तो ये हराम है। (इस्लामी अख़लाक कदरें), सफ़ह. **331**] कुछ हराम करते वक्त, कोई पाँच वक्त की रोज़ाना की नमाज़ की इबादत के लिए मुकर्रर वक्त से भी दूर भटक सकता है (बग़ैर उसे उसके मुकर्रर वक्त में अदा किए हुए), ये न सिर्फ़ गुनाह में इज़ाफ़ा करेगा, बल्कि ये शख्स को कुफ्र की हालत में पहुँचा सकता है। किसी भी किस्म का कोई भी संगीत का साज़ बजाना, साथ के साथ कोई भी मज़हबी किरअत, मिसाल के तौर कुरआन अल-करीम पढ़ना या किरअत करना, मोलिद मे अल्लाह के नबी, मुहम्मद अलैहि स-सलाम के लिये किरअत गाते बजाते करना। या अज़ान सुरीली आवाज़ के साथ, ये सब हराम हैं। संगीत के साज़ों जैसे के बासंरी या लऊडस्पीकरों को ऐसे मज़हबी प्रदर्शनो की अदाएगी करना भी, हराम है। किसी चीज़ को सुरीली आवाज़ से कहने का मतलब कुछ हुरूफ़ को बढ़ाना जिसका मतलब लफ़्ज़ों को खराब करना है। वहाबी मोलिद की

अदाएगी कैस्युइस्ट्रीस के साथ ममनुअ करने की कोशिश करते हैं जैसे के, "नबी मर गए; वो तुम्हें नहीं सुनेंगे। इसके अलावा, अल्लाह के आलावा किसी और की तसबीह कहना शिर्क है।" ये बेयकीन लोगो का यकीन है। लाऊडस्पीकर का इस्तेमाल करना टेलिफ़ोन के इस्तेमाल करने की तरह है। अगर कोई चीज़ कहना हराम है, तो इसे लाऊडस्पीकर के ज़रिए सुनने की इजाज़त नहीं है। तालीमी मकासिद के तौर पर लऊडस्पीकर का इस्तेमाल करने की इजाज़त है, मिसाल के तौर पर सांईस, आर्टस, मआशियास, मज़हबी तालीम, अखलाकियात और मार्शल के सबक पढ़ाने के लिए। गलत इशाअत का ऐलान गढ़ने के लिए ताकि अखलाक़े और मज़हबी बरताव बिगढे या अज़ान के दौरान या आम नमाज़ की इबादत में, या ऐसी अदाएगियों को सुनते वक्त लाऊडस्पीकर के इस्तेमाल करने की इजाज़त नहीं है। मीनार पर लगे हुए लाऊडस्पीकर से आवाज़ सुनना वो मौअज़्ज़न (वो शख्स जो अज़ान देता है) की आवाज़ नहीं होती। ये साज़ के ज़रिए पैदा की गई आवाज़ होती है, इसकी इंसानी आवाज़ से इतना मिलने के बावजूद। जब हम ये आवाज़ सुनें, तो हमें नमाज़ का समय हो गया कहना चाहिए, बजाए "आज़ान दी जा रही है कहने के।" क्योंकि, लाऊडस्पीकर के ज़रिए पैदा की गई आवाज़ वो असल में अवाज़ कह रहे शख्स की अवाज़ नहीं है। ये अज़ान की दोबारा निकाली गई कॉपी है। (इंडिया के अहले सुन्नत आलीम **मुफती ए आज़म हिन्द मुस्तफा रज़ा खान अलेयहिरहमा बिन अहमद रज़ा ख़ान फाज़ीले बरेलवी (आला हज़रत)** कि किताब **फतवा बरकाते मुस्ताफा सफहा नम्बर 28** देखें)

ये इस तरह से कुछ हदीस-ए-शरीफ़ में बयान हैः **"दुनिया के आखिर में कुरआन अल-करीम को मिज़मारों** (जिसे साज़ कहा जाता है) **के ज़रिए पढ़ा जाएगा।" "एक ऐसा वक्त आएगा के कुरआन अल-करीम मिज़मारें के ज़रिए पढ़ा जाएगा।ये अल्लाह तआला को खुश करने के लिए नहीं पढ़ा जाएगा, बल्कि सिर्फ़ खुशीयों के लिए पढ़ा जाएगा।" बहुत से लोग होंगे जो कुरआन अल-करीम को पढ़ेंगे** (या किरअत) **करेंगे और कुरआन-अल-करीम उन पर लानत भेजेगा।" "एक वक्त ऐसा आएगा जब ऐयाश लोग मुज़ाहिबिन (दरमियान) होंगे।" "एक ऐसा वक्त भी आएगा जब कुरआन अल-करीम मिज़मारों के ज़रिए पढ़ा जाएगा।" "अल्लाह तआला उन पर लानत भेजेगा।"** मिज़मार का मतलब है किसी भी तरह का संगीत का साज़, जैसे के एक सीटी ही।एक लाऊडस्पीकर मिज़मार की तरह है।मौअज़्ज़न को इन हदीस-ए-शरीफ़ का खौफ़ होना चाहिए और आज़ान को लाऊडस्पीकर बगेर पड़ना चाहीये।जो लोग जाहिल होते हैं ज़ोर देते हैं के लाऊडस्पीकर फाएदेमंद तदबीरें हैं क्योंकि ये आवाज़ को लंबे फासले तक पहुँचाते हैं।हमारे नबी ने धिक्कारा, **"इबादत के अमाल बिल्कुल उसी तरह अदा करो जिस तरह तुमने मुझे और मेरे असहाब (साथियों) को करते हुए देखा! वो जो इबादत के अमाल में तबदीली करते हैं उन्हें "अहल-ए-बिदअत"** (बिदअत के लोग, इलहादि) **कहते हैं।बिदअत के लोग बेशक दोज़ख में जाएंगे।उनका कोई भी इबादत का अमल कुबूल नहीं किया जएगा।"** ये कुछ सही नहीं हैं के मज़हबी अमाल में फाएंदेमंद तरमीहाल करने का दावा किया जाए।ऐसे दावे इस्लाम के दुश्मनों के ज़रिए झूठ झूठ होते

हैं। ये इस्लामी आालिम का काम है ये फ़ैसला करना कि क्या ये कुछ तबदीली फाएदेमंद हे। ये मुबसिर आलिम **मुजतहिद** कहे जाते हैं। मुजतहिद इच्छानुसार तबदीली नहीं करते। वो जानते हैं कि या एक तरमीम एक तबदीली बिदअत है। वो इस हकीकत पर इत्तिफ़ाक रखते थे के लाऊडस्पीकर के ज़रिए (मिज़ार) अज़ान देना एक बिदअत का काम है। रास्ता वह हे जो इंसानी दिल को अल्लाह तआला के प्यार की तरफ ले जाए। तखलीक के ज़रिए, दिल बिल्कुल पाक है शीशे की तरह। इबादत के काम दिल की पाकिज़गी और चमक को बढ़ा देते हैं। गुनाह दिल को सियाह कर देते हैं फिर वो फेज़ और नूर हासिल नहीं कर पाते। सालिह (पाक) मुसलमानों ने इस गैर मौजूदगी का एहसास किया और उसके बारे में उदासी महसूस की। वो गुनाह करने की तरफ़ नहीं झुकते, बल्कि ज़्यादा से ज़्यादा इबादत के काम करने में लगे रहते हैं। सिर्फ़ रोज़ाना की पाँच वक्त की नमाज़ अदा करने के अलावा, वो मिसाल के तौर पर और दूसरी नमाज़ की इबादत को भी करना चाहते हैं। गुनाह करना मज़ा दिलाता है और इंसानी नफ़स को फाएदेमंद लगता है। सारे किस्म के बिदअत और गुनाह नफ़स के लिए ग़िज़ाईयत वाले हैं, जो अल्लाह तआला का एक दुश्मन है, और वे इसकी गहराई को मज़बूत बनाते हैं। उसकी एक मिसाल लाऊडस्पीकर के ज़रिए अज़ान देना है।

बच्चपन इल्म हासिल करने की उमर है और अगर ये एहम वक्त बरबाद हो गया, मुसालमान बच्चे जाहिल रह जाएंगे, जिसका मतलब है के आने वाली

नस्ल लामज़हबी होगी। खामोशी से इस आफत को होते हुए देखना ये मज़हबी हाकमिन को भी इस बड़े गुनाह में बड़ा हिस्सेदार बनाएगा। अगर एक शख्स हलाल और हराम को नहीं सीखता, या अगरचे उन्हें सीख भी लेता है और उनपे गलत तानागोशी करता है तो वो काफ़िर बन जाता है। वो गिरजा घरों में जाने वालो या उन काफिरों से जो बुतों या तसवीरों की पूजा करते हैं उनसे मुखतलिफ़ नहीं है। आदमी का सबसे बड़ा दुश्मन उसका खुद की नफ़स है। वो हमेशा वो करने की इच्छा रखता है जो उसके लिए नुकसानदायक है। नफ़स की इच्छाऔं को शहवत (हवस) कहते हैं। नफस की जिस्मानी ज़रूरत को करना बहुत मज़ा देता हे इसे ज़ुरुरत के मुताबिक करना गुनाह नहीं है। ताहम इसे ज़्यादा करना नुकसानदायक और गुनाह से भरा है। मुसलमान बच्चों को मज़हबी तालीम हासिल करने से बहकाने के लिए, इस्लाम के दुश्मनों ने उन्हें खेलकूद गातिविधायों और जिस्मानी कसरत के नाम में गेंद के खेलों में मरतूब कर लिया। चूँकि एकदुसरे के जिस्म के अवरत हिस्सों को देखना नफ़स का पसंदीदा लुतफ है, गेंद खेल का पागलपन बच्चों में बहुत ज़्यादा फैल रहा है। मुसलमान वालदेन को चाहिए के उनके जवान लड़के और लड़कियाँ के लायक होने पे जितनी जल्दी मुमकिन हो सके शादी में बंद जाएँ, उन्हें उनको मखलूत जिन्स के ग्रुप के बाहर जाने से और अवरत हिस्सों को ज़ाहिर करने से रोंके, और उन्हें सच्चे मुसलमान उस्ताद के पास भेंजे ताकि वो अपने मज़हब और ईमान को सींखे।

हुसैन हिल्मी इश्कि रहमतु-अल्लाह अलैहि

हुसैन हिल्मी इश्कि रहमत-अल्लाहि-अलैह, हकीकत किताबेवी की इशाअत के पब्लिशर हैं, ये अय्युब सुल्तान, इस्तांबुल में **1329** (ए.डी **1911**) में पैदा हुए। **140** किताबों में से, **60** अरबी में, **25**फारसी में, **14** तर्की में और बाकी बची हुई किताबे फ्रेंच, जर्मन, इंगलिश, रूसी और दूसरी ज़बानों में इशाअत की गई।

हुसैन हल्मी इशिक रहमत-अल्लाहि अलैह (सय्यैद अबदुलहकीम अरवासी, रहमत-अल्लाहि अलैहि, मज़हब के एक गहरे आलिम और तसव्वुफ़ के फ़ज़ाईल में कामिल और शर्गिदों को पूरे तौर पर रहनुमाई करने वाले तरीके की राह दिखाने वाले, गौरव की बात शैर अकलमंदी के हाकिम), एक काबिल अज़ीम इस्लामी आलिम खुशियों की राह दिखाने के लायक, उन्होने **25** अक्टूबर, **2001** (**8** शाबान **1422**) और **26** अक्टूबर, **2001** (**9** शाबान **1422**) की बीच रात के दौरान वफात पाई। उन्हें अय्युब सुल्तान में दफनाया गया, जहाँ वह पैदा हुए थे।

TO: **हकीकत बुकस्टोर**

प्यारे इस्लामी भाइयों

असलामु अलैकुम व रहमतुल्लाहि व बराकतुह।

सारी तारीफ़ अल्लाह तआला के लिए हैं। पाक नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) पर सलामती हो। अल्लाह तआला तुम से राज़ी हो! मैं ये खत तुम्हारा शुक्रिया अदा करने और सीधे रास्ते की तरफ़ तुम्हारे अच्छे कामो की तारीफ़ करने के लिए लिख रहा हूँ कि जो इस्लाम और मुसलमानो को जदीद, नाबिना दुनिया में हसिल कराया। मुझे तुम्हारी काबिल और कीमती किताबे मिल गई हैं। सआदत-ए-अबदिया **4**, ईमान और इस्लाम, और सुन्नी रास्ता मैने कदा और कदर संगीत के साथ पर सवालात पूछते हुए एक खत लिखा था उसके छः दिन बाद किताबें आ गई। बहरहाल, मैं नहीं जानता के मैं किस तरह तुम्हारा शुक्रिया करूँ क्योंकि कोई लफज़, जुमला नही खत मे महसूसात तुम तक पहुँचा सके। असल में कभी नहीं समझा के मैं अल्फ़ाज़ी और खतूत के ज़रिए अपनी शुक गुज़ारी अदा करूंगा और उम्मीद हे के आप मुझ कमतर और कमज़ोर दिमाग को सहन करेंगे।

पहले पल में, मैं सआदत-ए-अबदिया **3** पर अपना शुक्रिया ज़ाहिर करने के लिए लिख रहा हूँ और उसकी कीमत व हकीकत किताबेवी की दुसरी इशाअत की गुज़ारीश कर रहा हूं। तुम कितने महान आदमी हो! तुमने मुझ से

किताब की कीमत अदा करने के लिए नहीं कहा। फिर भी, तुमने ओर दूसरी किताबे भेज दी बग़ैर कुछ माँगे। मैं बिल्कुल भी नहीं जानता कि तुमने किस तरह मेरे दिल खुश किया, मुझे खुद को एक मुसलमान समझने के लिए और मुझे इस्लाम के दुश्मनों से बचाने के लिए। मेरे पास ज़्यादा कुछ नहीं कहने के लिए सिवाए इसके के अल्लाह तुमसे राज़ी हो, तुम्हारी हिमायत करे, बरकतें और हमेशा के लिए खुशियों का इनाम दे।

जैसे के मैने अपना ध्यान अभी मिली हुई सआदत-ए-अबदिया 4 और दूसरों ज़िल्दो पे लगाया, मैने अंदाज़ा लगाया के तुमने इस्लाम को पूरी पाकिज़गी के साथ पेश किया और मैं बहुत खूश हूँ अच्छे अधिकाार के साथ के इसने मेरे ज़्यादा तर सवालों के जवाब दे दिए। ये किताब अनोखी किताब है जो अमली ईमान और मुसलमानो के फर्ज़ सीखाती हैं। ये मेरी दोस्त बन गई हैं जब मैं बाहर जाता हूँ जब मैं अकेला होता मेरी साथी। मेरी उस्ताद जब सीखता हूँ और जब इबादत करता हूँ मेरी रहबर। सारी किताबें बस बहुत अच्छी हैं। उनके साथ, मैने ये एहसास किया के किसी को अपने आपको ऐश व आराम, खुशहाली और अच्छी ज़िंदगी में मुबतला न किया जाए बल्कि मेहनत की कोशिश और इस्लामी तालीम को गहराई से सीखें और हर उमर के लोगो को सच्चे मज़हब का पैग़ाम पुहचाया जाए।

हालांकि, मुझे बहुत अफसोस है और कड़े रूप तुम्हें इतलाअ दे रहा हूँ के मेरे वालिद एक अमली मुसलमान नहीं हैं। ये कई सालों पहले मेरे इस्लाम के मज़हब

को सीखने के रास्ते में रूकावट थे। मैं कई सालो तक जुल्म का शिकार रहा और घर में हर तरफ़ कोई अमल नहीं था। हर वक्त और सालो मैं बहुत ज़्यादा सोचता रहा और चीज़ों को ढूँढते हुए दुआए करता रहा। अपनी काविलियात के साथ इस हालत से बाहर निकलने का तरीका प्लान करता रहा। ये उस वक्त बात हे जब मेरी हमउमर जवान आदमी मेरी ज़िंदगी में आया हम इतने ज़्यादा घुल मिल गए के आमतौर पर अपने ज़ाती मामले भी एक दूसरे के साथ चर्चा करने लगे। मेरी परेशानी पर वहस करने के वाद, उसने मुझे तुम्हारी पव्लिकेशन को लिखने के लिए कहा। कई सालों तक, मैं इस बात पर बेहद सोचता रहा के मुझे किसने मुसलमान बनाया। मैं इस बात की छानबीन करता रहा के किस तरह एक मुसलमान सच्चाई और साफ़ तौर से कुरआन अल करीम को कुबूल करता है, संजीदगी और पूरे तौर पर उनको अमल में लाता है। दुनिया के इस हिस्से में, लोग बहुत खराब हैं, बहुत सारे बिदअती ग्रुप हैं जो मज़हब में तिजारत करते हैं और नफ़सानी इच्छाओं को पूरा करने के लिए मज़हब को कारोबार में तबदील कर देते हैं। उनमें से कुछ जो मुसलमान लिडर होने का दावा करते हैं वो इस्लाम से भटक गए और खराव हो गए हैं। वहुत सारो ने मज़हब को मुनाफ़ा बखश कारोबार में बदल दिया है जिससे उन्होने लाखो नाइस (नाइजीरियाई करंसी नोट) को एहसास दरहकीकत कोई इतना ज़्यादा भी सावधान नहीं हो सकता। मज़हवी रहनुमाओं ने ईमान को सिर्फ़ मुंह के अलफ़ाज़ बना दिया जो खुबसूरत वयानात से सजाए गए सिर्फ़ तालियाँ अपनी तरफ़ खीचने के लिए/अपनी तरफ़ मुतावज्जह करने के लिए।

अपने आपको तुम्हारी इशाअत से जोड़ने के बाद, मुझे ये एहसास हुआ के मुझे किसी और की ज़रूरत नहीं और मुझे इस दुनिया में सिवाए हज़रत हिल्मी इश्कि के और कुछ नहीं चाहिए।मुझे ये समझ आ गया है कि मुझे आखिरत में बहुत पछताना पडेगा जो अगर मैं सच्ची और सही तालीम को ढूँढने में नाकाम रहा। मैं अपने अल्लाह को अपना मामला सही साबित करने के लिए क्या बताऊँगा अगर मैं इस्लाम को सीखूँगा नहीं और खिदमत नहीं करूँगा।

इस्लाम में प्यारे भाइयों, मैने अपना दिमाग़ बना लिया है और वाहिद मज़हब को सीखने के लिए तैयार हूँ।मैं हाथ बाँधकर नहीं बेठना चाहता कि लाचारगी से देखता रहूँ जबकि वो लोगो को बरबादी की तरफ़ ले जा रहे हैं।मैं इसलिए तुम्हारा बहुत शुक्रगुज़ार हूँगा कुबूल कर लोगे।मैं तुम्हारी इस्लाम की जददोजहद में तुम्हारें सारे अमाल में साथ रहना चाहता हूँ क्योंकि ये मेरे जददोजहद और अमाल भी हैं।मैं सही दीन सीखना चाहता हूँ और अपने आपको अपकी रहनुमाई और देख रेख में हनफ़ी मसलक में शामिल करना चाहता हूँ ।

अगर मेरी अर्ज़ी कुबूल है, तो मुझे तफ़सीली जानकारी चाहिए के किस तरह मैं अपने ट्रासंपोर्ट का इंतेज़ाम करूँ।

इस दौरान, जैसा के मेरे पास अभी कोई ईमकान नहीं हैं, मैं कुछ सालें के लिए काम करना चाहता हूँ अपने ट्रासंपोट का खर्चो को उठाने के लिये।

मैं दूबारा कहना चाहता हूँ कि मैं अपने फौटो की एक कॉपी इसके साथ लगा रहा हूँ और अपने आखिरी खत में कदा और कदर पर मैने कुछ सवालात पूछे थे। खुशनसीबी से, सआदत-ए-अबदिया **4** ने संगीत पर मेरी उलझन का जवाब दे दिया।

मैं चाहता हूँ कि तुम इसी तरह मुझे अपनी ज़्यादा कीमती किताबें भेजो। मैं चाहता हूँ कि तुम मेरी गलत अमाल और इस्लाम के दुश्मनों की किताबों के खिलाफ़ मुकाबले और हिफ़ाज़त में मेरी मदद करो।

अल्लाह तुम्हारे लिए अच्छा करे जहाँ कहीं भी तुम हो! आमीन

वअस्सलाम।

इस्लाम में तुम्हारा भाई

अलावी

मुहम्मद शैख

प. ओ. बोक्स **1071**

ओगबमसो, ओयो स्टेट

नाइजिरिया

शब्दकोश

तसव्वुफ़ के मुतअल्लिक इंदराजात सबसे अच्छी अहमद अल-फारूकी अस-सिरहिंदी रहमतुल्लाहि तआला अलैह की **मकतूबात** से सीखी जा सकती हैं।

आबिदः कोई जो बहुत ज़्यादा इबादत करे।

अहल अल-बैतः नबी (अलैहि स-सलाम) के सबसे नज़दीकी रिश्तेदारः (ज़्यादातर **उलैमा** के मुताबिक), अली, चचेरे भाई और दमाद; फातिमा बेटी; हसन और हुसैन, नवासे (रज़ी-अल्लाहु तआला अनहुम)।

इमामाात अल-मज़ाहिबः इमाम अल-मज़हब की जमा।

आलिमः (जमा उलैमा) इस्लाम का एक मुसलमान आलिम।

अल्लाहु तआलाः अल्लाह तआला जिसे हर किस्म की अज़मत है।

अंसारः वो मुसलमान जिन्होने मक्का की फतह से पहले इस्लाम कुबूल किया।

अकचाः एक सिक्का, पैसे की इकाई।

अराफ़ातः मक्का के शुमाल में **24** किलेमिटर वाकेअ एक खुली जगह।

अर्शः सात आसमानो और कुरसी के मुतअलिक मआमलात का खात्मा, जो आसमान से बाहर है और अर्श के अंदर।

असर अस-सआदाः खुशहाली का ज़माना, नबी अलैहि स-सलाम और चारों खलीफ़ाओं (रज़ी-अल्लाहु तआला अनहुम) का वक्त।

औलियाः वली की जमा।

औकाफ़ः (वक्फ़ की जमा) मुकद्दस बुनियादें।

आयत (करीमा)ः अल-कुरआन अल-करीम की आयत।

बसमलाः एक अरबी जुमला "बिस्मिल्लहि र-रहमानी र-रहीम" (अल्लाह के नाम में जो निहायत महरबान, रहम वाला हे।)

बिदअतः एक अमल, एक यकीन, एक बयान जो असली तौर पर इस्लाम में मौजूद नहीं और बाद में खोजा गया।

बातिलः झूठ, गलत, बेकार।

ज़िकरः (मिस्र) याद करने का, अल्लाह तआला को हर लम्हा दिमाग़ में रखने का।

दरहमः वज़न तीन ग्राम की इकाई।

एफ़ेंदीः उसमानिया रियास्त के ज़रिए रियास्ती और खासतौर से मज़हबी आलिमों को दिए गए खिताब; मखातिब करने का एक तरीका, जिसका मतलब है "आपका अज़ीम शख्स"।

फकीहः (जमा, फुकहा) एक आलिम जिसने ईस्लामी साइंस फिकह की तालीम हासिल की और उसे अमाल मे लिया।

फर्ज़ः (एक अमल या चीज़) जिसे कुरआन अल-करीम में अल्लाह तआला के ज़रिए हुकूम किया गया।

फर्ज़ ऐनः हर मुसलमान के लिए फर्ज़। **फर्ज़ किफ़ायाः** फर्ज़ जो कम से कम एक मुसलमान के ज़रिए किया जाए।

फातीहाः कुरआन अल-करीम की **114** सूरतों में से पहली, जिसमें सात आयात हैं।

फतवाः 1) एक मुजतहिद का इजतिहाद। फिकह की किताबो में से एक मुफ़ती का नतीजा के क्या जाईज़ है क्या नही मज़हबी सवालो के रुखसा से जवाब देना।

फिकहः मुसलमनों को क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए इसके बारे में जानकारी/ईल्म; अमाल, इबादत।

फितना, फसादः ऐसे बयानात और अमाल का फैलना जो मुसलमानों और इस्लाम को नुकसान पहुँचाए।

फुकहाः (फकीह की जमा)।

ग़बान फाहिशः किसी खरीद पर मौजूदा कीमत से ज़्यादा कीमत का धोका दिया जाना; ग़ैर मामूली कीमत।

गाज़ाः ग़ैर-मस्लिमों के खिलाफ़ जंग, उन्हे इस्लाम में दाखिल करना; जिहाद।जो सिर्फ रियसातों के ज़रीये किया जाता है।अकेले मुस्लिम कोई ग्रुप या कोई सोसाइटी के नाम मे ऐसा नही कर सकती।

गाज़ीः गाज़ा में शामिल मुसलमान।

हदीस शरीफः मजमूई तौर पर सारी हदीसें; **इल्म अल-हदीस;** हदीस शरीफ़ की किताबें अल-हदीस **अल-कुदरी अस-सही, अल-हसनः** हदीस की किस्में (जिसके लिए, सआदत अबदिया, देंखे)।

हज़रतः इज़्ज़त का खिताब इस्लामी आलिमों के नाम से पहले इस्तेमाल होता है।

हजः मक्का की **फर्ज़** ज़ियारत।

हलालः इस्लाम में इजाज़त (अमल,चीज़)।

हनफ़ीः (एक मुसलमान) हनफ़ी मसलक का।

हनबलीः (एक मुसलमन) हनबली मसलक का।

हरामः इस्लाम में ममनुअ (अमल, चीज़)।

हसनः (हदीस देखिए)।

हिजराः नबी (अलैहि स-सलाम) की मक्का से मदीना हिजरत; अल-हिजर।

हिजाज़ः अरब में बहीर-ए-अहमर के लाल समुंद्री तट साहिल जहाँ मक्का और मदीना वाकअ हैं।

हिजरीः हिजरत की।

हुजरत अत-सआदा (अल मुअत्तरा)ः वो कमरा जहाँ नबी अलैहि स-सलाम और आपके दो फौरी खलीफ़ाओं के मज़ार शरिफ हैं।

इबादाः (इबादत की जमा) इबादत, बयान, अमल जिसका सवाब (ईनाम) आखिरत में दिया जाएगा।

ईदः **सालाना दो इस्लामी त्येहारों में से एक।**

इजतिहादः (मआनी या नतीजा मुजतहिद के ज़रिए निकाला जाना) आयत और हदीस के छुपे मआनी समझने की कोशिश करना।

इल्मः इल्म, साईस; **इल्म अल-हालः** (किताबें) इस्लामी तालीमात (एक मसलक की) जिसे हर मुसलमान को सीखने का हुकूम दिया गयाः इल्म अल-उसूलः तरीकाकार साईस, खासतौर से फिकह और कलाम की।

इमामः 1) बडा आलिम; जमाअत में एक लीडर; कलीफ़ (खलीफ़ा)।

ईमानः यकीन, इस्लाम का ईमान; कलाम, एतिकाद।

एतिकादः ईमान।

जहिलयाः जाहिलयत का दौर, यानी, इस्लाम से पहले अरब।

जमाअः मसजिद मे इमाम को छोड कर वह मुसलमान लोग जो जमा हैं।

जारीयाः ग़ैर-मस्लिम गुलाम औरत जंग में बंदी बनाई गई और बहन की तरह बरातव किया गया।

जिहादः ग़ैर मुसलमानो (या नफ़स) के खिलाफ़ जंग उसे इस्लाम में शामिल करने के लिये।

जुमाअः जुमें (की सलात)।

काबा (तअल-मुअज़्ज़मा)ः मक्का में अज़ीम मस्जिद में बड़ा कमरा।

कलामः ईमान की तालीम; इल्म अल-कलाम।

कलमात अश-शहादाः जुमला जो "अश्हदु. ......" से शुरू होता है। इस्लाम के पाँच बुनियादों में से पहला; इस्लाम में यकीन का ऐलान।

खरामतः (करामात जमा)।

खलीफ़ाः (खुलफ़ा जमा) खलीफ़ा।

खारिजीः वो बिदअती मुसलमान जो अलह अल-बैत और उनके माल के साथ दुश्मनी रखे।

खुत्बाः इमाम के ज़रिए जुमा और ईद की इबादतों में मिंब पर खुत्वा दिया जाना, जिसे सारी दुनिया में अरवी में पढ़ा जाता है (अगर दूसरी ज़बान में हो तो गुनाह होता है)।

मसलकः (जमा-मसालिक) एक इमाम खासतौर से जिनके ज़रिए सारा फिकह या एतिकाद के बारे में बताया गया।

मदीनत अल-मुनव्वराः मदीना का रोशन शहर।

महशरः आखिरी फ़ैसला।

मक्कात अल मुकररमाः मक्का का इज़्ज़तयाब शहर।

मकरूहः (अमल, चीज़) गलत, नापसंदीदा और जिस्से नबी अलैहिस-सलाम बचे हों; मकरूह तहरीमाः ज़्यादा ज़ोर के साथ ममनुअ।

मालिकीः मालिकी मसलक का (एक मुसलमान)।

मारिफ़ाः अल्लाह तआला की ज़ात की जनकारी और सिफ़ात (खासियतें) के बारे में इल्म; औलिया के दिलों तक हौसला अफ़ज़ाई।

मरवा ः मस्जिद अल-हराम के नज़दीक दो पहाड़ियों में से एक।

मस्जिदः मोस्क; अल मस्जिद अल-हरामः मक्का में अज़ीम मस्जिद; अल-मस्जिद अश-शरीफ़ (अस-सआदा, अल नबी)ः मदीना मस्जिद, नबी (अलैहि स-सलाम) के वक्त में बनाई गई और बाद में कई बार बड़ाई गई, जिसमें आपकी कब्र हे।

मोवज़ु : (हदीस की किस्म) एक हदीस के आलिम की तरफ़ से रखी गई शर्तो में से एक की कमी। (एक हदीस के सही होने के लिए)

मीलादीः ग्रेगोरीयन कैलेंडर का ईसाई दौर में से एक।

मीनाः एक गाँव मक्का के छः किलोमिटर शुमाल में।

मुबाहः अमल,चीज़ न ता हुकूम दिया गया ना ही मना किया गया।

मुफ़सिदः अमल, चीज़ जो खासतौर से, सलात मंसूख कर देती हैं।

मुफ़तीः अज़ीम आलिम जिन्हें फतवा जारी करने का इखतियार है।

मुहाजिरूनः वो मक्का के लोग जिन्होने मक्का की फतह से पहले इस्लाम कुबूल किया।

मुजादीदः इस्लाम के ताकतवत, तजदीदकार।

मोजजिज़ाः चमत्कार जो नवियों के लिए मखसूस, और अल्लाह तआला की तरफ़ से अजंम दिया गया।

मुकल्लिदः मुसलमान जो तकलीद का अमल करते हैं; ईमाम अल-मसलक का मानने वाला।

मुसतहबः (अमल,चीज़) कर लिया जाए सवाब का मुस्तहिक अगर छोड़ दिया जाए तो कोई गुनाह नहीं, नाही कुफ्र अगर नापसंद किया जाए।

मुतज़िला ः इस्लाम में **72** बिदअती फिरकों में से एक।

मुवाजाहत अस-सआदाः आपके मकबरे की, किवला के दीवार के सामने की जगह जहाँ मकबरे के सामने ज़ाएरीन खड़े होते हैं।[जिस तरफ़ नवी अलैहिस-सलाम का मुबारक सिर]

मुज़दलीफ़ाः मक्का के शहर और अरफ़ात के दरमियान का रकवा।

नफसः आदमी में एक ताकत जो उसे खुद को मज़हबी नुकसान पहुँचाती है।

नजासतः मज़हबी नापाक चीज़।

ना-महरमः (मुखालिफ़ जिन्स) जिससे शादी के रिश्ते की मनाही (हराम) नहीं है।

निकाहः इस्लाम में शादी के लिए (मिलन का काम)।बराए महरबानी तफसीरी जानकारी के लिये साअदतें अबदिया वलयाम पांच किताब का बारवां बाव देखें।

पाशाः उसमानिया रियास्त के ज़रिए स्टेटस्मेन, गर्वनर और खासतौर से ऊँचे मरतबे वाले अफसरान को खिताब दिया जाता था।अब (जनरल या एडमिरल)

काज़ीः मुसलमान जजः काज़ी।

किबलाःइस्लाम मे इबादत करने के दौरान उसकी सिमत (काबात अल-मुअज़्ज़म की तरफ़)।

कुरेशः अरब का कुरैश कबिला, नबी (अलैहि स-सलाम) खानदान।

कुरआन अल-करीमः पाक कुरआन।

रकआः सलात के दौरान खड़े होना, झुकना और सजदा (और बैठने) का सिलसिला, जो कम से कम दो और ज़्यादा से ज़्यादा से चार रकात हैं (फर्ज़ सलात के लिए)।

रमज़ानः मस्लिम कैलेंडर में पाक महीना।

रसूलुल्लाह (रसूल-अल्लाह)ः मुहम्मद (अलैहिस-सलाम) अल्लाह तआला के नबी; अल्लाह के पैगम्बर।

रावदात अल-मुताहहराः नबी अलैहिस-सलाम के मकबरे और मस्जिद अश-शरीफ़ के मिंबर बीच की जगह।

रुखसाः मज़हबी अमल का आसान तरीका इजाज़त दिया जाना।

सफ़ाः मस्जिद अल हराम के नज़दीक दो पहाडियों में से एक।

सहाबीः (जमा-अस-सहाबत अल इकराम) मुस्लिम जिन्होने नबी (अलैहि स-सलाम) को कम से कम एक बार देखा; साथी।

सहीहः **1**) मज़हबी तौर पर कनूनी; सही; इस्लाम के मुतफ़िक; **2**) (एक हदीस की) अच्छी तरह मुंतकिल, हदीस के आलिमों के ज़रिए रखी गई शर्तो के मुताबिक सच्चा।

सलातः **1**) नमाज़; सलवात; **2**) रस्मी इबादत कम से कम दो रकाअत की; नमाज़, (सलाम के साथ) फारसी में; सलात जनाज़ा मय्यैत की नमाज़।

सलवातः (सलात की जमा) खास इबादत जिसमें नबी (अलैहि स-सलाम) पर बरकतें और ऊँचे दर्जे माँगे जाते हैं।

सालिहः (जमा-सुल्हा) एक शख्स जो पाक है और गुनाहों से परे है, (उलटाः फासिक़); वली को भी देखो।

शाफ़ी-ईः शाफ़ी-ई मसलक का (एक मुसलमान)।

शैख अल-इस्लामः एक इस्लामी रियास्त में मज़हबी उमूर के दफ़तर के सरबराह।

शियांः इस्लाम में **72** ग़ैर सुन्नी गुपों में से एक।।

शिर्कः अल्लाह तआला का साथी मंसूब करना। (बयान, अमल,सबब होना)

सुल्हाः सालिह की जमा।

सुन्नाः (अमल,चीज़) वो जो, अगरचे अल्लाह तआला के ज़रिए इबादत के तौर पर हुकूम नहीं दिया गया, लेकिन नबी अलैहि स-सलाम के ज़रिए किया गया और पसंद किया गया (अगर किया जाए तो सवाब है, लेकिन अगर छोड़ा जाए तो गुनाहा नहीं, फिर भी अगर लगातार इसे छोड़े तो गुनाह है और नापसंद करें तो कुफ्र है; मजमूई तौर पर सारी सुन्नतें हदीस-शरीफ़; (अकेले) फिकह, इस्लाम।; फर्ज़ (किताब या कुरआन अका-करीम के साथ)

सूरहः कुरआन अल-करीम का एक सबक।

ताबा अत-ताबिईनः वो आलिम जिन्होने न नवी अलैहि स-सलाम और न ही सहावी को देखा लेकिन (उसमें से एक) ताबिईन को देखा; जो उनके जानशीन हुए।

तआः वो अमाल जो अल्लाह तआला के ज़रिए पसंद किए जाते हैं। उन्हे किया जा सकता है बग़ैर जाने हुए के ये उसके ज़रिए पसंद किया जाता है।

ताबिईन (अल ए-आज़म) उनमें से अकसर वो मुसलमान जिन्होने नबी अलैहि स-सलाम को नहीं देखा लेकिन सहावतुल इकारम में से एक को देखा; उनके जानशीन हुए।

तादिल अल-अरकानः थोड़ी देर के लिए अपने जिस्म को बेहरकत रखना सलात के मुखतलिफ़ अमाल के बीच और दरमियान में पुरसुकून होने के बाद (सआदत-ए-अबदिया, सबक 14-16 देखिए)।

तफ़सीरः किताब, साईस का इल्म अत-तफ़सीर, कुरआन अल-करीम की तशरीह।

तकलीदः मानना , पेरवी करना, चारो मसालिक में से एक का रूकन होना।

तकवाः हराम से अल्लाह तआला का डर; अज़ीम अमाल करना (वरा और ज़ुहद को देखिए)।

तसववुफ़ः इल्मे फिकह हासिल करने के बाद रुहानी इल्म का रखना और नबी अलैहि स-सलाम के अदाब पे अमल करना जो ईमान को मज़बुत बनाते हैं। और मारीफा के लिये फिकह पे अमाल असान बनाते हैं। इल्म अत तसववुफ।

तवाफ़ः हज के दौरान काबा त अल-मोअज़्ज़माा के चारो ओर चलकर इबादत।

तवक्कुलः खास तौर से अल्लाह तआला से हर चीज़ की उम्मीद करना, भरोसा होना अल्लाह की ओर से काम करने या सबब को पकडने के बाद वजह को असर अदाज़ होने की उम्मीद करना-जिससे पहले तवक्कुल ग़ैर मुंज़म हैं।

तौहीदः अल्लाह तआला के एक होने मे, वहदानियत में (यकीन रखना)।

ताज़ीरः एक तरह का जुर्माना जैसे के इस्लाम में बतााया गया; अज़ाब।

सवाबः अल्लाह तआला की तरफ़ से सवाब (की इकाई) का वादा किया गया जो उसे पसंद हैं वो करने और कहने का बदला आखिरत में दिया जाएगा।

उलेमाः (आलिम की जमा)।

उम्माः कौम, एक नबी को मानने वाली बिरादरी; उम्मत-अल-मुहम्मदियाः मुसलमान उम्मत।

उसूलः इस्लामी साईंस के तरीका ए-कार या बनियादी उसूल; बनियादी इस्लामी उलूम के तरीके, इल्म अल-उसूल; ईमान, कलाम।

वाजिबः (अमल या चीज़) नबी अलैहि स-सलाम के ज़रिए कभी नहीं छोड़ी गई, इसलिए लाज़मी तौर पर फर्ज़ की तरह ज़रूरी और छोड़ा न जाए।)

वलीः (जमा. औलिया) एक शख्स जो अल्लाह तआला के ज़रिए प्यार किया गया और जिसकी हिफ़ाज़त की गई; एक सालिह जो अपनी नफस को भी सही करता है।

वराः (हराम नज़रअंदाज़ करने के बाद) शकूक वाली चीज़ों से गैर हाज़िर होना (मुसतहविहात)।

ज़हिदः एक जुहद का आदमी; परहेज़गार।

ज़कातः (सलाना तौर पर देने का फर्ज़ काम)। खास किस्म के लोगो को खास किस्म की मिलकियत की कुछ मिकदार देना, जिसके ज़रिए बची हुई मिलकियत पाक और बरकत वाली हो जाती है और मुसलमान जो इसे देते हैं वो अपने आपको कंजूस (कहलवाने) से बचा लेते हैं।

ज़ुहदः अपने दिल को दुनियावी चीज़ों में न लगाना; परहेज़ (यहाँ तक कि) मुबाह से भी।